रचना-मयङ्क

लेखक

पाठक विद्यालंकार, विशारद

प्रकाशक
सरस्वती-भण्डार,
पटना

१९८५ [मूल्य १)

प्रकाशक
अखौरी सच्चिदानन्द सिंह अध्यक्ष
सरस्वती-भण्डार
चौहट्टा, पटना



मुद्रक
के० पी० दर
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

भूमिका

यह हिन्दी भाषा के विकास का युग है। आज के पचीस वर्ष पहले इस भाषा की, पद्य अथवा गद्य की, रचना-शैली से आज की रचना-शैली बिल्कुल भिन्न है। यही क्यों, दस वर्ष पहले तक जिस शैली का उपयोग किया जाता था, आज उसमें भी महान् परिवर्तन हुआ दृष्टिगोचर होता है। ज्यों-ज्यों नये-नये विचार, नये-नये ढङ्ग तथा नये-नये भावों का विकास होता जाता है त्यों-त्यों उन्हें भाषा-द्वारा अभिव्यक्त करने के लिए नये-नये शब्द, नये-नये वाक्य और नयी-नयी शैलियों की भी आवश्यकता पड़ती जाती है। यही कारण है हिन्दी में दिन-दिन नये-नये शब्द गढ़े जा रहे हैं और उन्हें उपयोग में लाने के लिए नवीन रचना-शैलियों का भी प्रादुर्भाव हो रहा है। इन दिनों नये विचार के ऐसे अनेक स्कूल देखे जाते हैं जिनकी लेखन-शैली भी भिन्न-भिन्न है। ऐसी हालत में, भाषा की इस वयः सन्धि अवस्था में, घड़ी-घड़ी रूप-परिवर्तन करने के इस विकासमय युग में, इस भाषा को व्याकरण अथवा रचना-विधि के नियमों से जकड़ रखना असम्भव है और जकड़ रखने में भी हानि छोड़ लाभ नहीं है। तब भला इन दिनों हिन्दी के सर्वाङ्गपूर्ण, नियम-बद्ध, व्याकरणों अथवा रचना सम्बंधी पुस्तकों का लिखना कैसे सम्भव हो सकता है? हाँ, ज्यों-ज्यों भाषा में परिवर्तन होता जाय त्यों-त्यों व्याकरण और रचना की पुस्तकों में फेर बदल करते रहना उचित है। यही सोचकर सुप्रसिद्ध हिन्दी-विद्वानों की रचना-सम्बंधी दर्जनों पुस्तकों के विद्यमान रहते हुए भी मैंने 'रचना-

मयंक' नाम की एक रचनासम्बंधी छोटी सी पुस्तिका लिखने की अनधिकार चेष्टा की है; मैं यह दावा नहीं करता कि प्रचलित सभी रचनासम्बन्धी पुस्तकों से मेरी यह क्षुद्र रचना आगे बढ़ जायगी। पर हाँ, इतना कहने का ज़रूर साहस करता हूँ कि भाषा के परिवर्तन की गति की तीव्रता देखकर मेरा इस पुस्तक का लिखना नितान्त धृष्टता नहीं कही जा सकती।

यह पुस्तक, प्रचलित रचना-शैलियों को लक्ष्य में रखकर ही लिखी गयी है। अतः अन्य पुस्तकों में इस सम्बन्ध में दिये गये नियमों से, इस पुस्तक में दिये गये नियमों में, पाठकों को बहुत कुछ नवीनता मिलेगी। लिखने का ढंग भी नया ही प्रतीत होगा। कुछ नये तथा सर्वप्रिय सिद्धान्तों के समावेश करने का भी प्रयत्न किया गया है। जैसे—कारकों की विभक्तियाँ शब्दों के साथ मिलाकर लिखी जायँ या अलग—इस सम्बंध में युक्तियुक्त विवेचन किया गया है। हिन्दी की उत्पत्ति के सम्बंध में नये विचार के पाश्चात्य विद्वानों के मत की पुष्टि की गयी है। कदाचित् कुछ विद्वानों को यह मत रुचिकर न हो। इसी प्रकार बहुत जगह नये-नये शब्दों, पदों, वाक्यों तथा मुहाविरों के प्रयोग की विधि पर विचार करने की कोशिश भी हुई है। मैं नहीं कह सकता कि इन सब बातों में मुझे कहाँ तक सफलता मिली है। इसके निर्णय करने का भार मैं अपने चतुर पाठकों पर ही सौंपता हूँ। अस्तु।

इस पुस्तक से रचना सीखने की अभिलाषा रखनेवाले विद्यार्थियों का उपकार हो, इस बात को ध्यान में रखकर पुस्तक को यथासम्भव सीधे तौर पर लिखने की चेष्टा की गयी है, जिससे विषय को समझने में कठिनाई का सामना न करना पड़े। हर विषय को यथाविधि सरल भाषा-द्वारा समझाने का प्रयत्न किया गया है। अगर इस तुच्छ रचना से विद्यार्थियों को कुछ भी लाभ हो सका तो मैं अपने प्रयास को सर्वथा सफल समझूँगा।

मुझे पुस्तक के सम्बंध में एक और निवेदन करना आवश्यक है। मैंने पुस्तक में कारकों की विभक्तियों को शब्दों के साथ मिलाकर और

अलग लिखने के सम्बंध में, दोनों स्कूलों के मतों का दिग्दर्शन करा दिया है परन्तु मिलाकर लिखने के सम्बंध में ही अधिक जोर दिया है। मेरा व्यक्तिगत मत भी यही है; परन्तु प्रूफ संशोधन में अपनी असावधानी से पुस्तक में मैं अपने इस मत का स्वयं प्रतिपादन न कर सका। इसके लिए मुझे खेद है। आशा है मेरे विज्ञ पाठक मुझे इसके लिए क्षमा करेंगे और जहाँ-जहाँ विभक्तियाँ शब्दों से अलग हों उन्हें मिला हुआ ही जानेंगे।

पुस्तक लिखने में मुझे, हिन्दी-व्याकरण, व्याकरण चन्द्रोदय, रचना-चन्द्रिका, रचना-विचार, रचना-शिक्षा (बंगला), रचना-प्रबोध, निबंधनिधि, तथा अंगरेजी की कुछ व्याकरण और रचना सम्बंधी पुस्तकों से सहायता लेनी पड़ी है, अतएव इन पुस्तकों के लेखकों को धन्यावाद देना भी मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। पुस्तक के प्रथम खंड को लिखने में मैंने हिन्दी भाषा की उत्पत्ति, हिन्दी, भाषाविज्ञान तथा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कुछ पूज्य सभापतियों के भाषणों से विशेष सहायता ली है। इनके रचयिताओं के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करता हूँ। अन्तिम खंड को लिखने में सरस्वती, चाँद, मर्यादा, शिक्षा तथा हिन्दी की अन्य पत्र-पत्रिकाओं की पुरानी फाइलों से मैंने पूरी मदद ली है। इनके सम्पादकों का मैं आभारी हूँ। इनके अतिरिक्त श्री जयश्री पाठक, श्री शशिधर पाठक, बा० गगनदेव सिंह, श्री देवश्री पाठक आदि व्यक्तियों को भी, जिन्होंने लेख लिखने, पुस्तक की कापी करने तथा अन्य कार्य्यों में मेरी सहायता की है, मैं हृदय से बधाई देता हूँ। अंत में सरस्वती-भंडार पटना के मालिक श्रीयुत अलौरी सच्चिदानंद सिंह को भी धन्यवाद दिये बिना मैं नहीं रह सकता जिन्होंने मेरी क्षुद्र रचना को प्रकाशित कर अपनी उदारता का पूर्ण-परिचय दिया है।

भारती-भवन, रतैठा पो० हवेली खड़्गपुर (मुंगेर) श्रावणी-पूर्णिमा, १९८५	निवेदक सुरेश्वर पाठक 'विद्यालंकार' 'विशारद'



विषय-सूची

प्रथम खण्ड

द्वितीय खण्ड

तृतीय खण्ड

चतुर्थ खण्ड

रचना-मयङ्क

प्रथम खण्ड

प्रथम परिच्छेद

भाषा-विचार

१—भाषा

जिसके द्वारा मनुष्य अपने मनोगत भाव दूसरों पर स्पष्ट रूप से प्रगट कर सकता है और दूसरों के मनोगत भावों को समझ लेता है उसे भाषा कहते हैं। मनुष्य के हृदय में जो भाव या विचार उदय होते हैं उन्हें कार्य-रूप में परिणत करने के लिए दूसरों की सहायता या सम्मति की आवश्यकता पड़ती है और इसीलिए वे भाव या विचार दूसरों के सामने प्रगट करने पड़ते हैं जो भाषा के ही द्वारा प्रगट हो सकते हैं। संसार का सारा व्यापार, भाषा के ही सहारे चलता है, भाषा सांसारिक व्यवहार की जड़ है। यही समाज विशेष को एक सूत्र में बाँधने का बन्धन स्वरूप है।

कोई भाषा सब दिन एक रूप में नहीं रहती, क्योंकि यह

अन्य सांसारिक चीज़ों की नाईं परिवर्तनशील है। जिस भाषा का परिवर्तन या विकास रुक जाता है। वह जीवित भाषा नहीं कहला सकती। भाषा-विज्ञान-विशारदों का कथन है कि कोई भी प्रचलित भाषा एक हज़ार वर्ष से अधिक समय तक नहीं रह सकती है। आज जो हिन्दी हम लोग व्यवहार में लाते हैं वह इसी रूप में पहले नहीं थी। जब से इसका सूत्र-पात माना गया है अर्थात् चन्दवरदाई के समय से ही आज तक न जाने इसमें कितने परिवर्तन हुए और कितने परिवर्तन भविष्य में होने वाले हैं। पर हाँ, भाषा में परिवर्तन इस मन्दगति से होता है कि हमको कुछ पता नहीं चलता और अन्त में इन परिवर्तनों के परिणाम-स्वरूप नई-नई भाषाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। भाषा के परिवर्तन में स्थान, जल-वायु और सभ्यता का भी बड़ा प्रभाव पड़ता है। एक स्थान में जो भाषा बोली जाती है वही भाषा दूसरे स्थान में उसी रूप में नहीं बोली जा सकती है। जल-वायु के परिवर्तन से एक ही भाषा के शब्दों के उच्चारण में भेद पड़ जाता है। इसी प्रकार सभ्यता के विकास के साथ-साथ भाषा का भी विकास होने लगता है। क्योंकि सभ्यता की उन्नति से नये-नये विचार उत्पन्न होते हैं और नये-नये विचारों से नये-नये शब्द बनकर शब्द-भाण्डार की वृद्धि करते हैं। अस्तु।

२—भाषाओं का आदि-स्रोत

भाषा-विज्ञान के विशेषज्ञों का अनुमान है कि सृष्टि के आदि में सब मनुष्यों के पूर्वज एक ही थे, एक ही स्थान पर रहते थे और एक ही भाषा बोलते थे। यदि संसार के भिन्न-भिन्न प्राचीन और अर्वाचीन भाषाओं के शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन किया

जाय तो उनमें विचित्र समानता दृष्टिगोचर होती है। जब एक स्थान पर निर्वाह न होने के कारण लोग अपने आदिम-स्थान को छोड़कर जहाँ-तहाँ चले गये तब उनकी भाषाएं भी स्थान और जल-वायु के कारण भिन्न-भिन्न रूप में हो गयीं और भिन्न-भिन्न नामों से प्रचलित हुईं। यह बात अबतक विवाद-ग्रस्त है कि मनुष्यों का आदिम-स्थान कहाँ था और उनकी आदिम-भाषा क्या थी। जो हो यहाँ तक तो अबतक निर्णय हो सका है कि चाहे मनुष्यों का आदिम-स्थान कहीं भी हो वे एक ही भाषा का व्यवहार करते थे और उसी भाषा से संसार की सब भाषाएं निकली हैं जो तीन मुख्य भागों में बाँटी जा सकती हैं।

(१) आर्य-भाषाएं—जिस भाग में आदिम-आर्यों की बोली जानेवाली भाषा से निकली हुई भाषाएं हैं। अर्थात् वैदिक संस्कृत, संस्कृत, प्राकृत या भारतवर्ष में प्रचलित अन्य आर्य-भाषाएं और अंगरेज़ी, फ़ारसी, ग्रीक, लैटिन आदि भाषाएं।

(२) शामी-भाषाएं—इस भाग में सेमेटिक या शामी-जाति की बोली जानेवाली भाषाएं हैं। अर्थात् इब्रानी, अरबी, और हब्शी भाषाएं।

(३) तूरानी-भाषाएं—इस भाग में मंगोल-जाति की बोली जानेवाली भाषाएं हैं। अर्थात्—मुगली, चीनी, जापानी, तुर्की आदि भाषाएं।

३—आर्य-भाषाएं

हिन्दी की उत्पत्ति के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमें उपर्युक्त तीनों श्रेणी की भाषाओं में से आर्य-भाषाओं के विषय में जानने की आवश्यकता है, इसलिए केवल इसी श्रेणी के सम्बन्ध में यहाँ थोड़ा-बहुत प्रकाश डालने का यत्न किया जाता है।

अन्य सांसारिक चीज़ों की नाईं परिवर्तनशील है। जिस भाषा का परिवर्तन या विकास रुक जाता है। वह जीवित भाषा नहीं कहला सकती। भाषा-विज्ञान-विशारदों का कथन है कि कोई भी प्रचलित भाषा एक हज़ार वर्ष से अधिक समय तक नहीं रह सकती है। आज जो हिन्दी हम लोग व्यवहार में लाते हैं वह इसी रूप में पहले नहीं थी। जब से इसका सूत्र-पात माना गया है अर्थात् चन्दबरदाई के समय से ही आज तक न जाने इसमें कितने परिवर्तन हुए और कितने परिवर्तन भविष्य में होने वाले हैं। पर हाँ, भाषा में परिवर्तन इस मन्दगति से होता है कि हमको कुछ पता नहीं चलता और अन्त में इन परिवर्तनों के परिणाम-स्वरूप नई-नई भाषाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। भाषा के परिवर्तन में स्थान, जल-वायु और सभ्यता का भी बड़ा प्रभाव पड़ता है। एक स्थान में जो भाषा बोली जाती है वही भाषा दूसरे स्थान में उसी रूप में नहीं बोली जा सकती है। जल-वायु के परिवर्तन से एक ही भाषा के शब्दों के उच्चारण में भेद पड़ जाता है। इसी प्रकार सभ्यता के विकास के साथ-साथ भाषा का भी विकास होने लगता है। क्योंकि सभ्यता की उन्नति से नये-नये विचार उत्पन्न होते हैं और नये-नये विचारों से नये-नये शब्द बनकर शब्द-भाण्डार की वृद्धि करते हैं। अस्तु।

२—भाषाओं का आदि-स्रोत

भाषा-विज्ञान के विशेषज्ञों का अनुमान है कि सृष्टि के आदि में सब मनुष्यों के पूर्वज एक ही थे, एक ही स्थान पर रहते थे और एक ही भाषा बोलते थे। यदि संसार के भिन्न-भिन्न प्राचीन और अर्वाचीन भाषाओं के शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन किया

जाय तो उनमें विचित्र समानता दृष्टिगोचर होती है। जब एक स्थान पर निर्वाह न होने के कारण लोग अपने आदिम-स्थान को छोड़कर जहाँ-तहाँ चले गये तब उनकी भाषाएं भी स्थान और जल-वायु के कारण भिन्न-भिन्न रूप में हो गयीं और भिन्न-भिन्न नामों से प्रचलित हुई। यह बात अबतक विवाद-ग्रस्त है कि मनुष्यों का आदिम-स्थान कहाँ था और उनकी आदिम-भाषा क्या थी। जो हो यहाँ तक तो अबतक निर्णय हो सका है कि चाहे मनुष्यों का आदिम-स्थान कहीं भी हो वे एक ही भाषा का व्यवहार करते थे और उसी भाषा से संसार की सब भाषाएं निकली हैं जो तीन मुख्य भागों में बाँटी जा सकती हैं।

(१) आर्य-भाषाएं—जिस भाग में आदिम-आर्यों की बोली जानेवाली भाषा से निकली हुई भाषाएं हैं। अर्थात् वैदिक संस्कृत, संस्कृत, प्राकृत या भारतवर्ष में प्रचलित अन्य आर्य-भाषाएं और अंगरेज़ी, फ़ारसी, ग्रीक, लैटिन आदि भाषाएं।

(२) शामी-भाषाएं—इस भाग में सेमेटिक या शामी-जाति की बोली जानेवाली भाषाएं हैं। अर्थात् इब्रानी, अरबी, और हब्शो भाषाएं।

(३) तूरानी-भाषाएं—इस भाग में मंगोल-जाति की बोली जानेवाली भाषाएं हैं। अर्थात्—मुगली, चीनी, जापानी, तुर्की आदि भाषाएं।

३—आर्य-भाषाएं

हिन्दी की उत्पत्ति के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमें उपर्युक्त तीनों श्रेणी की भाषाओं में से आर्य-भाषाओं के विषय में जानने की आवश्यकता है, इसलिए केवल इसी श्रेणी के सम्बन्ध में यहाँ थोड़ा-बहुत प्रकाश डालने का यत्न किया जाता है।

संसार की अधिकांश जातियाँ तीन श्रेणियों में विभक्त हो सकती हैं—आर्य, सैमेटिक और मंगोल। इन तीनों में से आर्यों की बोली जानेवाली भाषाएं आर्य-भाषाएं हैं, आर्यों का आदिम-स्थान कहाँ था इस विषय में इतिहासज्ञों का अबतक एक मत नहीं हुआ है। कोई कहते हैं मध्य एशिया के आसपास ये लोग रहते थे, कोई कहते हैं उत्तरी-ध्रुव के निकट इन लोगों का आदिम-स्थान था, कोई वहोमिया के आसपास इन लोगों का रहना बताते हैं और कोई भारतवर्ष को ही इन लोगों का आदिम-स्थान होना मानते हैं। जो हो, कहीं भी इन लोगों का आदिम-स्थान हो पर इतना तो ज़रूर है कि ये लोग जहाँ-कहीं रहते थे एक ही भषा बोलते थे। कालान्तर में ये लोग संसार के भिन्न-भिन्न भागों में बस गये। जो लोग योरोप में बसे उनकी भाषा का रूपान्तर होकर ग्रीक, लैटिन, अंगरेज़ी, जर्मनी आदि कई भाषाएं हो गयीं, जो लोग फ़ारस में बस गये उनकी भाषा फ़ारसी हुई और जो लोग भारत में आये उनकी भाषाएं, प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी आदि कहलायीं। यही कारण है कि आज भी संसार में प्रचलित हज़ारों ऐसे शब्द हैं जो प्रायः सभी आर्य-भाषाओं से थोड़ा बहुत अंतर के साथ समता रखते हैं। यहाँ पर कुछ ऐसे शब्दों की तालिका दी जाती है—

संस्कृत	मीडी	फारसी	ग्रीक	लैटिन	अंगरेज़ी	हिन्दी।
पितृ	पतर	पिदर	पाटेर	पेटर	फ़ादर	पिता।
मातृ	मतर	मादर	माटेर	मेटर	मदर	माता।
भ्रातृ	ब्रतर	ब्रादर	फ्राटेर	फ्रेटर	ब्रदर	भाई।
एक	यक	यक	हैन	अन	वन	एक।
तृ	थृ	×	ट्र	ट्र	थ्री	तीन।

नाम	नाम	नाम	ओनोमा नामेन नेम	नाम।

ऊपर की तालिका को देखने से पता चलता है कि निकटवर्त्ती देशों की भाषाओं में दूरवर्त्ती देशों की भाषाओं की अपेक्षा अधिक समता है। जैसे, भारतवर्ष के निकट इरान है इसलिए भारतवर्ष की भाषाओं और इरानी भाषाओं (मीडी, फ़ारसी) में अधिक समता पाई जाती है। इरानी भाषाओं और पुरानी संस्कृत या प्राकृत से तो इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि अगर आप इरानियों के प्राचीन धर्म-ग्रन्थ ज़िन्दा-आवेस्ता (जो मीडी या पुरानी फ़ारसी में लिखी गयी है) के कुछ छन्दों को उठाकर पढ़ें तो यही जान पड़ेगा कि हम वेदों की ऋचाओं के कुछ विचित्र रूप का पाठ कर रहे हैं। उदाहरण के लिये हम आवेस्ता का एक छंद यहाँ उद्धृत करते हैं—

तम् अमवंतम् यजतम्
शूरम् धेमसु शविष्ठम्
मित्रम् यजाइ होमाभ्यः।

अर्थात्—"बली शूरवीर मित्रदेव की होम से पूजा करता हूँ, जो सब जन्तुओं पर दया करता है।"

ऊपर के छन्दों के शब्द संस्कृत के शब्द से बहुत मिलते जुलते हैं। यही क्यों व्याकरण में भी बहुत कुछ समता है।

द्वितीय परिच्छेद

हिन्दी-भाषा की उत्पत्ति

यह दिखाया जा चुका है कि हमारी हिन्दी भी आर्य-भाषाओं में से एक है। अब दिखाना यह है कि किस प्राचीन आर्य-भाषा से इसकी उत्पत्ति हुई है।

हिन्दी की उत्पत्ति के विषय में दो मत इन दिनों प्रचलित हैं। पहला मत यह है कि संस्कृत-भाषा ही भारत के आर्यों की आदि-भाषा थी और यही भ्रष्ट होकर प्राकृत बनी और प्राकृत के अपभ्रंश से धीरे-धीरे आजकल की भाषाएँ निकलीं। दूसरा मत यह है कि संस्कृत किसी भी समय में साधारण बोलचाल की भाषा नहीं रही है और अगर रही भी होगी तो केवल शिक्षित समुदाय की। शुरू से ही साधारण लोगों की भाषा इससे भिन्न थी। इस कारण प्राकृत भाषाएँ, जिनसे हिन्दी निकली है, संस्कृत से नहीं निकली हैं। यही नहीं बल्कि संस्कृत ही प्राकृत से निकली है। अर्थात् प्राचीन भाषा, जिसे मूल प्राकृत भी कहते हैं, समय के चक्र में पड़कर धीरे-धीरे संस्कृत और प्राकृत बन गयी और इसी प्राकृत का जिसे पाली भी कहते हैं, परिवर्तित रूप हिन्दी आदि भारत की आधुनिक भाषाएँ हैं।

हिन्दी-भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में ऊपर दिये गये दोनों

विचारों में से दूसरा विचार हमें अधिक उपयुक्त मालूम पड़ता है और यही विचार अधिक युक्तिसंगत और मान्य है। पहले विचार के अनुसार अगर हम संस्कृत को पाली आदि प्राकृतों और हिन्दी की जननी मान लें तो पहले संस्कृत भाषा की परिभाषा की ओर दृष्टिपात करना पड़ेगा। पहले मत के मानने वाले संस्कृत भाषा का अर्थ वह भाषा लेते हैं जिसमें, श्रीयुत पुरुषोत्तमदास टंडन के मतानुसार हमारी प्राचीन सभ्यता का उत्तुङ्ग उत्कर्ष ढले हुए शब्दों में दक्ष चितेरों की कूँची से चित्रित है, और जिसने सैकड़ों वर्ष के संस्कार के बाद पतंजलि और कात्यायन के समय में अपना रूप निश्चय किया। संस्कृत की यह परिभाषा अधिक उपयुक्त भी है क्योंकि संस्कृत शब्द का अर्थ भी 'संस्कार किया हुआ' है। कुछ पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि संस्कृत एक प्रकार की अप्राकृतिक भाषा है जिसका यज्ञ, पूजन आदि काम के लिए ब्राह्मणों ने निर्माण किया था, और वह कभी बोलचाल की भाषा नहीं हुई। केवल गौरव के लिए शिक्षित-समुदाय ने इस भाषा में ग्रन्थ लिखना शुरू किया। संस्कृत की यह परिभाषा मान्य नहीं हो सकती। श्रीयुत रामकृष्ण गोपाल भंडारकर ने उक्त परिभाषा का खंडन भलीभाँति कर दिया है। जो हो, अगर दोनों परिभाषाओं में किसी को हम मान लें तो भी संस्कृत किसी अन्य भाषा की जननी नहीं हो सकती। विचार करने की बात है कि जब बोलचाल की भाषा का संस्कार कर संस्कृत भाषा बनी तब वही संस्कृत जनता की बोलचाल की भाषा हो गयी, यह कब सम्भव हो सकता है। अगर सम्भव मान लिया जाय तो प्रचलित भाषा का संस्कार होते ही वह भाषा कहाँ चली गयी ? क्या नयी भाषा में ही मिल गयी ? नहीं संस्कार होकर

द्वितीय परिच्छेद

हिन्दी-भाषा की उत्पत्ति

यह दिखाया जा चुका है कि हमारी हिन्दी भी आर्य-भाषाओं में से एक है। अब दिखाना यह है कि किस प्राचीन आर्य-भाषा से इसकी उत्पत्ति हुई है।

हिन्दी की उत्पत्ति के विषय में दो मत इन दिनों प्रचलित हैं। पहला मत यह है कि संस्कृत-भाषा ही भारत के आर्यों की आदि-भाषा थी और यही भ्रष्ट होकर प्राकृत बनी और प्राकृत के अपभ्रंश से धीरे-धीरे आजकल की भाषाएँ निकलीं। दूसरा मत यह है कि संस्कृत किसी भी समय में साधारण बोलचाल की भाषा नहीं रही है और अगर रही भी होगी तो केवल शिक्षित समुदाय की। शुरू से ही साधारण लोगों की भाषा इससे भिन्न थी। इस कारण प्राकृत भाषाएँ, जिनसे हिन्दी निकली है, संस्कृत से नहीं निकली हैं। यही नहीं बल्कि संस्कृत ही प्राकृत से निकली है। अर्थात् प्राचीन भाषा, जिसे मूल प्राकृत भी कहते हैं, समय के चक्र में पड़कर धीरे-धीरे संस्कृत और प्राकृत बन गयी और इसी प्राकृत का जिसे पाली भी कहते हैं, परिवर्तित रूप हिन्दी आदि भारत की आधुनिक भाषाएँ हैं।

हिन्दी-भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में ऊपर दिये गये दोनों

ब्रजमंडल में व्यवहृत हुई। जिस समय ब्रजभाषा का सूत्र-पात हुआ उस समय उत्तर-भारत में वैष्णवों और कृष्ण के भक्तों का विशेष प्रभाव रहा और यही कारण है कि अन्य उपविभागों की अपेक्षा शौरसेनी से निकली हुई ब्रजभाषा-हिन्दी का सबसे अधिक विकास हुआ। ब्रजमंडल भगवान कृष्ण का लीलाक्षेत्र माना जाता है। इसलिए कृष्ण के उपासक कवियों के प्रभाव से ब्रजमंडल में और उसके आसपास ब्रजभाषा का पूर्ण विकास तो हुआ ही, इसके अतिरिक्त बिहार, अवध, बुन्देलखंड, राजपूताने आदि में भी इसका खूब प्रचार हुआ। यहाँ तक कहा जाता है कि दूर-दूर स्थानों से कृष्ण के अनन्य उपासक ब्रजभूमि में पदार्पण कर वहीं कृष्ण-गुणगान में तल्लीन हो गये। फलस्वरूप १२ वीं शताब्दी से लेकर १८ वीं शताब्दी तक ब्रजभाषा ही सारे उत्तर-भारत की पद्य-भाषा रही। इस विस्तृत अवधि में सूरदास, केशव, अष्टछाप के कवि, बिहारी, रहीम, भूषण, मतिराम आदि सैकड़ों कवि हो गये जिनके ग्रन्थ हमें उपलब्ध हैं, उन्नीसवीं शताब्दी तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के कालतक भी ब्रजभाषा में ही कवितायें लिखी गयी हैं। भारतेन्दु के कालतक देव, सेनापति, पजनेस, पद्माकर, दूलह, ठाकुर आदि बहुत से ब्रजभाषा के कवि हो गये हैं जिनकी कविताएँ साहित्यिक दृष्टि से बड़ी ही मार्मिक हैं। जिस समय ब्रजमंडल में ब्रजभाषा की तूती बोल रही थी उसी समय अर्थात् १३ वीं और सोलहवीं शताब्दी के मध्य शौरसेनी और मागधी के सम्मिश्रण से बनी हुई अवधी, जिसे बैसवाड़ी भी कहते हैं, भाषा का भी विकास हुआ परन्तु कालान्तर में ब्रजभाषा के दबाव में पड़कर उसका पूर्ण-विकास रुक सा गया। मलिक मुहम्मद जायसी का

हिन्दी-भाषा का विकास

श्रद्धेय मिश्रबन्धुओं के कथनानुसार हिन्दी उस भाषा का नाम है, जो विशेषतया युक्तप्रान्त, विहार, बुन्देलखंड, बघेलखंड, छत्तीसगढ़ आदि में बोली जाती है और सामान्यतया बंगाल को छोड़ समस्त उत्तरी और मध्यभारत की मातृ-भाषा है। मोटे प्रकार से इसे भाषा भी कहते हैं।

पिछले प्रकरण में यह बताया गया है कि मूल प्राकृत से पाली आदि प्राकृत भाषाएं निकलीं जिनका विकास होता गया और समय पाकर मागधी शौरसेनी, महाराष्ट्री आदि उसके कई विभाग हो गये। इन अन्तिम भाषाओं को तृतीय प्राकृत कह सकते हैं क्योंकि ये प्राकृत भाषाओं के तीसरे रूप हैं। इन्हीं भाषाओं के रुपान्तर से हिन्दी-भाषा का सूत्र-पात हुआ। इन भाषाओं का समय मोटे प्रकार से ८ वीं शताब्दी से लेकर १२ वीं शताब्दी तक माना गया है। इसी समय हिन्दी-भाषा का सूत्र-पात हुआ। हिन्दी-पद्य का आदि-ग्रन्थ चन्दवरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' की रचना इसी काल में हुई। रासो की भाषा ही इसका प्रमाण है, रासो के रचना-काल में ही बुन्देलखंड में जगनिक कवि ने 'आल्हा' ग्रन्थ रचा जिसका मूल ग्रन्थ अप्राप्य है। चन्द के बाद से ही हिन्दी के पद्य-भाग का विकास प्रारम्भ होता है। १२ वीं शताब्दी से लेकर १६ वीं शताब्दी तक इस भाषा के बहुत से पद्य-ग्रन्थ रचे गये। अर्द्ध-मागधी के रुपान्तर से पूर्वी-हिन्दी का विकास हुआ जो बिहार में बोली जाने लगी। कविवर विद्यापति इस भाग के श्रेष्ठ कवि हो गये हैं। शौरसेनी के रुपान्तर से व्रजभाषा का अंकुर जमा जो

ब्रजमंडल में व्यवहृत हुई। जिस समय ब्रजभाषा का सूत्र-पात हुआ उस समय उत्तर-भारत में वैष्णवों और कृष्ण के भक्तों का विशेष प्रभाव रहा और यही कारण है कि अन्य उपविभागों की अपेक्षा शौरसेनी से निकली हुई ब्रजभाषा-हिन्दी का सबसे अधिक विकास हुआ। ब्रजमंडल भगवान कृष्ण का लीलाक्षेत्र माना जाता है। इसलिए कृष्ण के उपासक कवियों के प्रभाव से ब्रजमंडल में और उसके आसपास ब्रजभाषा का पूर्ण विकास तो हुआ ही, इसके अतिरिक्त बिहार, अवध, बुन्देलखंड, राजपूताने आदि में भी इसका खूब प्रचार हुआ। यहाँ तक कहा जाता है कि दूर-दूर स्थानों से कृष्ण के अनन्य उपासक ब्रजभूमि में पदार्पण कर वहीं कृष्ण-गुणगान में तल्लीन हो गये। फलस्वरूप १२ वीं शताब्दी से लेकर १८ वीं शताब्दी तक ब्रजभाषा ही सारे उत्तर-भारत की पद्य-भाषा रही। इस विस्तृत अवधि में सूरदास, केशव, अष्टछाप के कवि, बिहारी, रहीम, भूषण, मतिराम आदि सैकड़ों कवि हो गये जिनके ग्रन्थ हमें उपलब्ध हैं, उन्नीसवीं शताब्दी तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के कालतक भी ब्रजभाषा में ही कवितायें लिखी गयी हैं। भारतेन्दु के कालतक देव, सेनापति, पजनेस, पद्माकर, दूलह, ठाकुर आदि बहुत से ब्रजभाषा के कवि हो गये हैं जिनकी कविताएँ साहित्यिक दृष्टि से बड़ी ही मार्मिक हैं। जिस समय ब्रजमंडल में ब्रजभाषा की तूती बोल रही थी उसी समय अर्थात् १३ वीं और सोलहवीं शताब्दी के मध्य शौरसेनी और मागधी के सम्मिश्रण से बनी हुई अवधी, जिसे बैसवाड़ी भी कहते हैं, भाषा का भी विकास हुआ परन्तु कालान्तर में ब्रजभाषा के दबाव में पड़कर उसका पूर्ण-विकास रुक सा गया। मलिक मुहम्मद जायसी का

'पद्मावत' और महाकवि तुलसीदास के रामायण आदि ग्रन्थ अवधी-भाषा के उत्कृष्ट नमूने हैं। भारतेन्दु के काल से ही व्रजभाषा का विकास भी मंद पड़ता गया और यद्यपि वर्तमान समय में कविवर जगन्नाथदास रत्नाकर, श्रीयुत श्रीधर पाठक आदि कवि व्रजभाषा में कविता करते हैं परन्तु अब तो खड़ी-बोली के पद्यों का प्रचार अधिक बढ़ रहा है। इस खड़ी-बोली के पद्य में भी अब युगान्तर पैदा हो रहा है। बंगला तथा अन्य भाषा के प्रभाव से खड़ी-बोली में रहस्य-वाद और छाया-वाद की कविता करने की ओर नवयुवक कवि-समाज की रुचि बढ़ रही है। मालूम नहीं इसका भविष्य क्या होगा—आजकल रहस्य-वाद और छाया-वाद की कविता का युग है।

यह तो हुई हिन्दी-पद्य-विभाग की बात। गद्य-विभाग के सम्बंध में यह कहा जा सकता है कि १३ वीं शताब्दी के पूर्व इसका कोई पता नहीं था। मारवाड़ के कुछ सनदों में वहाँ की भाषा के नमूने मिलते हैं। १५ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में बाबा गोरखनाथ का व्रजभाषा में लिखा गद्य-ग्रन्थ मिलता है। १७ वीं शताब्दी में महात्मा नाभादास, गंग भाट आदि ने गद्य के कुछ ग्रन्थ लिखे हैं। १८ वीं शताब्दी में भी देव, दास, ललित-किशोरी आदि ने गद्य-रचना की। सारांश यह है कि १८ वीं शताब्दी तक हिन्दी या व्रजभाषा में गद्य लिखने की चाल इतनी कम थी कि उसका विकास भी नहीं हुआ। तभी तो उस समय तक के कोई भी उत्कृष्ट गद्य-ग्रन्थ हमें नहीं मिल रहे हैं। १९ वीं शताब्दी से गद्य का विकास प्रारम्भ होता है। 'हिन्दी-भाषा-सार' के लेखकद्वय (अध्यापक रामदास गौड़ और ला० भगवान-दीन) के कथनानुसार हिन्दी-गद्य के आदि-लेखक मुंशी

सदासुख हैं। उनके बाद भी कुछ गद्य-लेखक और उनकी रचनाएं मिलती हैं परन्तु लल्लूलालजी के समय से इसका विकास प्रारम्भ होता है। उनका लिखा प्रेमसागर आगरे के निकट बोली जानेवाली भाषा में लिखा गया है जिसमें ब्रजभाषा की पृथकता और खड़ी-बोली के प्रादुर्भाव का चित्र स्पष्ट दिखाई पड़ता है। अतः हिन्दी-गद्य के जन्मदाता होने का अधिक श्रेय लल्लूलालजी को ही है। उसके बाद गद्य की भाषा में उर्दू के शब्दों का पुट मिलाना शुरू हुआ। राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द की खड़ी-बोली में अरबी-फ़ारसी के शब्द बहुतायत से प्रयुक्त हुए हैं। परन्तु राजा लक्ष्मणसिंह की गद्य-रचना विशुद्ध हिन्दी में है। इसके बाद भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी-गद्य को अधिक परिष्कृत कर दिया। आजकल लिखे जानेवाले हिन्दी-गद्य की इनके समय में बड़ी उन्नति हुई। पश्चात् प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, महावीरप्रसाद द्विवेदी आदि महानुभावों की लेखनी से हिन्दी-गद्य की काया ही पलट गयी और आज पद्य-विभाग से गद्य-विभाग का ही अधिक विकास हो रहा है। विद्वानों का कहना है कि खड़ी-बोली का प्रादुर्भाव मेरठ और उसके आसपास बोली जानेवाली भाषा से हुआ है।

उर्दू-भाषा

कुछ लोगों का कहना है कि उर्दू एक अलग भाषा है। जो फ़ारसी या अरबी से निकली है। परन्तु इसकी उत्पत्ति के विषय में विचार करने से तो यही पता चलता है कि उर्दू का उद्गम कोई विदेशी-भाषा नहीं है। हमारे विचार से उर्दू हिन्दी

का ही विकृत वेष है। इसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों का मत है कि इसका सूत्रपात शाहजहाँ बादशाह के समय में हुआ है। जब भारत में मुसलमानों का राज्य हुआ तो मुसलमानों का यहाँ के निवासियों से रातदिन सरोकार पड़ने लगा। उन्हें यहाँ की बोली सीखनी पड़ी पर विदेशी होने के कारण वे जब यहाँ की प्रचलित भाषा बोलने लगे तो उसका दूसरा ही रूप हो गया। फ़ारसी और अरबी शब्दों के सम्मिश्रण से उनकी भाषा एक विचित्र ढंग की हो गयी और विकृत भाषा उर्दू कहलायी। 'उर्दू' शब्द का अर्थ है 'लश्कर' अर्थात् लश्कर या छावनी में बोली जानेवाली भाषा। कहा जाता है कि दिल्ली में मुगलों की छावनी की मुसलमानी-सेना और हिन्दू दूकानदारों अथवा अन्य सरोकारी हिन्दुओं की बोली के आदान-प्रदान से पहले-पहल उर्दू का प्रादुर्भाव हुआ। अतः कहना पड़ता है कि उर्दू हिन्दी का ही मुसलमानी वेष है। फर्क इतना ही है कि अगर हिन्दी में प्राकृत और संस्कृत के तत्सम शब्द हैं तो उर्दू में फ़ारसी और अरबी के। अगर उर्दू को नागरी-लिपि में बाईं ओर से दायीं ओर लिखना शुरू कर दें और थोड़े से अरबी और फ़ारसी के तत्सम शब्दों को निकाल दें तो हिन्दी और उर्दू में कोई भेद ही नहीं रह जायगा। उर्दू के सबसे बड़े शब्द-कोष 'फिहरंगे आसफ़िया' में कुल छः हज़ार शब्द हैं जिनमें आधे से भी अधिक ऐसे शब्द हैं जो हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। भला, ऐसी हालत में उर्दू को हिन्दी से भिन्न केवल लिपि में भेद होने से अलग कैसे माना जाय। पर उर्दू-लेखकों का झुकाव ऐसा हो रहा है कि वे उर्दू को जटिल बनाकर उसमें फ़ारसी और अरबी शब्दों को घुसेड़कर एक स्वतन्त्र भाषा का रूप देने की फ़िक्र में लगे हैं।

कहने का मतलब यह है कि उर्दू-हिन्दी में केवल लिपि और तत्सम शब्दों में भेद है।

हिन्दी के वर्तमान भेद—इस तरह वर्तमान हिन्दी के तीन भेद हो सकते हैं—(१) हिन्दी जिसमें संस्कृत के तद्भव और तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग हो, (२) उर्दू—जिसमें फ़ारसी और उर्दू के तद्भव और तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग हो और (३) हिन्दोस्तानी—जो बोलचाल की प्रचलित भाषा में लिखी गयी हो।

हिन्दी का शब्द-भाण्डार

आजकल हिन्दी में बहुत भाषाओं के शब्द प्रयुक्त हो चले हैं। बहुतों का तो यहाँ तक कहना है कि जिस वाक्य में केवल क्रियापद हिन्दी रहे और बाकी किसी भाषा के शब्द क्यों न प्रयुक्त हुए हों उसे भी हिन्दी ही कहा जायगा पर यह मत सर्वमान्य नहीं है। पर साथ ही बोलचाल में प्रयुक्त दूसरी भाषा के शब्दों का प्रयोग करना भी कुछ बुरा नहीं है। जो हो, पहले तो हिन्दी में प्राकृत और संस्कृत के ही शब्द प्रयुक्त होते थे पर मुसलमानों के संसर्ग से अरबी और फ़ारसी के तथा योरोपियनों के संसर्ग से अंगरेज़ी आदि योरोपियन भाषाओं के शब्द भी घुस गये हैं। इस प्रकार इन दिनों निम्नलिखित प्रकार के शब्द हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं:—

(१) प्राकृत के शब्द—पेट, बाप, ऊंघना, कोट आदि।

(२) संस्कृत के शब्द—मनुष्य, देव, पिता, माता आदि।

(३) अरबी के शब्द—ग़रीब, फ़क़ीर, कुदरत, आदत, इज़्ज़त, हक़, साहब, क़िस्सा, हुक्म, माफ़, बाद, नक़ल, मालिक,

इश्तिहार, मोकाबिला, हाकिम, नालिश, हाल, मालूम, ख़राब, हुक्का, खलीफ़ा आदि ।

(४) फ़ारसी के शब्द—बन्दोबस्त, दस्तावेज़, ख़रीद, गुमाश्ता, आदमी, कमर, चाक़ू, शर्म, जहान, गुलाब, बुलबुल, शाह, अमीर, उस्ताद, शौक, ख़ून, गर्म, सूद, होश आदि ।

(५) अन्य विदेशी भाषाओं के शब्द—

(क) तुर्की—तोप, तमग़ा, कोतल, उर्दू, बावर्ची, क़ाबू, आग़ा आदि ।

(ख) पुर्तगीज़—कमरा, नीलाम, गिर्जा, फ़र्मा, अलमारी पादरी ।

(ग) अंगरेज़ी—कलक्टर, कमिश्नर, मजिस्टर, लाट, काउन्सिल, पाउण्ड, थियेटर, कमीशन, रसीद, मास्टर, अरदली, स्कूल, स्कालरशिप, सार्टिफिकेट, सिक्रेटरी, डिस्ट्रिक्टबोर्ड, म्युनिसपैलटी, टिकट, रेल, नोटिस, एञ्जिन, फुटबाल, लान, इंच, बटन, बक्स, पेन्सिल, सिलेट आदि ।

(६) प्रान्तीय भाषाओं के शब्द—

(क) मराठी—लागू, चालू, वाड़ा, आदि ।

(ख) बंगला—प्राणपण, उपन्यास, गल्प, अनुशीलन आदि।

(७) देशज—डोंगी, डाभ, चटपट, खटखट, झटपट आदि । इनमें अनुकरण वाचक शब्द भी सम्मिलित हैं ।

तद्भव और तत्सम शब्द

संस्कृत के वे शब्द जो अपने वास्तविक रूप में हिन्दी में आये हैं तत्सम कहलाते हैं और जो विकृत रूप में आये हैं वे तद्भव कहलाते हैं। जैसे—अग्नि, वायु, देव, चांडाल, हृदय आदि

शब्द तत्सम और गहरा (गम्भीर), माय (माता), गुनी (गुणी), घर (गृह), हाथ (हस्त), काम (कार्य) आदि तद्भव शब्द हैं।

अरबी, फ़ारसी के शब्द भी तत्सम और तद्भव दोनों रूप में आते हैं; जैसे—दारोग़ा, नक़्ल, क़ुसूर, उज़्र, क़द्रदाँ, ख़बर, ज़ुल्म आदि अरबी, फ़ारसी के तत्सम रूप हैं और बाजार, दरोगा, नकल, कसूर, उजर, कलम, कदरदान आदि तद्भव रूप हैं।

अंगरेज़ी में भी यही हाल है। दोनों रूप में इस भाषा के भी शब्द व्यवहृत हो रहे हैं; जैसे—टिकिट, मैजिस्ट्रेट, कौलैक्टर, कौमिश्नर, हौल, बौक्स आदि तत्सम रूप हैं और टिकट, मजिस्टर, कलक्टर, कमिश्नर, हाल, बक्स आदि उसके तद्भव रूप माने जाते हैं।

अरबी, फारसी के हिन्दी में प्रयुक्त शब्दों के विषय में कुछ हिन्दी के लेखकों का कथन है कि जहाँ तक हो उन शब्दों के नीचे बिन्दी देना चाहिये अर्थात् उसका तत्सम रूप ही देना चाहिये परन्तु इस कथन का निर्वाह होना मुश्किल है। बोलचाल की भाषा में तो लोग विकृत रूप बोलते ही हैं साथ ही लिखने में भी नुकता या बिन्दी का विचार नहीं किया जा रहा है। हमारी समझ में नुकता आदि के पचड़े में पड़कर हिन्दी जैसी सरल भाषा को जटिल बनाना उचित नहीं है। उसी प्रकार अंगरेज़ी आदि शब्दों के विषय में भी हमारी यही धारणा है अंगरेज़ी के शब्द जिस रूप में बोलचाल की भाषा में प्रयुक्त हो चले हैं उसी रूप में उन्हें व्यवहार करना ठीक है। इसका कारण यह है कि हिन्दी में भाषा का सौन्दर्य बढ़ाने के ख़्याल से ये शब्द नहीं लिये गये हैं बल्कि आवश्यकता की पूर्ति के लिये। इसलिए जब उन शब्दों का बोलचाल या समझने लायक

रूप में व्यवहार किया ही नहीं जायगा तो व्यर्थ ही उन शब्दों को हिन्दी में घुसेड़ने की आवश्यकता ही क्या है। यहाँ पर कुछ तत्सम और उसके अपभ्रंश रूप या तद्भव में प्रयुक्त थोड़े से शब्द दिये जाते हैं—

संस्कृत

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
अज्ञान	अजान	केवल	कोरा
अनार्य	अनाड़ी	गम्भीर	गहरा
आश्रय	आसरा	घृत	घी
उद्घाटन	उघारना	छत्र	छाता
कपोत	कबूतर	सौभाग्य	सोहाग
काक	काग	धूम्र	धुँआ
कुम्भकार	कुम्हार	वृन्त	दाँत
कोकिल	कोयल	सूत्र	सूत
		नृत्य	नाच
		ध्वनि	धुनि इत्यादि।

संस्कृत के कुछ ऐसे तद्भव शब्द जिसके तत्सम हिन्दी में प्रयुक्त नहीं होते—

तत्सम	अपभ्रंश	तत्सम	अपभ्रंश
अहिफेन	अफीम	चञ्चु	चोंच
आमलक	आमला	घट्ट	घाट
आम्र	आम	गोविट्	गोबर
उष्ट्र	ऊँट	त्वरित	तुरन्त
खट्वा	खटिया	उद्वर्तन	उबटन

चुल्लिका	चूल्हा	खर्पर	खपरा
चतुष्पदिका	चौकी	तिक्त	तीता
शलाका	सलाई	निरालय	निराला
हट्ट	हाट	मृत्तिका	मिट्टी
		सक्तु	सत्तू आदि।

अरबी और फ़ारसी

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
क़द्रदाँ	कदरदान	रफ़अ	रफ़ा
क़ानून	कानून	मिआ़दी	म्यादी
क़ैद	कैद	बेज़ा	बेजा
इश्तहार	इस्तहार	बअ़नामा	बैनामा
ख़ातिर	खातिर	दअ़वा	दावा
तअ़रीफ़	तारीफ	तअ़लीम	तालीम
तसदीक़	तसद्दीक	चश्म	चस्म
मुनाफ़ा	मोताफा	क़िस्मत	किस्मत
शायद	स्यात्	मअ़मूली	मामूली
क़ुबूल	कबूल	बख़्शीश	बकसीस
जमअबन्दी	जमाबन्दी	मुआ़फ़	माफ
तअ़ज्जुब	ताज्जुब	जामअ़मसजिद	जुम्मामसजिद
ख़ूराक	खुराक	मसजिद	महजीत
तख़्त	तखत	ज़ुल्म	जुलुम
ज़ब्त	जप्त	ख़्वाहमख़्वाह	खांमखां
अफ़सोस	अफसोच	कमख़्वाब	कीमखाब
मौज़अ	मौजा	अख़्तियार	अखतियार

अँगरेज़ी

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
ऐंज़िन	इञ्जिन	स्लेट	सिलेट
समन	सम्मन	फ्लैलिन	फ़लालैन
लौंगक्लाथ	लंकलाठ	टरपेण्टाइन	तारपीन
टिकिट	टिकट	वेस्टकोट	वासकोट
बैंक	बंक	थियेटर	थेटर
डौक्टर	डाक्टर	मिल	मील
बौटल	बोतल	माइल	मील इत्यादि ।

अभ्यास

१—हिन्दी की उत्पत्ति कैसे हुई समझाकर लिखो।

Trace the origin of Hindi.

२—हिन्दी का अधिक सम्बन्ध संस्कृत से है या फ़ारसी से?

Is Hindi closely related to Sanskrit or Persian?

३—संस्कृत, अँगरेज़ी, फ़ारसी और अरबी भाषा के दस दस शब्दों के नाम लो जिनका व्यवहार हिन्दी में अच्छी तरह होता है।

Mention ten words belonging to each of the Sanskrit, English, Persian and Arbic.

४—तत्सम और तद्भव से क्या समझते हो? दस संस्कृत के तद्भव शब्दों को लिखो।

What do you understand from तत्सम, and तद्भव? Mention ten words of संस्कृत तद्भव.

जिस शब्द के खंड का अर्थ न हो उसे रूढ़ शब्द कहते हैं; जैसे—राम, धन, मोह आदि। इन शब्दों में रा+म, ध+न, मो+ह में किसी भी खण्ड का अलग अलग कोई अर्थ नहीं निकलता। जिस शब्द के खंड का अर्थ निकले उसे यौगिक शब्द कहते हैं, इस प्रकार के शब्द उपसर्ग, प्रत्यय या दूसरे शब्दों की मिलावट से बनते हैं; जैसे—पाठशाला, घुड़चढ़ा आदि। इन शब्दों में पाठ+शाला में पाठ का अर्थ 'पढ़ने का' और शाला का अर्थ 'घर' है अर्थात् पढ़ने का घर, उसी प्रकार घुड़ का अर्थ घोड़ा और चढ़ा का अर्थ चढ़नेवाला है अर्थात् पूरे शब्द का अर्थ घोड़े पर चढ़ने वाला है। योगरूढ़ शब्द (संज्ञा) यौगिक शब्द के समान ही होता या बनता है पर वह सामान्य अर्थ को छोड़कर किसी विशेष अर्थ को प्रकाशित करता है; जैसे लम्बोदर आदि। यों तो लम्बोदर का शब्दार्थ हुआ लम्बा पेटवाला पर सभी लम्बे पेटवाले व्यक्तियों को लम्बोदर न कहकर गणेश को लम्बोदर कहते हैं। इसी प्रकार पंकज, चक्रपाणि, त्रिशूलधारी, जलज, आदि शब्द योगरूढ़ हैं।

फिर सभी सार्थक शब्द रूपान्तर के विचार से दो भागों में विभक्त हैं—एक विकारी दूसरा अविकारी, जिन शब्दों में लिंग, वचन और कारकादि के कारण कोई विकार उत्पन्न हो उन्हें विकारी और जिन शब्दों का रूप ज्यों का त्यों रहे उन्हें अविकारी या अव्यय कहते हैं। विकारी शब्द चार तरह के माने गये हैं—संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया। वस्तु के नाम को संज्ञा (Noun) कहते हैं जैसे गाय, बैल, महेश, सदाशिव आदि। जो शब्द संज्ञा के बदले में आवें उन्हें सर्वनाम (Pronoun)

द्वितीय खण्ड

प्रथम परिच्छेद

शब्द-विचार

जो ध्वनि कान में सुनाई पड़े उसे शब्द कहते हैं, सब प्रकार के शब्द दो तरह के होते हैं—एक ध्वन्यात्मक दूसरा वर्णात्मक। जिन शब्दों के अक्षर स्पष्ट रूप से सुनाई नहीं पड़ें उन्हें ध्वन्यात्मक और जिनके अक्षर अलग अलग सुनाई पड़ें उन्हें वर्णात्मक कहते हैं। भाषा में ध्वन्यात्मक शब्द कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता इसलिए इसमें केवल वर्णात्मक शब्दों का ही विवेचन किया जाता है। ऐसे शब्द के दो भेद हैं—एक सार्थक दूसरा निरर्थक। जिस शब्द का कुछ अर्थ निकले उसे सार्थक शब्द कहते हैं; जैसे—राम, मोहन आदि। जिस शब्द का अर्थ न हो उसे निरर्थक शब्द कहते हैं; जैसे ढब ढब, अलबल आदि।

व्युत्पत्ति की दृष्टि से सभी सार्थक शब्द दो भागों में विभक्त हैं — रूढ़ और यौगिक; परन्तु सार्थक संज्ञा के शब्द तीन भागों में विभक्त हैं—रूढ़, यौगिक और योगरूढ़।

जिस शब्द के खंड का अर्थ न हो उसे रूढ़ शब्द कहते हैं; जैसे—राम, घन, मोद आदि। इन शब्दों में रा+म, घ+न, मो+द में किसी भी खण्ड का अलग अलग कोई अर्थ नहीं निकलता। जिस शब्द के खंड का अर्थ निकले उसे यौगिक शब्द कहते हैं, इस प्रकार के शब्द उपसर्ग, प्रत्यय या दूसरे शब्दों की मिलावट से बनते हैं; जैसे—पाठशाला, घुड़चढ़ा आदि। इन शब्दों में पाठ+शाला में पाठ का अर्थ 'पढ़ने का' और शाला का अर्थ 'घर' है अर्थात् पढ़ने का घर, उसी प्रकार घुड़ का अर्थ घोड़ा और चढ़ा का अर्थ चढ़नेवाला है अर्थात् पूरे शब्द का अर्थ घोड़े पर चढ़ने वाला है। योगरूढ़ शब्द (संज्ञा) यौगिक शब्द के समान ही होता या बनता है पर वह सामान्य अर्थ को छोड़कर किसी विशेष अर्थ को प्रकाशित करता है; जैसे लम्बोदर आदि। यों तो लम्बोदर का शब्दार्थ हुआ लम्बा पेटवाला पर सभी लम्बे पेटवाले व्यक्तियों को लम्बोदर न कहकर गणेश को लम्बोदर कहते हैं। इसी प्रकार पंकज, चक्रपाणि, त्रिशूलधारी, जलज, आदि शब्द योगरूढ़ हैं।

फिर सभी सार्थक शब्द रूपान्तर के विचार से दो भागों में विभक्त हैं—एक विकारी दूसरा अविकारी, जिन शब्दों में लिंग, वचन और कारकादि के कारण कोई विकार उत्पन्न हो उन्हें विकारी और जिन शब्दों का रूप ज्यों का त्यों रहे उन्हें अविकारी या अव्यय कहते हैं। विकारी शब्द चार तरह के माने गये है—संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया। वस्तु के नाम को संज्ञा (Noun) कहते हैं जैसे गाय, बैल, महेश, सदाशिव आदि। जो शब्द संज्ञा के बदले में आवें उन्हें सर्वनाम (Pronoun)

कहते हैं; जैसे—मैं, वह, जो आदि। संज्ञा की विशेषता या गुण प्रकट करनेवाले शब्दों को विशेषण (Adjective) कहते हैं; जैसे—लाल बुरा, अच्छा आदि। ऐसे शब्दों को, जिनसे काम करने या होने का भाव प्रदर्शित हो, क्रिया (Verb) कहते हैं; जैसे खाना, गाना, जाना आदि। अविकारी शब्द के भी विकारी शब्द की नाईं चार भेद हो सकते हैं—क्रियाविशेषण, सम्बन्ध बोधक, समुच्चयबोधक और **विस्मयादिबोधक**। जो क्रिया की विशेषता बतावे उसे क्रियाविशेषण (Adverb) कहते हैं; जैसे—धीरे धीरे। जो सम्बंध बतावे उसे सम्बंध बोधक (Relative Adverb) कहते हैं; जैसे—समेत, संयुक्त आदि। जो दो वाक्यों या शब्दों का परस्पर अन्वय जतावे उसे समुच्चय-बोधक (Conjunction) कहते हैं; जैसे—और, एवं या इत्यादि। जिससे हर्ष, विषाद आश्चर्य, क्षोभ आदि मनोविकार प्रदर्शित हों उसे विस्मयादिबोधक (Interjection) कहते हैं; जैसे—हाय ! ओह ! बाप रे ! इत्यादि।

द्वितीय परिच्छेद

शब्दों का संगठन

(Structure of words)

यौगिक शब्द (Compound words)

प्रायः दो या दो से अधिक रूढ़ शब्दों को मिलावट से यौगिक शब्द बनाये जाते हैं। देखा जाता है कि हिन्दी में ऐसे संयुक्त शब्द तीन तरह से संगठित किये जाते हैं। पहला शब्दों के पहले उपसर्ग (Prefixes) जोड़कर, शब्दों के अंत में प्रत्यय (Suffixes) लगाकर और समास की रीति के अनुसार, इनके एक ही शब्द को दुहराने से और दो समान या विपरीत अर्थ प्रदर्शित करनेवाले शब्दों के प्रयोग में नये शब्द की रचना की जाती है। किसी प्राणी या पदार्थ की बोली या ध्वनि के अनुकरण में भी नये शब्द बनाये जाते हैं जिन्हें अनुकरणवाचक शब्द कहते हैं।

उपसर्ग (Prefixes)

कुछ अव्यय धातु के साथ मिलकर खास अर्थ प्रकाशित करते हैं ऐसे अव्यय उपसर्ग कहलाते हैं। उपसर्ग शब्दों के पहले

जोड़ा जाता है और जुट जाने पर मूल शब्दों के अर्थ में विशेषता पैदा कर देता है। शब्दों के पहले उपसर्ग जोड़ने से कहीं तो मूल शब्द के अर्थ में कुछ परिवर्तन नहीं होता है, कहीं शब्द का अर्थ उलटा हो जाता है और कहीं शब्दार्थ में विशेषता उत्पन्न हो जाती है। जैसे—'भ्रमण' शब्द के पहले 'परि' उपसर्ग जोड़ने से 'परिभ्रमण' होता है जो मूल शब्द 'भ्रमण' के ही अर्थ में प्रयुक्त होता है परन्तु 'गमन' शब्द के पहले 'आ' उपसर्ग लगाने से जहाँ 'गमन' का अर्थ 'जाना' होता है वहाँ 'आगमन' का अर्थ 'आना' हो जाता है फिर 'पूर्ण' के पहले परि उपसर्ग जोड़ने से 'परिपूर्ण' शब्द के अर्थ में विशेषता आ जाती है।

संस्कृत में निम्नलिखित २० उपसर्ग होते हैं—

प्र—अतिशय, उत्कर्ष, यश, उत्पत्ति और व्यवहार के अर्थ को प्रदर्शित करता है; जैसे—प्रबल, प्रताप, प्रमुख आदि।

परा—विपरीत, नाश आदि का प्रकाशक है। जैसे—पराजय, पराभूत।

अप—विपरीत, हीनता आदि का द्योतक है; जैसे—अपप्रयोग, अपकार।

सम्—सहित और उत्तमता आदि का द्योतक है; जैसे—सन्तुष्ट, संस्कृत आदि।

अनु—सादृश्य, क्रम और पश्चात् आदि का द्योतक है; जैसे-अनुताप, अनुशीलन, अनुनय, अनुरूप आदि।

अव—अनादर, हीनता आदि का प्रकाशक है; जैसे—अवनति, अवशेष।

निर्—निषेधार्थक है; जैसे—निर्भय, निर्लेप, निर्गन्ध, निर्मल आदि।

अभि—अधिकता और इच्छा को प्रदर्शित करता है; जैसे—अभिभावक, अभिशाप, अभिप्राय, अभियोग आदि।

अधि—प्रधानता, निकटता आदि के अर्थ में, जैसे अधिनायक, अधिराज।

वि—हीनता, विभिन्नता, विशेषता, असमानता आदि अर्थों का द्योतक है; जैसे—विलाप, विकार, विनय, वियोग विशेष, विभिन्न आदि।

सु—उत्तमत्ता और श्रेष्ठता के अर्थ में; जैसे—सुयश, सुयोग, सुभाषित।

उद्—उत्कर्ष का प्रकाशक है; जैसे—उद्दाम, उदय, उद्गार आदि।

अति—अतिशय, उत्कर्ष आदि का द्योतक है; जैसे—अतिशय, अतिगुप्त आदि।

नि—अधिकता और निषेध के अर्थ में; जैसे—नियोग, निवारण आदि।

प्रति—प्रत्येक, बराबरी, विरोध, परिवर्तन आदि अर्थों का द्योतक है; जैसे—प्रतिदिन, प्रतिलोम, प्रतिशोध, प्रतिहिंसा आदि।

परि—अतिशय, त्याग आदि का द्योतक है; जैसे—परिदोष, परिदर्शन।

अपि—निश्चयार्थक है; जैसे—अपिधान।

आ—सीमा, विरोध, ग्रहण, चढ़ाव उतराव, विपरीत आदि के अर्थों को प्रदर्शित करता है; जैसे—आगमन, आजीवन, आदान, आकर्षण।

उप—हीनता, निकटता और सहायता के अर्थ में; जैसे—उप-

मंत्री, उपसम्पादक, उपकुल, उपकार, उपवन आदि।

दुर्—क्लिष्टता, दुष्टता, हीनता आदि के अर्थ में; जैसे—दुरवस्था, दुर्गम, दुर्दमनीय दुर्जन इत्यादि।

उपर्युक्त उपसर्गों के अतिरिक्त नीचे लिखे अव्यय, विशेषण और अन्य शब्द भी उपसर्ग के रूप में व्यवहृत होते हैं—

अ (अन्) निषेधार्थक है; जैसे—अनन्त, अनादि, अज्ञान।

पुनः—दुहराने के अर्थ में; जैसे—पुनर्जन्म, पुनरुक्ति आदि।

अधस्—पतन के अर्थ में; जैसे—अधःपतन, अधोमुख, अधोगति आदि।

कु—नीचता, हीनता के अर्थ में; जैसे—कुअवसर, कुघड़ी, कुमार्ग आदि।

सह, स—संयोग, साथ आदि के अर्थ में; जैसे—सहवास, सहगामी, सफल आदि।

सत्—सचाई का द्योतक है; जैसे—सद्भाव, सत्कर्म, सन्मार्ग आदि।

चिर—अधिकता के अर्थ में; जैसे—चिरञ्जीव, चिरकाल, चिरदिन आदि।

धर्म—धर्मबुद्धि, धर्मभीरु, धर्मात्मा आदि।

अर्थ—अर्थकरी, अर्थशास्त्र, अर्थहीन आदि।

आत्म—आत्मसम्मान, आत्मरक्षा आत्मश्लाघा, आत्मसंयम आदि।

कर्म—कर्मनिष्ठ, कर्मशील, कर्मयोग, कर्मवीर, कर्मनाशा आदि।

बल, वीर—बलशाली, बलहीन, बलप्रयोग, वीरश्रेष्ठ, वीरवर्णी आदि।

विश्व—विश्वप्रेम, विश्वव्यापी, विश्वनाथ आदि।

राज—राजकर, राजदण्ड, राजस, राजद्रोह, राजधानी आदि।
लोक—लोकमत, लोकसंग्रह, लोकप्रिय, लोकनाथ आदि।
सर्व—सर्वभौम, सर्वनाम, सर्वसाधारण, सर्वसम्मति आदि।

हिन्दी के कुछ उपसर्ग

अ (अन्) निषेधार्थक है; अमोल, अनमोल, अनपढ़, अगाध, अजान।

अध—आधा के अर्थ में; अधजल, अधपका, अधमुआ।

नि—निषेधार्थक है; निडर, निकम्मा आदि।

सु—उत्तमता के अर्थ में; जैसे—सुडौल, सुजान, सुपथ।

कु (क)—बुराई, हीनता आदि के अर्थ में, जैसे—कुखेत, कुकाठ, कपूत।

मुँह (उपसर्गवत्)—मुँहझौंसी, मुँहजरा, मुँहमाँगा आदि।

उर्दू के कुछ उपसर्ग

ख़ुश— ख़ुशमिज़ाज़, ख़ुशदिल, ख़ुशबू, ख़ुशहाल आदि।
ग़ैर—ग़ैरमुमकिन, ग़ैरहाज़िर, ग़ैरमुनासिब आदि।
ला—लापता, लाजवाब, लाहिसाब लापरवाह आदि।
ब—बदस्तूर, बमूजिब, बजिन्स आदि।
बा—बाकलम, बावफा, बाइन्साफ, बाकायदा आदि।
बे—बेलगाम, बेवफा, बेकायदा आदि (बा का उलटा)
दर—दरअसल, दरहकीकत, दरपेशी, दरकार आदि।
बद—बदनसीब, बददुआ, बदमाश, बदख़्वाह, बदनाम आदि।
ना—नालायक, नासमझ, नाचीज़ आदि।
हर—हररोज़, हरसाल, हरएक आदि।
सर—(उपसर्गवत्) सरताज, सरदार आदि।

नोट—याद रखना चाहिये कि संस्कृत के उपसर्ग संस्कृत तत्सम शब्दों में, हिन्दी के उपसर्ग तद्भव या शुद्ध हिन्दी के शब्दों में और उर्दू के उपसर्ग उर्दू के शब्दों में ही जोड़े जाते हैं।

एक ही शब्द में प्रयुक्त अनेक उपसर्ग

कृ धातु से कार—अकार, प्रकार, विकार, उपकार, साकार, प्रतिकार, निराकार, संस्कार आदि।

भू धातु से भव—सम्भव, पराभव, उद्भव, अनुभव, प्रभाव, अभाव आदि।

हृ धातु से हार—आहार, विहार, प्रहार, संहार, व्यवहार, उपहार आदि।

दिश् से देश—आदेश, विदेश, प्रदेश, उपदेश।

चर से चार—आचार, विचार, प्रचार, संचार, व्यभिचार, उपचार आदि।

क्रम—अतिक्रम, उपक्रम, पराक्रम, विक्रम आदि।

मल—निर्मल, विमल, परिमल, अमल आदि।

लोचन—विलोचन, सुलोचन आदि।

अभ्यास (Exercise)

१—उपसर्ग किसे कहते हैं और इसका प्रयोग किस ढंग से होता है ?

Define Prefixes and show how they are used.

२—पाँच ऐसे शब्द बताओ जिनके पहले उर्दू के उपसर्ग जोड़े गये हों।

Denote such five words in which there are Urdu Prefixes placed before them.

३—नीचे लिखे शब्दों में कोई उपसर्ग जोड़कर उनके अर्थ बताओ।

Form words by placing prefixes before the following words and give the meanings of the words thus formed.

पात्र, शाक, तोल, मोल, उत्तर, यश, जन, मन काम, कार्य्य।

४—नीचे लिखे शब्दों का उपसर्ग के समान व्यवहार कर यौगिक शब्द बनाओ।

Make some compound words using the following *words as prefixes.*

अन्त, श्री, जीवन, सर, मुँह, यथा।

प्रत्ययान्त यौगिक शब्द

ऊपर कह आये हैं कि शब्द के अन्त में प्रत्यय जोड़ कर यौगिक शब्द बनाया जाता है। हिन्दी-भाषा में प्रयुक्त कितने प्रत्यय तो हिन्दी के हैं और कितने शब्द हिन्दी में ऐसे भी व्यवहृत हो रहे हैं जो संस्कृत के हैं और उनमें संस्कृत व्याकरण के नियमानुसार प्रत्यय जुटे हुए हैं। प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं— कृत् और तद्धित। क्रिया या धातु के अन्त में जो प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं उन्हें कृत् प्रत्यय कहते हैं और उनके मेल से बने शब्द कृदन्त कहलाते हैं। उसी प्रकार संज्ञा तथा विशेषण शब्दों के अन्त में जो प्रत्यय लगते हैं वे तद्धित कहलाते हैं और उनके मेल से बने शब्द तद्धितान्त कहलाते हैं।

कृदन्त

यों तो संस्कृत में सैकड़ों प्रत्यय व्यवहृत होते हैं; पर यहाँ पर सब का जिक्र करना मुश्किल है। केवल कुछ मुख्य प्रत्ययों का दिग्दर्शन मात्र करा दिया जाता है। कृत् प्रत्यय के मेल से क्रिया या धातु, संज्ञा और विशेषण के रूप में परिणत हो जाते हैं जिनके कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

संज्ञा (Nouns derived from roots)

अक, अन, क्ति आदि प्रत्ययों के योग से बनी संज्ञा—

प्रत्यय	धातु	संज्ञा	प्रत्यय	धातु	संज्ञा
अक	कृ	कारक	अन	भू	भवन
,,	नी	नायक	,,	गम्	गमन
,,	गै	गायक	,,	भुज	भोजन
,,	नत्	नर्तक	,,	पत्	पतन
,,	दा	दायक	,,	तप	तपन
अन	नी	नयन	क्ति	स्तु	स्तुति
,,	गह	गहन	,,	शाक	शक्ति
,,	साधि	साधन	,,	ख्या	ख्याति
,,	शी	शयन			

विशेषण (Adjectives derived from roots)

त (क्त), तव्य, अनीय, इत्, णिन्, इष्णु, आदि प्रत्ययों के योग से बने विशेषण—

प्रत्यय	धातु	विशेषण	प्रत्यय	धातु	विशेषण
क्ति (त)	जि	जित	तव्य	कृ	कर्तव्य
"	मद्	मत्त	"	गम्	गन्तव्य
"	मृ	मृत	"	दृश्	द्रष्टव्य
"	क्लम	क्लान्त	"	दा	दातव्य
"	अर्प	अर्पित	"	भू	भवितव्य
"	क्लृप	कल्पित	"	वच्	वक्तव्य
नीय (अनीय)	पूज्	पूजनीय	इत (क्त)	पत	पतित
"	रम्	रमणीय	"	मूर्च्छा	मूर्च्छित
"	सेव्	सेवीय	य (यत, क्य, ण्यत्)	दा	देय
"	ग्रह	ग्रहणीय	"	पा	पेय
"	दृश्	दर्शनीय	"	सह	सह्य
				रम्	रम्य

हिन्दी कृत् प्रत्यय

क्रिया के अंत में हिन्दी के प्रत्ययों को जोड़ने से कर्तृवाचक, कर्मवाचक, करणवाचक और भाववाचक ये चार प्रकार की संज्ञाएँ और कर्तृवाचक, तथा क्रियाद्योतक ये दो प्रकार के विशेषण बनते हैं, इन छवों का पृथक्-पृथक् उदाहरण नीचे दिया जाता है।

कृदन्तीय संज्ञा (Nouns derived from roots)

(क) क्रिया के चिह्न (धातु) ना को लोपकर आ, री, का, र, इया आदि प्रत्ययों को जोड़ देने से कर्तृवाचक कृदन्तीय (Agentives) संज्ञा हो जाती है; जैसे—भूँजा (फाँदू) कटारी, उचक्का, झालर, धुनिया आदि।

(ख) धातु के चिह्न ना का लोपकर ना, नी, प्रत्ययों को जोड़ देने से कर्मवाचक (Accusative) बनाते हैं; जैसे—ओढ़नी, खैनी, पीनी।

(ग) धातु के चिह्न ना का लोपकर आ, ई, उ, और न, ना, नी आदि प्रत्ययों को जोड़कर करणवाचक (Instrumental nouns) बनाते हैं; जैसे—झूला, ठेला, घेरा, जाँता, रेती, जोती, झाड़ू, बुहारी, कसौटी, ढक्कन, बेलन, झूलन, बेलना, कतरनी सुमिरनी, चलनी इत्यादि।

(घ) केवल धातु के चिह्न ना का लोपकर देने से तथा ना का लोप कर आ, आई, आन, आप, आव, ई, त, ती, न्ती, न, नी, र, वट, हट, आदि प्रत्ययों को जोड़ देने से भाववाचक (Abstract nouns) कृदन्तीय संज्ञाएँ बनाते हैं; जैसे—मार, पीट, दौड़, डाँट, डपट, सोच, विचार, रट, घाटा, छापा, घेरा, सोटा, लड़ाई, चढ़ाई, लिखाई, लगान, उठान, पिसान, मिलाव, चलाव, उतराव, चुनाव, बोली, हँसी, बचत, खपत, लागत, चढ़ती, घटती, बढ़ती, चलन्ती, बढ़न्ती, लगन, लेन, देन, कटनी, ठोकर, दिखावट, रुकावट, मिलावट, तरावट, सजावट, चिल्लाहट, रुलाहट इत्यादि।

कृदन्तीय विशेषण (Adjectives derived from roots)

(क) कर्तृवाचक (Agentives used as Adjectives) धातु के चिह्न ना का लोपकर आऊ, आक, आका, आड़ी, आकू, आलू, इयाँ, इयल, एरा, ऐता, ऐया, ओड़, ओड़ा, क, कूड़, वन, वाला, वैया, दार, सार, हारा आदि प्रत्ययों को जोड़ने

से बनता है; जैसे—टिकाऊ, खाऊ, बिकाऊ, दिखाऊ, जड़ाऊ, तैराक, लड़ाकू, उड़ाकू, खिलाड़ी, जुआड़ी, झगड़ालू, चालू, घढ़ियाँ, चढ़ियाँ, सड़ियल, अड़ियल, लुटेरा, फनैत, डकैत, बढ़ैया, हँसोड़, भगोड़ा, याचक, जापक, मारक, पालक, भुलक्कड़, लिखक्कड़, हँसक्कड़, पियक्कड़, सुभावन, लुभावन, देखनेवाला, सुननेवाला, खवैया, खेवैया, समझदार, मालदार, मिलनसार, चिकनसार, राखनहारा इत्यादि। (हारा का प्रयोग अक्सर पद्य में होता है)।

(ख) क्रियाद्योतक (Participial adjectives) क्रियाद्योतक विशेषण दो प्रकार के होते हैं—एक भूतकालिक दूसरा वर्तमानकालिक। भूतकालिक क्रियाद्योतक ना का लोपकर आ प्रत्यय जोड़ने से बनता है, कभी कभी अंत में हुआ भी जोड़ा जाता है, जैसे—पढ़ा, लिखा, धोया, खाया, पढ़ा हुआ नहाया हुआ इत्यादि।

प्रयोग—'पढ़े' ग्रन्थ को पढ़ने में मन नहीं लगता। पढ़ा-लिखा आदमी चतुर होता है। दूध का धोया लड़का। हाथी का खाया कैथ हो गया। पढ़ी हुई स्त्री गुणवती होती है। नहाया आदमी स्वच्छता लाभ करता है।

वर्तमानकालिक क्रियाद्योतक—'ना' का लोपकर ता प्रत्यय जोड़ने से बनता है। कभी-कभी अंत में हुआ भी जोड़ते हैं। जैसे—मरता, चलता, उड़ता, बहता, खाता हुआ, जाता हुआ इत्यादि।

प्रयोग—मरता क्या न करता। चलता खाता, चलती गाड़ी उलट गयी। मैं उड़ती चिड़िये को पहचाननेवाला हूँ। बहता पानी निर्मला। खाता हुआ आदमी। चलता हुआ घोड़ा। पहले वाक्य में मरता विशेषण है पर विशेष्य के रूप में व्यवहृत हुआ

है, इसका अर्थ है—मरनेवाला आदमी।

नोट—कभी-कभी क्रियाद्योतक विशेषण क्रिया की विशेषता बतलाने के कारण क्रियाविशेषण अव्यय के रूप में भी व्यवहृत होता है। प्रायः ऐसे अव्यय द्वित्व होकर आते हैं, दौड़ते दौड़ते थक गया। बैठे बैठे जी अकड़ गया इत्यादि।

तद्धितान्त शब्द

संज्ञा या विशेषण के रूप में व्यवहृत शब्दों के अंत में प्रत्यय लगाकर संज्ञा या विशेषण के नये शब्द बनाये जाते हैं, यहाँ पर यह ध्यान में रखना चाहिये कि संस्कृत के तत्सम शब्दों के अंत में संस्कृत के ही प्रत्यय संस्कृत-व्याकरण के नियमानुसार जोड़े जाते हैं तथा हिन्दी के शब्दों में हिन्दी के और उर्दू के शब्दों में उर्दू के।

संस्कृत तद्धितान्त शब्द

संस्कृत तत्सम संज्ञाओं के अंत में प्रत्यय लगाने से भाववाचक, अपत्यवाचक (नामवाचक) और गुणवाचक (विशेषण) और ये तीन प्रकार के शब्द बनते हैं। कभी-कभी प्रत्यय लगाने पर भी मूल शब्द के अर्थ में ही प्रत्ययान्त शब्द का भी प्रयोग होता है।

१—संज्ञाओं से बनी संज्ञाएँ और विशेषण

(Nouns and Adjectives derived from Nouns)

(क) भाववाचक—(Abstract Nouns)—

ता—मित्र से मित्रता, प्रभु से प्रभुता, मनुष्य से मनुष्यता गुरु से गुरुता आदि ।

त्व—प्रभुत्व, बन्धुत्व, मनुष्यत्व, दूतत्व आदि ।

अ (अण)—सुहृद से सौहार्द, मुनि से मौन ।

य—पण्डित से पाण्डित्य, दूत से दात्य, चोर से चौर्य आदि ।

(ख) अपत्यवाचक (Patronymic Nouns)—अपत्यवाचक संज्ञा किसी नाम या व्यक्तिवाचक में प्रत्यय जोड़ने से दोअर्थों में बनती है—एक सन्तान के अर्थ में दूसरे किसी अन्य अर्थ में ।

सन्तान अर्थ में—दशरथ से दाशरथि, वसुदेव से वासुदेव, सुमित्रा से सौमित्र, दिति से दैत्य, यदु से यादव, मनु से मानव, अदिति से आदित्य, पृथा से पार्थ, पाण्डु से पाण्डव, कुन्ती से कौन्तेय, कुरु से कौरव ।

अन्य अर्थों में—शिव से शैव, शक्ति से शाक्त, विष्णु से वैष्णव, रामानंद से रामानंदी, दयानंद से दयानंदी इत्यादि ।

(ग) गुणवाचक (Adjectives derived from Nouns)

इक—तर्क—तार्किक, न्याय—नैयायिक, वेद—वैदिक, मानस—मानसिक, सप्ताह—साप्ताहिक, नगर—नागरिक, लोक—लौकिक, दिन—दैनिक, उपनिवेश—औपनिवेशिक इत्यादि ।

य (यत्)—तालु—तालव्य, प्राक्—प्राच्य, ग्राम—ग्राम्य इत्यादि ।

मत, वत्—बुद्धि—बुद्धिमान (मती) श्री—श्रीमान् (मती), रूप—रूपवान (वती) इत्यादि ।

विन्—तेजस—तेजस्वी, मेधा—मेधावी, मानस्—मनस्वी, यशस्—यशस्वी ।

मय (मयट्)—... दयामय, धर्म्ममय ।

इन्—प्रणय—प्रणयी, ज्ञान—ज्ञानी, दुःख—दुःखी।

इत्—आनन्द—आनन्दित, दुःख—दुःखित, फल—फलित इत्यादि।

निष्ठ—कर्मनिष्ठ, धर्म्मनिष्ठ इत्यादि।

मूल अर्थ में—

सेना से सैन्य, चोर से चौर, त्रिलोक से त्रैलोक्य, मरुत से मारुत, भंडार से भांडार, कुतूहल से कौतूहल इत्यादि।

ऊपर के शब्दों में प्रत्यय लगने पर भी अर्थ में कोई विशेष परिवर्तन नहीं दीखता।

२—विशेषण से बनी संज्ञाएं

(Nouns derived from Adjectives)

संस्कृत तत्सम विशेषण शब्दों के अंत में प्रत्यय लगाकर जो संस्कृत तत्सम संज्ञाएँ बनाई जाती हैं वे प्रायः भाववाचक संज्ञा होती हैं, जैसे—

ता, त्व—मूर्खता, गुरुता, लघुता, बुद्धिमत्ता, वीरता, भीरुता, मधुरता, दरिद्रता (दारिद्र्य), उदारता, सहायता, महत्त्व, वीरत्व।

अण् प्रत्यय—गुरु से गौरव, लघु से लाघव इत्यादि।

हिन्दी में तद्धित

जिस प्रकार संस्कृत तत्सम शब्दों में तद्धित प्रत्ययों को जोड़ने से संज्ञाओं से संज्ञाएँ और विशेषण बनाते हैं उसी प्रकार तद्भव और हिन्दी के शब्दों में भी प्रत्ययों को जोड़ने से संज्ञा, विशेषण आदि बनाते हैं। तद्धित प्रत्ययान्त से बने शब्द इस प्रकार विभाजित किये जा सकते हैं—भाववाचक, ऊनवाचक, कर्तृवाचक, और सम्बन्धवाचक ये चार प्रकार की संज्ञाएँ और विशेषण।

(क) भाववाचक (Abstract Nouns):—संज्ञाओं या विशेषणों के अंत में आई, ई, पा, पन, वट, हट, त, स, नी आदि प्रत्ययों के जोड़ने से भाववाचक तद्धितीय संज्ञा होती है; जैसे—लड़काई, ललाई, बुराई, लम्बाई, चतुराई, बुढ़ापा, लड़कपन, छुटपन, बचपन, कड़ुवाहट, अमावट, रंगत, संगत, मिठास, खट्टास, चाँदनी इत्यादि।

(ख) ऊनवाचक (Diminutives) आ, या, क, डा, या, री, ली, ई इत्यादि प्रत्ययों को जोड़कर ऊनवाचक बनाते हैं; इस ढंग की संज्ञा से लघुता, ओछापन या छुटपन का बोध होता है; जैसे—बचवा, पिलुआ, ढोलक, टुकड़ा मुखड़ा, लोटिया, खटिया, डिबिया, कोठरी, छतरी, बट्टुली, रस्सी, डोरी, कटोरी इत्यादि।

(ग) कर्तृवाचक (Agentives)—आर, इया, ई, रा, वाला, हारा इत्यादि प्रत्ययों को जोड़कर बनाते हैं; जैसे—लुहार, सोनार, कुम्हार, अढ़तिया, मखनिया, तेली, योगी, भोगी, विलासी, कसेरा, सँपेरा, कोतवाल, गोवाला (ग्वाला), चूड़िहारा इत्यादि।

(घ) सम्बन्धवाचक (Relative Nouns)—आल, औती, जा आदि प्रत्ययों के योग से बनता है; जैसे—ससुराल, ननिहाल, कठौती, बपौती, भतीजा इत्यादि।

(ङ) विशेषण (Adjectives)—आ, आइन, आहा, ई, ऊ, ऐरा, या, ऐत, ल, ला, वेला, लु, लू, ही, वाल, वाला, वंत, वां, वान, हर, हरा, हा आदि प्रत्ययों के योग से बना है; जैसे—ठंढा, प्यासा, भूखा, गोबराइन, कसाइन, उतराहा, पछांहा, अरबी, फारसी अंगरेज़ी, देशी, विदेशी, देहाती, बनारसी, घरू, बज़ारू, पेटू, चचेरा, मौसेरा, घरैया, बनैया, कलकतिया, पटनिया,

मुँगेरिया, लठैत; विगरैल, खपरैल, बनैला, विषैला, घरेलू, दयालु, कृपालु, पहला, सुनहला, भंगेड़ी, गंजेड़ी, गयावाल, दिल्लीवाल, मोहनवाला, दयावंत, धनवंत, ग्यारहवाँ, तेरहवाँ, मतिमान, धीमान, छुतहर, सुनहरा, भुतहा।

उर्दू के कुछ प्रत्यय (Urdu suffixes)

ऊपर लिखा जा चुका है कि उर्दू के जो शब्द हिन्दी भाषा में व्यवहृत होते हैं उनमें उर्दू के ही प्रत्यय जोड़े जाते हैं। यहाँ पर उर्दू प्रत्यय से बने शब्द के कुछ उदाहरण दिये जाते हैं—

भाववाचक—गी, ई, आई प्रत्यय के योग से—जिन्दगी, बन्दगी, मर्दानगी, ताजगी, खुदगर्जी, उस्तादी, बेवफ़ाई, बेहयाई।

कर्तृवाचक—गर, गीर, ची, दार वीन आदि के योग से—कारीगर, तमाशगीर, यादगार, खजान्ची, मशालची, ज़मींदार, दफ़ादार, तमाशबीन।

सम्बन्धवाचक—आना, ई, दान आदि प्रत्ययों के योग से—जुर्माना, नजराना, हर्जाना, दस्ताना, आदमी, कलमदान, पिकदान, शमादान इत्यादि।

विशेषण—आना, ई, गीन, नाक, बान, मन्द, बर, शाही, दार आदि प्रत्ययों के योग से—दोस्ताना, सालाना, गमगीन, खतरनाक, दर्दनाक, मिहरबान, अक्लमंद, दौलतमंद, ताक़तवर, नादिरशाही, मज़ेदार, दग़ाबाज़ इत्यादि।

तद्धितीय क्रिया

(Verbs derived from nouns)

कुछ ऐसे विशेष्य हैं जिनमें प्रत्यय लगाने से क्रिया बनती है।

जैसे—लाज-लजाना, गर्म-गर्माना, लात-लतियाना, घात-घतियाना, रंग-रंगाना, जूता-जुतियाना इत्यादि।

विशेष्य से विशेषण और विशेषण से विशेष्य

एक प्रत्यय को बदलकर दूसरा प्रत्यय जोड़ने से अथवा प्रत्ययों के जोड़ने से या निकाल देने से विशेषण से विशेष्य और विशेष्य से विशेषण बनाये जाते हैं।

कृदन्त से बने विशेष्य से विशेषण—भय से भीत, जय से जीत, खेल से खिलाड़ी इत्यादि।

कृदन्त से बने विशेषण से विशेष्य—लड़ाकू से लड़ाई, लुटेरा से लूट, झगड़ालू से झगड़ा, डरू से डर इत्यादि।

तद्धित से बने विशेष्य से विशेषण—समाज से सामाजिक, पेट से पेटू, भारत से भारतीय, देश से देशीय इत्यादि।

तद्धित से बने विशेषण से विशेष्य—धनी से धन, आनन्दित से आनन्द, ग़रीबी से गरीब, ऐतिहासिक से इतिहास इत्यादि।

अभ्यास

१—निम्नलिखित विशेषणों से विशेष्य और विशेष्यों से विशेषण बनाओ—

Make nouns from the Adjectives and Adjectives from the nouns in the following words—

गौरव, मनोहर, स्वर्ग, सरल, छवि, विनय, न्याय, निर्दय, मूर्त्ति, नारी, प्यासा, दौलत, दान, कृपण, यत्न, विश्वास, ऐश्वर्य, सुखद, दुःख, पीला और ललाई।

२—नीचे लिखे शब्दों से विशेषण बनाओ—Make Ad-

jectives in the following words:—खाना, हँसना, रूप, ज्ञान, हृदय, शोभा, अग्नि, चन्द्र, छवि और नीति।

३—नीचे लिखे शब्दों से संज्ञा बनाओ—Make nouns in the following words:—

बाँचना, घेरना, विस्तृत, संकुचित, भीषण, लाल, विमल, धार्म्मिक, हृदयहीन, चतुर।

४—निम्नलिखित विशेषणों के साथ उपयुक्त संज्ञाओं को मिलाओ—Supply the appropriate nouns after the following Adjectives:–सायंकालीन, अभूतपूर्व, दुर्लंघ्य, लोमहर्षण, अपरिमित, वीभत्स, अनिर्वचनीय, हृदय-विदारक।

(नार्थब्रुक हाई स्कूल)।

समास-द्वारा बने शब्द

(Compound words)

दो शब्दों को मिलाकर जो एक शब्द बनाया जाता है उसे सामासिक शब्द कहते हैं। संस्कृत भाषा में समास व्याकरण का एक मुख्य अङ्ग माना जाता है। संस्कृत के बहुत से सामासिक शब्द हिन्दी में व्यवहृत होते हैं। समास-द्वारा बने हिन्दी या संस्कृत के तत्सम शब्द छः भागों में विभक्त किये जा सकते हैं।

१—तत्पुरुष

जिस सामासिक शब्द का अन्तिम खंड प्रधान हो उसमें तत्पुरुष समास रहता है, जैसे—जीवनधन अर्थात् जीवन के धन। इस प्रकार के सामासिक शब्द के पूर्व खंड में सम्बोधन और कर्त्ता को छोड़कर अन्य कारकों में से किसी एक का चिह्न गुप्त रूप से रहता है। जैसे—गंगाजल (गंगा का जल), गुरूपदेश

(गुरु का उपदेश), शोकाकुल (शोक से आकुल) इत्यादि। इस हिसाब से तत्पुरुष के छः भेद होते हैं—पूर्व खंड में कर्मकारक रहने से द्वितीया, करण रहने से तृतीया, सम्प्रदान रहने से चतुर्थी, अपादान रहने से पंचमी, सम्बन्ध रहने से षष्ठी और अधिकरण रहने से सप्तमी तत्पुरुष के सामासिक शब्द होते हैं।

उदाहरण—

कर्मकारक में (द्वितीया)—शरण को आगत, शरणागत, चिड़ियों को मारने वाला, चिड़ीमार।

करण में (तृतीया)—शोक से आकुल, शोकाकुल; धर्म से अंधा, धर्मान्ध; जन्म से अंधा, जन्मांध।

सम्प्रदान में (चतुर्थी)—ब्राह्मण के लिए देय, ब्राह्मणदेय।

अपादान में (पंचमी)—जीवन से मुक्त, जीवनमुक्त; देश से निकाला, देशनिकाला; पाप से भ्रष्ट, पापभ्रष्ट; धर्म से च्युत, धर्मच्युत।

सम्बन्ध में (षष्ठी)—गंगा का जल, गंगाजल; आम का रस, आमरस; तिल की बड़ी, तिलौरी।

अधिकरण में (सप्तमी)—ध्यान में मग्न, ध्यानमग्न; कर्म में निरत, कर्मनिरत; रथ में आरूढ़ रथारूढ़ इत्यादि।

२—कर्मधारय

जो शब्द विशेष्य और विशेषणों या उपमान और उपमेय के समानाधिकरण से बना हो उसमें कर्मधारय समास होता है; जैसे—नील है जो गाय, नीलगाय; चन्द्र के समान है जो मुख, चन्द्रमुख; फुली हुई है जो बड़ी, फुलबड़ी।

३—बहुव्रीहि

जिस सामासिक शब्द का कोई खंड प्रधान न हो बल्कि समस्त पद का कोई विशेष अर्थ प्रदर्शित हो उसमें बहुव्रीहि समास रहता है; जैसे—

चन्द्र है भाल पर जिनके—चन्द्रभाल (महादेव)।
चक्र है हाथ में जिनके—चक्रपाणि (विष्णु)।
चार हैं भुजाएँ जिनकी—चतुर्भुज (विष्णु)।
चार है आनन जिनके—चतुरानन (ब्रह्मा)।

४—द्विगु

जिस सामासिक शब्द का पूर्व पद संख्यावाची हो उसमें द्विगु समास रहता है। इसे संख्यावाचक कर्मधारय भी कह सकते हैं और जहाँ विशेष अर्थ प्रदर्शित करे वहाँ बहुव्रीहि भी हो जाता है; जैसे—त्रिकोन, चतुर्भुज (चार भुजावाले क्षेत्र के अर्थ में द्विगु और विष्णु के अर्थ में बहुव्रीहि है) चौपाई, षड्पद, चौहट्ट, चौराहा इत्यादि।

५—द्वन्द्व

जिन सामासिक शब्दों में सभी खंड प्रधान हों और समास होने पर दोनों के बीच का योजक शब्द लुप्त रहे उनमें द्वन्द्व समास लाते हैं, जैसे—

स्त्री और पुरुष—स्त्रीपुरुष। माता और पिता—मातापिता। अहन् और निशा—अहर्निशि। लोटा और डोरी—लोटाडोरी। तन, मन और धन—तन-मन-धन।

६—अव्ययी भाव

जिस सामासिक शब्द में पूर्वखंड अव्यय हो और समस्त-शब्द क्रियाविशेषण अव्यय के रूप में आवे उसमें अव्ययीभाव समास रहता है; जैसे—प्रतिदिन, रातोरात, यथाशक्ति, यथा-विधि, यथासाध्य।

(७) इन छः समासों के अतिरिक्त नञ् समास भी होता है। निषेधार्थक के योग में जो सामासिक शब्द बनते हैं उनमें प्रायः नञ् समास रहता है; जैसे—अनन्त, अनाथ, अनभिज्ञ, अनादि इत्यादि।

पुनरुक्त शब्द

पुनरुक्त शब्द चार भागों में विभक्त किये जा सकते हैं। (१) एक ही शब्द को दुहराना, (२) एक ही अर्थवाले शब्दों को मिलाना, (३) एक ही श्रेणी या विभाग के शब्दों को मिलाना और (४) विपरीत अर्थवाले शब्दों को मिलाना।

१—एक ही शब्द को दुहराना

बैठे-बैठे, रोज बरोज, दिन प्रति-दिन, राम-राम, छी-छी, देख देखकर, हरा-हरा, लाल-लाल, धीरे-धीरे, वन-वन, घर-घर, भाँति-भाँति के, जब-जब, तब-तब इत्यादि।

२—प्रायः एकार्थक शब्दों का योग

आमोद-प्रमोद, मणि-मुक्ता, मान-मर्यादा, धन-धान्य, दीन-दुखी, तर्क-वितर्क, आकार-प्रकार, कथा-वार्त्ता, काम-काज, दया-माया, दौड़-धूप, बोल-चाल, रीति-रिवाज, सेवा-शुश्रूषा, बन्धु-बान्धव, दुखी-सुखी, सखा-मित्र, जीव-जन्तु; ओत-प्रोत, मद-मत्सर इत्यादि।

(३) एक ही विभाग के शब्दों का योग।

आमोद-प्रमोद, आहार-विहार, भोग-विलास, फल-फूल, भूख-प्यास, अन्न-वस्त्र, खाना-कपड़ा, रंग-ढंग, हाथ-पाँव, हँसी-खुशी, दूध-दही, वर-कन्या इत्यादि।

(४) भिन्नार्थक शब्दों का योग।

ऊँच-नीच, छोटा-बड़ा, बाल-वृद्ध, नया-पुराना, संयोग-वियोग, लेन-देन, आय-व्यय, जीवन-मरण, धर्माधर्म, रात-दिन, हिता-हित, गुण-अवगुण, हर्ष-विषाद, दुख-सुख, जमा-खर्च, साधु-असाधु, सुजाति-कुजाति, लाभालाभ, जयाजय, जय-पराजय, सन्धि-विग्रह आदि।

नोट—(१) ऊपर दिखाये गये पुनरुक्त शब्दों के चार विभागों में से पहले विभाग में प्रायः अव्ययीभाव समास रहता है और बाकी तीन विभागों में आये शब्दों में द्वन्द्व समास रहता है जिनका संयोजक शब्द और गुप्त है।

(२) सामासिक शब्दों को लिखते समय यह ध्यान में रखना चाहिये कि जिन शब्दों के दोनों खंडों में सन्धि हो जाय उन्हें तो मिला कर लिखना ही चाहिये पर जिन शब्दों के दोनों खंडों में सन्धि न हो उन्हें भी अलग अलग लिखना ठीक नहीं है क्योंकि जब दो पृथक शब्दों के योग से एक सामासिक शब्द बन जाता है तो दोनों के पृथक्-पृथक् लिखने से दो पृथक् शब्दों का भ्रम हो सकता है। मिलाकर लिखने से वह भ्रम जाता रहेगा। हाँ, कोई-कोई लेखक दोनों खंडों के बीच विभाजन-चिह्न (-) का प्रयोग करते हैं जैसा कि ऊपर के शब्दों में भी प्रायः दिया गया है। पुनरुक्त शब्दों में भी यही नियम लागू होना चाहिये।

कुछ सामासिक शब्दों के उदाहरण

बहुत से ऐसे शब्द हैं जो प्रत्यय के समान शब्दों के अन्त में जुट जाने से सामासिक शब्द बन जाते हैं, ऐसे शब्दों के प्रयोग में कभी-कभी अच्छे-अच्छे लेखक तक भूल कर बैठते हैं, उनकी जानकारी के लिए कुछ प्रयोग नीचे दिये जाते हैं—

अन्तर—अर्थान्तर, एकान्तर, द्वीपान्तर, कालान्तर, सीमान्तर, लोकान्तर, देहान्तर, देशान्तर, पाठान्तर, विषयान्तर, शोकान्तर आदि।

अनुसार—आज्ञानुसार, कथनानुसार, इच्छानुसार, आदेशानुसार, रीत्यनुसार, (कोई-कोई प्रयोग ठीक न जानने के कारण रीत्यनुसार को रीत्यानुसार लिख देते हैं)।

अनन्तर—गमनानन्तर, तदनन्तर इत्यादि। अनन्तर शब्द को भी प्रत्यय के रूप में व्यवहार करने में अक्सर लोग भूल करते हैं। कोई-कोई उपर्युक्त दोनों शब्दों को गमनान्तर और तदन्तर लिख देते हैं।

अर्थी—भोजनार्थी, परीक्षार्थी, विद्यार्थी, कामार्थी परमार्थी, स्वार्थी, दर्शनार्थी, विचारार्थी, धर्म्मार्थी इत्यादि।

अन्त—दिनान्त, कर्मान्त, विघ्नान्त, कुलान्त आदि।

ग्रहण—चन्द्रग्रहण, सूर्य्यग्रहण, धनग्रहण, पाणिग्रहण, वस्त्रग्रहण, भावग्रहण इत्यादि।

निष्ठ—कर्मनिष्ठ, धर्मनिष्ठ, कर्त्तव्यनिष्ठ, न्यायनिष्ठ आदि।

परायण—कर्त्तव्यपरायण, न्यायपरायण, धर्मपरायण आदि।

पटु—वाक्यपटु, ज्ञानपटु, बुद्धिपटु, कार्यपटु आदि।

रक्षा—अर्थरक्षा, कीर्तिरक्षा, धनरक्षा, मानरक्षा, भावरक्षा आदि।

शील—उन्नतशील, कर्त्तव्यशील, धर्मशील, परिवर्तनशील आदि।

साधन—कार्यसाधन, अर्थसाधन, मन्त्रसाधन आदि।

निधान—गुणनिधान, यत्ननिधान, कृपानिधान आदि।

विशारद—राजनीतिविशारद, गुणविशारद, विद्या-बुद्धि-विशारद।

ज्ञान—आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान, तत्त्वज्ञान, शास्त्रज्ञान आदि।

पति—नरपति, रमापति, प्राणपति, सेनापति आदि।

अभ्यास (Exercise)

१—नीचे लिखे सामासिक शब्दों में समास बताओ और विग्रह करो। Expand and name the 'Samas' in the following compound words—धर्मात्मा, प्रजापति, गौरीशङ्कर, विद्यावारिधि।
(प्रथमा परीक्षा १९७१ सं०)

२—नीचे के प्रत्येक शब्द को लेकर जितना हो सके संयुक्त शब्द बनाओ—Make as many compound words as you can with each of the following words:—वत्सल, भाजन मातृ, शाला।

३—नीचे लिखे शब्दों के सामासिक शब्द बनाओ। Make the Compound words of the following:—

राम और कृष्ण, त्रि, लोक, कमल के ऐसा है नयन जो, लक्ष्मी के पति, हृदय है उदार जो।

तृतीय परिच्छेद

शब्दों के अर्थ

शब्दों में अभिधा, लक्षणा और व्यञ्जना नामक तीन प्रकार की शक्तियाँ रहती हैं। इन्हीं तीनों शक्तियों के द्वारा शब्दों या वाक्यों का अर्थ जाना जाता है।

जिस शक्ति के द्वारा शब्द का नियत या सीधासादा अर्थ जाना जाता है उसे अभिधा शक्ति कहते हैं। अभिधा द्वारा जिस अर्थ का बोध होता है उसे वाच्यार्थ कहते हैं; जैसे— गौ दूध देती है; यहाँ गौ का सीधा अर्थ गाय है इत्यादि।

लक्षणा—जिस अर्थ-शक्ति के द्वारा सीधासादा अर्थ न लगाकर, किसी विशेष प्रयोजन अथवा मतलब के कारण, कोई निकट सम्बन्ध रखनेवाला दूसरा अर्थ लिया जाय उसे लक्षणा कहते हैं। लक्षणा-शक्ति के द्वारा जो अर्थ जाना जाता है उसे लक्ष्यार्थ कहते हैं; जैसे—राम भाड़े का टट्टू है। यहाँ 'भाड़े का टट्टू' का अर्थ 'भाड़े के टट्टू के सदृश' है; क्योंकि राम जो एक आदमी है, टट्टू कैसे हो सकता है? अर्थात् वाच्यार्थ से साफ़ मतलब न निकलने पर लक्षणा-शक्ति के द्वारा अर्थ किया गया। उसी प्रकार 'गंगावासी' का सीधा अर्थ होता है

'गंगा में बसनेवाला'; पर लक्षणा-शक्ति से अर्थ करने पर इसका अर्थ हुआ गंगा-तट-वासी। लक्षणा-शक्ति कई प्रकार की होती हैं। ऊपर के उदाहरण में प्रयोजनवती लक्षणा है। कभी-कभी लक्षणा-शक्ति के द्वारा वाच्यार्थ के विपरीत अर्थ किया जाता है ऐसी लक्षणा को विपरीतलक्षणा कहते हैं; जैसे किसी कुरूप को लक्ष्यकर अगर यह कहा जाय कि—वाह! यह कितना सुन्दर है? तो यहाँ विपरीतलक्षणा के द्वारा अर्थ किया जायगा कि वह कुरूप है।

व्यञ्जना—जिस शक्ति के द्वारा वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ को छोड़कर एक और अर्थ जाना जाता है उसे व्यञ्जना-शक्ति कहते हैं। व्यञ्जना-शक्ति के द्वारा जो अर्थ जाना जाता है उसे व्यङ्गार्थ कहते हैं; जैसे, तलवार चलने लगी'। तलवार आप से आप चल नहीं सकती। इसलिए इस वाक्य के कहने का तात्पर्य्य हुआ लड़ाई होने लगी। उसी प्रकार 'खून की नदियाँ बह चलीं' का अर्थ हुआ कि असंख्य लोग मारे गये। 'मुर्गा बोलने लगा' का अभिप्राय हुआ भोर हो गया। यहाँ पर व्यञ्जना-शक्ति की सहायता से ही तीनों वाक्यों का अर्थ किया गया। कभी-कभी सुननेवालों की पृथकता के कारण एक वाक्य के कई व्यंगार्थ हो सकते हैं।

व्यञ्जना-शक्तियुत वाक्य लिखने में प्रतिभा की विशेष आवश्यकता पड़ती है। प्रतिभा-सम्पन्न लेखक ही व्यञ्जना-शक्ति-युत भाषा लिख सकते हैं।

वाच्यार्थ

वाच्यार्थ जानने के लिए तीन मुख्य साधन हैं। पहला

शब्दों के पर्यायवाची शब्द या प्रतिशब्द, दूसरा व्युत्पत्ति के द्वारा और तीसरा पारिभाषिक अर्थ द्वारा।

पर्यायवाची, प्रतिशब्द या (*Synonyms*)—एक शब्द के लिए उसी अर्थ में जो दूसरे शब्द आते हैं उन्हीं को प्रतिशब्द कहते हैं ; जैसे—कमल शब्द के वनज, सरोज, अरविंद, पंकज, तामरस, मृणाल, अम्बुज, पद्म, राजीव, कोकनद, आदि शब्द प्रतिशब्द हैं। उसी प्रकार चन्द्र के लिए, शशि, शशांक, निशिपति आदि बहुत से प्रतिशब्द प्रयुक्त होते हैं। प्रतिशब्द के द्वारा अर्थ और व्याख्या करने में बड़ी सुविधा होती है।

प्रतिशब्द लिखते समय यह बराबर ध्यान में रखना चाहिये कि जिस शब्द का प्रतिशब्द लिखना हो उस शब्द का प्रतिशब्द उससे अधिक सरल और व्यावहारिक हो। साथ ही यह भी नहीं भूलना चाहिये कि विशेष्य का प्रतिशब्द विशेष्य और विशेषण का प्रतिशब्द विशेषण के ही रूप में रहे ; जैसे—भानु का अर्थ भास्कर न लिखकर सूर्य्य ही लिखना तथा कंचन का अर्थ हिरण्य न लिखकर सोना लिखना ही उचित है। उसी प्रकार तृषित का अर्थ प्यासा, क्षुधापीड़ित का अर्थ भूखा और मनोरथ का अर्थ इच्छा ही होना चाहिये—प्यास, भूख और इच्छित नहीं। यहाँ पर विस्तार-भय से प्रतिशब्द के अधिक उदाहरण नहीं दिये जा रहे हैं। प्रतिशब्द जानने के लिए बराबर 'शब्दकोष' देखते रहना आवश्यक है।

व्युत्पत्त्यर्थ (Etymological meaning)—यौगिक, योगरूढ़, प्रत्यययुत तथा सामासिक शब्दों को खंड-खंड कर देने से उनके अर्थ सहज में ही समझ में आ जाते हैं जिसे

व्युत्पत्त्यर्थ कहते हैं ; जैसे—विद्यालय=जो विद्या का आलय या घर है, अर्थात् पाठशाला। चन्द्रभाल=जिसके भाल या माथे पर चन्द्र है अर्थात् महादेव। शैव=जो शिव के उपासक हैं। पाठक=जो पाठ करते हैं।

पारिभाषिक अर्थ (Implied meaning)—हिन्दी में कुछ ऐसे शब्द व्यवहृत होते हैं जिनके पर्यायवाची शब्द या तो होते ही नहीं, या होते भी हैं तो भावशून्य रूप में, ऐसे शब्द पारिभाषिक शब्द कहलाते हैं। उनके अर्थ जानने के लिए न तो व्याख्यार्थ ही काम में आता है और न व्युत्पत्त्यर्थ। अतः ऐसे शब्दों की स्पष्ट परिभाषा करने से ही उनके अर्थ समझ में आ सकते हैं।

विज्ञान, साहित्य, कला, भूगोल, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, दर्शनशास्त्र आदि विषयों में पारिभाषिक शब्द का प्रयोग अक्सर रहा करता है। ऐसे शब्द अधिकतर संस्कृत के तत्सम शब्द होते हैं। कुछ विदेशी भाषा के तत्सम पारिभाषिक-शब्दों का भी हिन्दी में प्रयोग होता पाया जाता है।

कुछ पारिभाषिक शब्द—

ग्रह, नक्षत्र, कक्षा, धूरी, उपकूल, अन्तरीप, उपनिवेश, प्रायद्वीप, रस, भाव, विभाव, अलंकार, सुधार (Reformation), सभ्यता (Culture), पुरातत्व, कला (Art), राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, नागरिक (Citizen), सरकार (Government), उपयोगिता (Utility), ज़मीन (Land), श्रम (Labour), विनिमय (Exchange), पूंजी (Capital) साम्राज्यवाद, प्रजातन्त्र, साम्यवाद, व्यवसाय (Industry), अध्यवसाय, मनोविज्ञान इत्यादि।

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों के प्रतिशब्द लिखो।

Write the Synonyms of the following.

परिताप, करुणा, उर, तुरग, अश्व, गज, उदधि।

२—नीचे लिखे शब्दों में से प्रत्येक के पाँच-पाँच प्रतिशब्द लिखो।

Write the five Synonymous words of each of the following words. चन्द्र, चन्द्रिका, फूल, वसन्त, राजा, नर, सूर्य, मृत्यु।

३—नीचे लिखे शब्दों के व्युत्पत्त्यर्थ लिखो।

Write the Etymological meanings of the following words—हृदय-विदारक, धर्मपरायण, चन्द्रमौलि, पीताम्बर।

४—नीचे लिखे शब्दों के पारिभाषिक अर्थ लिखो।

Write the Implied meanings of the following.

अलंकार, शील, भाषा, व्याकरण, ग्रह, कक्षा।

भिन्नार्थक शब्द (Homonyms)

कोई-कोई शब्द दो एक अन्य शब्द से ध्वनि और उच्चारण में प्रायः समता रखते हैं परन्तु उनके मूल में अन्तर पड़ता है जिससे उनके अर्थ में भी अन्तर पड़ जाता है—ऐसे शब्द भिन्नार्थक शब्द कहलाते हैं। उदाहरण—

आगा=अगवाड़ा (Front) हिन्दी।

आग़ा=सर्दार (Leader) फ़ारसी।

आन=लाज, दूसरा (Shame) (Other) हिन्दी।

आन=समय (Time) अरबी।

आम=फल विशेष (Mango) हिन्दी।

आम=साधारण (Common) अरबी।
कन्द=जड़, मूल, (Root) संस्कृत।
क़न्द=मिश्री (Sugarcandy) फारसी।
कफ़=फेन (Foam) फारसी।
कफ़=कमीज का कफ़ (Cuff) अरबी।
कुन्द=फूल विशेष (A kind of flower) संस्कृत।
कुन्द=मंद, बोथरा (Dull) अरबी।
कुल=वंश (Family) संस्कृत।
कुल=सब (Whole) अरबी।
कै=कितना (How many) हिन्दी।
क़ै=वमन (Vomiting) अरबी।
कोष=भंडार (Treasury) संस्कृत।
कोश=दो मील (Two miles) फारसी।
कान=अंगविशेष (Ear) हिन्दी।
कान=कृष्ण (Krishna) अपभ्रंश।
कमान=धनुष (Bow) संस्कृत।
कमान=कामपर (Labour) देशज—(यह शब्द जेल में प्रयुक्त होता है)
खैर=अच्छा (Well) फारसी।
खैर=काठ विशेष (A kind of wood) हिन्दी।
गौर=गोरा (Fair complexioned) संस्कृत।
ग़ौर=ध्यान (Close attention) अरबी।
चारा=घासादि (Forage) हिन्दी।
चारा=उपाय (Means) फारसी।
जाल=जाल, माया (Net, illusion) संस्कृत।

जाल=फरेब (Deciet) अरबी ।
तूल=रुई (Cotton) संस्कृत ।
तूल=तुलना (Comparison) हिन्दी ।
तूल=लम्बाई (Length) अरबी ।
झख=मछली (Fish) संस्कृत ।
झख=खीझना—हिन्दी ।
पट=कपड़ा, परदा (Cloth, cream) संस्कृत ।
पट=किवाड़ (Shutter), तुरत (Atonce) हिन्दी ।
पर=पराया, दूर, किन्तु आदि—संस्कृत ।
पर=अधिकरण कारक का चिन्ह (On) हिन्दी ।
पर=पंख (Weather) फ़ारसी ।
रास=क्रीड़ा संस्कृत ।
रास=बागडोर (Rein) हिन्दी ।
रास=अन्तरीप (Cape) फारसी ।
शकल=टुकड़ा—संस्कृत ।
शकल=चेहरा (Appearance) फ़ारसी ।
सर=तालाब (Pond) संस्कृत ।
सर=सिर (Head) फ़ारसी ।
सर=महाशय (Sir) अँगरेज़ी ।
हाल=पहिये का हाल—हिन्दी ।
हाल=विवरण, अवस्था—अरबी ।
हाल=तरावट देशज (ग्रामीण प्रयोग) ।
हार=माला (Garland) संस्कृत ।
हार=पराजित (Defeat) हिन्दी ।
सन=दसवीसन (A. C.) संस्कृत ।

सन=पौधाविशेप हिन्दी।
वान=आदत— (Habit) हिन्दी।
वाण=तीर (Arrow) संस्कृत।
आराम=विश्राम—(Rest) फ़ारसी।
आराम=बगीचा—(Garden) संस्कृत।
बाग=बगीचा (Garden) संस्कृत।
बाग=बागडोर (Rein) फ़ारसी।

एक शब्द के अनेक अर्थ (Apparent Homonyms)

भिन्नार्थक शब्द का मूल भी भिन्न-भिन्न रहता है पर कुछ ऐसे भी शब्द हैं जो मूल या उद्गम-भिन्न न होने पर भी भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होते हैं। जैसे—

अर्क=सूर्य्य, अकवन।
अंक=चिन्ह, गोद, संख्या, नाटक का परिच्छेद।
अर्थ=धन, मतलब, कारण, निमित्त आदि।
अज=बकरा, ब्रह्मा।
अक्ष=कील, आँख।
अहि=साँप, कष्ट, सूर्य्य।
अच्युत=कृष्ण, विष्णु, स्थिर, अविनाशी।
अनन्त=विष्णु, सर्पों का राजा, आकाश, जिसका अंत न हो।
अरुण=लाल, सूर्य्य, सूर्य्य का सारथी।
कृष्ण=काला, कृष्ण भगवान।
कर=हाथ, सूंड़, किरण, मालगुजारी।
काम=कार्य, कामदेव।

कुशल=कुशलक्षेम, चतुर।
कर्ण=नाम विशेष, कान।
कनक=सोना, धतूरा।
कौरव=गीदड़, धृतराष्ट्रादि।
कैरव=कमल, कुमुद आदि।
कबंध=राक्षस विशेष, पेटी।
क्षमा=माफी, पृथ्वी।
खर=दुष्ट, गधा; राक्षस विशेष।
खग=राक्षस, पक्षी। खल=दुष्ट, दवाई का खल।
गो=किरण, इन्द्रिय, स्वर्ण, गाय, स्वर्ग।
गुरु=शिक्षक, ग्रह विशेष, देवताओं के गुरु, श्रेष्ठ, भारी।
गोत्र=परिवार, पहाड़। गुण=रस्सी, स्वभाव, सत, तम और रज।
गण=समूह, मनुष्य, भूत प्रेतादि शिवगण, पिंगलगण।
गति=चाल, हालत, मोक्ष।
घन=बादल, घना, जिसमें लम्बाई, चौड़ाई और मुटाई हो।
घाम=धूप, पसीना। छन्द=इच्छा, पद।
जीवन=प्राण, पानी, जीविका।
जलज=कमल, मोती, सेमार आदि।
जलधर=बादल, समुद्र। जीमूत=बादल, इन्द्र, पर्वत।
झक=क्रोध, लहर। ठाकुर=देवता, नाई, ब्राह्मण।
तत्व=मूल, यथार्थ, ब्रह्म, पंचभूत।
तनु=दुबला, शरीर। तात=प्यारा, पुत्र, पिता आदि।
तमचर=राक्षस, उल्लू पक्षी।
तारा=आँख की पुतली, नक्षत्र, बालि की स्त्री। बृहस्पति की स्त्री।

ताल=पोखर, ताड़, बाजे का ताल, हरताल।
द्विज=पक्षी, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य।
द्रोण=कौआ, द्रोणाचार्य। दंड=डण्डा, सजा।
धन=सम्पत्ति, जोड़। धान्य=धान, अनाज।
नग=पत्थर विशेष, पहाड़। नाग=हाथी, सर्प।
निशाचर=राक्षस, प्रेत, उल्लू, चोर। नकुल=नेवला, नाम विशेष।
पक्ष=दल, पख, पंख बल। पय=दूध, पानी।
पोत=स्वभाव, नौका, बचत। पतंग=गुड्डी, चील, सूर्य्य।
पद=स्थान, पैर। पत्र=पत्ता, चिट्ठी। पृष्ठ=सफ़ा, पीठ।
फल=परिणाम, फलादि। बाण=तीर, बाणासुर।
बाणी=सरस्वती, बोली। भीष्म=कठिन, नाम विशेष।
महावीर=हनुमान, बड़ा भारी योद्धा।
युधिष्ठिर=पर्वत, नाम विशेष।
रस=षट्रस, नवरस, स्वर्णादि की भस्म, स्वाद, सार, पारा, प्रेम।
लवण=खारा, लवणासुर। विधि=ब्रह्मा, भाग्य, रीति।
वर्ण=जाति, रंग, अक्षर। शिव=मंगल, भाग्यशाली, महादेव।
शस्य=धान, अन्नादि। सैन्धव=नमक सिन्धु का विशेषण, घोड़ा।
सारंग=राग विशेष, मोर, सर्प, हरिण, पानी, देश विशेष, पपीता, हाथी, हंस, कमल, भूषण, फूल, रात, दीपक, शोभा, शंख, स्त्री, कपूर आदि।
सुधा=अमृत, पानी। हंस=प्राण, पक्षिविशेष।
हरि=ईश्वर, हाथी, साँप, अश्व, वायु, चन्द्र, मेढक, तोता,

यमराज, बानर, मोर, कोयल, हंस, धनुष, आग, पहाड़ इत्यादि।

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों का भिन्न-भिन्न अर्थ लिखो।

Illustrate the different meanings of the following words वारी, अंकुश, हरि, पात्र, पद, गो, ऋण गिरा, योग, जीवन, भूत, कनक, सुवर्ण, शिव, नाग, तारा, तीर।

श्रुतिसम भिन्नार्थक शब्द

(Paronyms)

बहुत से ऐसे भी शब्द हैं जिनके उच्चारण प्रायः एक से रहते हैं पर अर्थ में भिन्नता रहती है। लिखने में भी नाम-मात्र का अंतर रहता है। कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

अंश=हिस्सा; अंस=स्कन्ध। अंगुल=अंगुली; अंगूर=फल-विशेष। असन=भोजन; आसन=बैठक। अणु=कण; अनु=उपसर्ग। अनिल=वायु; अनल=आग। अभिराम=सुन्दर; अविराम=बिना विश्राम। इति=समाप्ति; ईति=शस्यविघ्न। कूल=किनारा; कुल=वंश, सभी। कृत=किया हुआ; क्रीत=खरीदा हुआ। केशर=कुंकुम; केसर=सिंह की गर्दन पर का बाल। चिर=दीर्घ; चीर=वस्त्र। चर=नौकर; चार=चार अंक। चूत=आम का वृक्ष; च्युत=पतित। तरणि=सूर्य्य; तरणी=नाव; तरुणी=स्त्री। दुर=दुत्कार; दूर=आगे। द्विप=हाथी; द्वीप=टापू। दूत=सम्वाददाता; द्यूत=जूआ। नीड़=खोंता; नीर=पानी। पानी=जल; पाणि=हाथ। प्रसाद=अनुग्रह; प्रासाद=महल। प्रकृत=यथार्थ; प्रकृति=भाषा विशेष। वसन=वस्त्र; व्यसन=वासना।

बली=बलशाली; बलि=बलिदान । विना=अभाव; वीणा=बाजा विशेष ।

शम=शान्ति, सम=बराबर । दमन=दबाना; दामन=छोर ।

वेलि=लता; वेली=फूल विशेष । निशान=झण्डा; निशान=चिह्न ।

शङ्कर=महादेव; सङ्कर=जारज । दिन=रोज; दीन=गरीब ।

लक्ष=लाख; लक्ष्य=निशाना । शव=लाश; सब=सभी ।

शर=तीर; सिर=माथा; सर=तालाब ।

सूर=सूर्य्य; सुर=देवता; शूर=वीर ।

सुत=लड़का; सूत=सारथी । सुमन=फूल; सुअन=पुत्र ।

शुचि=पवित्र; सूची=तालिका । सूचि=सूई ।

अभ्यास

१—नीचे के शब्दों में वाक्ययोजना द्वारा प्रभेद बताओ ।

Form sentences to show differences between the following words असन और आसन । सुत और सूत । लक्ष्य और लक्ष । प्रसाद और प्रासाद । सूर, सुर और शूर । इन्द्रिय और इन्द्र ।

एकार्थक शब्दों में अर्थ-भेद

(Distinction between synonymous terms)

एक ही अर्थ को बोध करनेवाले दो या दो से अधिक शब्दों के अर्थ में कहीं-कहीं सूक्ष्म भेद रहता है । इन सूक्ष्म भेदों को भलीभाँति समझ-बूझ कर ही वैसे शब्दों का प्रयोग करना उचित है, अन्यथा कभी-कभी अर्थ का अनर्थ होने की सम्भावना हो

जाती है। यहाँ पर कुछ ऐसे एकार्थक शब्दों के सूक्ष्म भेद का दिग्दर्शन करा दिया जाता है—

अलौकिक और अस्वाभाविक—

अलौकिक—जो लोक और समाज में पहले नहीं देखा गया हो।

अस्वाभाविक—जो ईश्वरीय नियमों के विरुद्ध हो।

नोट—अलौकिक का अस्वाभाविक होना सम्भव है पर, अस्वाभाविक अलौकिक नहीं हो सकता।

अज्ञान और अभिज्ञ—

अज्ञान—जो स्वाभाविक बुद्धि से हीन हो।

अनभिज्ञ—जिसे समझने का कभी मौका ही नहीं मिला हो।

अहंकार, अभिमान, गर्व, दर्प, गौरव, और दम्भ—

अपने को उचित से अधिक समझना अहंकार है, अपने को बड़ा और दूसरों को छोटा समझना अभिमान है, रूप, धन, विद्या आदि के मद में चूर रहना गर्व है, दूसरों को घृणा की दृष्टि से देखना ही दर्प है, यथार्थ महत्ता के लिए अभिमान करना गौरव है और झूठ पाखण्ड करना दम्भ है।

अस्त्र और शस्त्र—

जिस हथियार से फेंक कर प्रहार किया जाय वह अस्त्र है। जैसे बाण आदि और जिसे हाथ में रखकर प्रहार किया जाय वह शस्त्र है; जैसे तलवारादि।

अज्ञ और मूर्ख—

जिसकी बुद्धि जड़ हो वह मूर्ख और जिसे कुछ ज्ञान ही न हो उसे अज्ञ कहते हैं।

आधि और व्याधि—

मानसिक कष्ट को आधि और शारीरिक कष्ट को व्याधि कहते हैं।

दया और कृपा—

दूसरे के कष्ट को निवारण करने की स्वाभाविक भावना को दया और छोटे के प्रति की जाने वाली दया को कृपा कहते हैं।

भ्रम और प्रमाद—

जहाँ असावधानी से भूल हो जाय वहाँ भ्रम और जहाँ मूर्खतावश भूल हो जाय वहाँ प्रमाद होता है।

द्वेष, ईर्ष्या और स्पर्द्धा—

कारणवश घृणा करना द्वेष, स्वभावतः दूसरे की उन्नति देख कर जलना ईर्ष्या और दूसरों को बढ़ने न देना स्पर्द्धा है।

श्रम, आयास और परिश्रम—

शरीर के अंग की शक्ति लगाकर काम करना श्रम, मन की शक्ति लगाना आयास और श्रम की विशेषता परिश्रम है।

प्रेम, भक्ति, श्रद्धा, स्नेह और प्रणय—

प्रेम—हृदय के आकर्षण का भाव है।

भक्ति—देवताओं के प्रति अनुराग या प्रेम भक्ति कहलाता है।

श्रद्धा—बड़ों के प्रति अनुराग या प्रेम श्रद्धा है।

स्नेह—छोटों पर प्रेम दरसाना स्नेह है।

प्रणय—स्त्री-पुरुष के प्रेम को प्रणय कहते हैं।

दुःख, शोक, क्षोभ, खेद और विषाद—

मानसिक पीड़ा को दुःख और चित्त की व्याकुलता को शोक कहते हैं। वियोग का दुःख शोक है। किसी काम में सफलता न मिलने पर मन में जो विकार उत्पन्न होता है उसे क्षोभ कहते

हैं। निराश हो जाने पर खेद होता है। दुःख की हालत में कर्त्तव्या-कर्त्तव्य की विस्मृति को विषाद कहते हैं।

सेवा और शुश्रूषा—

सेवा—देवताओं या बड़ों की टहल।

शुश्रूषा—रोगियों और दुःखितों की टहल।

स्त्री और पत्नी—

स्त्री-जाति-मात्र को स्त्री और अपनी विवाहिता स्त्री को पत्नी कहते हैं।

बालक और पुत्र—

लड़के की जाति को बालक और अपने बेटे को पुत्र कहते हैं।

अभ्यास

१—नीचे के शब्दों में अर्थ-भेद बताओ।

Show the difference in meanings of the following words. ज्ञानी, अभिज्ञ। बन्धु, सुहृद, मित्र और सखा। प्रमाद, भ्रम। सम्राट, राजा। दुःख, शोक। मन, चित्त। स्नेह, श्रद्धा, भक्ति।

विपरीतार्थक शब्द

(Antonyms)

जब दो शब्द आपस में प्रतिकूल अर्थ प्रगट करें तब वे विपरीतार्थक शब्द कहलाते हैं। कभी-कभी दोनों शब्द एक साथ भी प्रयुक्त होते हैं जैसा कि पहले दरसाया जा चुका है नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं—

आकाश	पाताल	अथ	इति
आदि	अंत	अति वृष्टि	अनावृष्टि

आकर्षण	विकर्षण	आय	व्यय
उन्मीलन	निमीलन	आदान	प्रदान
लेन	देन	ऋण	उऋण
ऊँच	नीच	उदय	अस्त
जीवन	मरण	आलोक	अन्धकार
उत्कृष्ट	निकृष्ट	अनुराग	विराग
योगी	भोगी	शान्ति	अशान्ति
राग	विराग	वाद	प्रतिवाद
सच	झूठ	सरस	नीरस
स्तुति	निन्दा	वृद्ध	बालक
पुरुष	स्त्री	राजा	रानी
दिन	रात	सुबह	साँझ
शीत	उष्ण	जाड़ा	गर्मी
अच्छा	ख़राब	भला	बुरा
शत्रु	मित्र	अमृत	विष
लघु	गुरु	स्त्रीलिंग	पुंल्लिंग
चर	अचर	संयोग	वियोग
मिलन	विछोह	साधु	असाधु
हित	अहित	राम	रावण
		गङ्गा	कर्मनाशा

निम्नलिखित शब्दों के प्रतिलोम (विपरीतार्थक) शब्दों को लिखो।

Give the antonyms of the following words

धर्म, मूक, धनी, नया, जय, स्थावर, सृष्टि, योग, ब्रह्मचारी, पाण्डव, गरकी।

वर्णविन्यास-भिन्न एकार्थक शब्द

Words of the same meaning but of different spelling

हिन्दी में बहुत से ऐसे भी शब्द हैं जिनके वर्ण-विन्यास में थोड़ा बहुत अन्तर रहने पर भी अर्थ में अन्तर नहीं पड़ता। ऐसे शब्द वर्णविन्यास-भिन्न एकार्थक शब्द कहलाते हैं। नीचे कुछ ऐसे शब्द दिये जाते हैं—

अलि, अली। आंचल, आंचर। अवनि, अवनी। इन्धन, ईंधन। कलश, कलस। कंवल, कमल। कोष, कोश। उपनिवेश, उपनिवेष। गड्हा, गढ़ा। गदहा, गधा। चमगादड़, चमगीदड़। कोस, कोश। देश, देस। वन, बन। तमगा, तगमा। बन्दर, वानर। भल्लु, भालू। विकाश, विकास। निमिष, निमेष। बारी, बाड़ी। पहला, पहिला। हिन्दुस्तान, हिन्दोस्थान। उड़िस्सा, उड़ीसा। बहन, बहिन इत्यादि।

ऊपर दिये गये तथा उसी प्रकार अन्य वर्णविन्यास-भिन्न एकार्थक शब्दों के प्रयोग के समय बालकों को यह ध्यान में रखना चाहिये कि जहाँ-कहीं ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाय, एक ही ढंग से किया जाय। ऐसा न हो कि एक ही लेख में एक जगह 'बहन' लिखा तो दूसरी जगह 'बहिन' लिख दिया। और भी इस प्रकार के शब्दों के प्रयोग में बड़े-बड़े लेखकों की लेखन-शैली का अनुकरण करना ही ठीक है। पुराने कवियों की कविताओं में प्रायः ऐसा देखा जाता है कि शब्द को मधुर बनाने के लिए शब्द-विन्यास के नियमों की उपेक्षा कर दी गयी है। कड़े अथवा कर्णकटु शब्दों को मधुर, बनाने या कविता में तुक मिलाने की गरज से 'ष' का 'ख', 'श' का 'स' ह्रस्व की जगह

दीर्घ और दीर्घ की जगह ह्रस्व का प्रयोग किया गया है। जैसे महि का मही, शायक का सायक, शीतल का सीतल, षड़ानन का खड़ानन इत्यादि। परन्तु गद्य-लेख में ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाता है। आधुनिक काल की खड़ी-बोली की कविताओं में भी व्याकरण-सम्बन्धी नियमों का विशेष ध्यान रखा जाता है और शब्द-विन्यास में तोड़-मरोड़ नहीं किया जाता है। इसीलिए कुछ विद्वानों का कथन है कि इस प्रकार व्याकरण का प्रतिबंध रहने के ही कारण न तो सरसता ही रहती है और न प्रसाद-गुण ही। पर यह सोचना भूल है। कवि किसी प्रकार की भाषा में सरसता तथा भाव लाने में समर्थ हो सकता है ज़रूरत है भावुक कवि की।

अभ्यास

१—ऊपर के ही समान दस उदाहरण दो।
Give the similar ten instances.

पदांश-परिवर्तन

Change of components

शब्द को सरस बनाने के अभिप्राय से सामासिक शब्दों के उत्तरार्ध या पूर्वार्ध पद को बदलकर उसकी जगह उसी अर्थ में प्रयुक्त दूसरे पद को रख सकते हैं। छन्द-रचना के लिए इस ढंग का परिवर्तन करने का अभ्यास बड़ा ही उपयोगी होता है। लेखन-कला में शब्द के संगठन के लिए भी ऐसा करने की आवश्यकता होती है।

पूर्व-पद-परिवर्तित शब्द

नृसिंह, नरसिंह । कनककश्यप, हिरण्यकश्यप । भूपति, नरपति, महीपति । प्राणाधार, जीवनाधार । सुरबाला, देवबाला । कर्ण-गोचर श्रुति-गोचर । नृपाल, महिपाल, भूपाल । हेम-लता कनकलता, स्वर्णलता । खेचर, निशिचर, रजनीचर इत्यादि ।

उत्तर-पद-परिवर्तित शब्द

राजकन्या, राजपुत्री । नरनाथ, नरपाल । कमलिनी-नायक । कमलिनी-वल्लभ । निशिनाथ, निशिपति । रजनीकान्त, रजनीपति । प्राणनाथ, प्राणपति, प्राणेश, प्राणाधार, प्राणवल्लभ इत्यादि ।

कर, हर, हीन, धि, धर, द, प्रद, दायक, ज्ञ, ज, जनक, मय, दार आदि बहुत से ऐसे शब्द या अक्षर हैं जिन्हें कुछ शब्दों के अंत में जोड़ने से नये शब्द बनाये जाते हैं; जैसे—

कर—हितकर, रुचिकर, फलकर, जलकर, मधुकर आदि ।
हर—संतापहर, मनोहर, पापहर आदि ।
हीन—बुद्धिहीन, ज्ञानहीन, कर्महीन, धनहीन आदि ।
धि—जलधि, उदधि, वारिधि आदि ।
धर—हलधर, चक्रधर, परशुधर, जलधर, महिधर आदि ।
द—सुखद, दुःखद, जलद, वरद (स्त्रीलिंग वरदा) आदि ।
प्रद—सन्तोषप्रद, लाभप्रद, दुःखप्रद आदि ।
दायक—फलदायक, लाभदायक, सुखदायक इत्यादि ।
ज्ञ—सर्वज्ञ, विशेषज्ञ, इतिहासज्ञ, मर्मज्ञ इत्यादि ।
ज—जलज, सरोज, मनोज, पंकज आदि ।
जनक—संतोष-जनक, लाभ-जनक, करुणा-जनक आदि ।

मय—दयामय, करुणामय, सुखमय, आनन्दमय आदि।

दार—भड़कदार, मजेदार, चमकदार आदि।

नोट—(क) ऊपर जोड़े गये कर, हर, आदि शब्द प्रत्ययवत् व्यवहृत हुए हैं।

(ख) जल या इसके पर्यायवाची शब्दों के आगे 'ज' जोड़ने से कमल, 'द' या 'धर' जोड़ने से मेघ और 'धि' या 'निधि' जोड़ने से समुद्र के पर्यायवाची शब्दों का बोध होता है : जैसे—

जल—जलज, जलद, जलधर, जलधि, जलनिधि। नीर—नीरज, नीरद, नीरधर, नीरधि, नीरनिधि।

सलिल—सलिलज सलिलद, सलिलधर, सलिलधि, सलिलनिधि।

अम्बु—अम्बुज, अम्बुद, अम्बधर, अम्बुधि, अम्बुनिधि।

तोय—तोयज, तोयद, तोयधर, पयोधि, तोयनिधि।

पय—पयोज, पयोद, पयोधर, पयोधि, पयोनिधि।

वारि—वारिज, वारिद, वारिधर, वारिधि, वारिनिधि।

वन—वनज, वनद, वनधर, वनधि, वननिधि।

(ग) प्रायः तालाब शब्द के पर्यायवाची शब्दों के आगे 'ज' जोड़ने से कमल के प्रतिशब्द बनते हैं। जैसे—सरोज, सरसिज आदि।

(घ) ख्याल रहे कि ऊपर के प्रत्ययवत् शब्द केवल संस्कृत के तत्सम शब्दों के ही अंत में जोड़े जाते हैं, हिन्दी या उर्दू आदि शब्दों के अंत में नहीं। जैसे—पानीज, तालाबज आदि नहीं होगा।

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों का विना अर्थ बदले उचित परि-

वर्तन करो Make proper changes in the following words without changing their meanings.

पयोद, जलज, जलनिधि, दुःखकर, कमरबन्द, शरमोचन, भूपाल, नागनाथ, गिरहकट्टा, मनोज।

एक ही शब्द का भिन्न-भिन्न रूप से प्रयोग

(The same word used as different part of speech)

बहुत से शब्द वाक्य में भिन्न-भिन्न रूप से व्यवहृत होते हैं। एक ही शब्द कहीं संज्ञा, कहीं विशेषण, कहीं सर्वनाम, कहीं अव्यय और कहीं क्रिया के समान व्यवहृत होते हैं। नीचे उदाहरण देखो—

संज्ञा विशेषण-रूप में व्यवहृत

(१) व्यक्ति वाचक—भीष्म, कृष्ण, भीम, राम, भगीरथ आदि व्यक्ति वाचक संज्ञाएं कभी-कभी विशेषण के रूप में भी व्यवहृत होती हैं; जैसे—भीष्म-प्रतिज्ञा, कृष्णसर्प, भीमकाय, भगीरथ-प्रयत्न, राम-राज्य आदि।

(२) अन्य संज्ञाएं—स्वर्ण, पाप, पुण्य, धर्म, गो, आदि संज्ञाएं भी विशेषण के रूप में व्यवहृत होती हैं; जैसे—स्वर्ण-युग, पाप-वासना, पुण्य-स्मृति, गो-स्वभाव।

विशेषण संज्ञा (विशेष्य) रूप में

दुष्ट, पण्डित, पापी, लाल, गोरा, काला, आदि शब्द विशेष्य रूप में भी व्यवहृत होते हैं।

'दुष्टों' को दंड देना चाहिये। 'पण्डित जी' पढ़ा रहे हैं। 'पापियों' को स्वर्ग नहीं मिलता। 'लाल' बेशकीमती पदार्थ है।

अफ्रिका में 'गोरों' और 'कालों' में भेद-भाव उठ गया।

नीचे कुछ ऐसे शब्द दिये जाते हैं जो भिन्न-भिन्न रूप में प्रयुक्त हुए हैं—

अच्छा—संज्ञा—अच्छों की पूँछ सभी जगह है। अव्यय—अच्छा, तुम जाओ। विशेषण—मोहन अच्छा लड़का है।

एक—विशेषण—एक न एक दिन सभी मरेंगे। सर्वनाम—एक का बना है सहेरा; एक कब्र पै पड़ा है। क्रिया-विशेषण—एक तुम्हारे जाने से ही क्या होगा।

केवल—विशेषण—मैं केवल मोहन को जानता हूँ। क्रिया-विशेषण—वह केवल हँसता है। समुच्चयबोधक—मैं तो कब का गया रहता केवल तुम्हारे लिए ठहर गया।

और—विशेषण—और लड़के कहाँ गये? विशेष्य—मोहन औरों की अपेक्षा पढ़ने में अधिक तेज़ है। अव्यय—मोहन और सोहन स्कूल जाते हैं।

कोई—सर्वनाम—कोई खाय या न खाय मैं तो ज़रूर खाऊँगा। विशेषण—इस मर्ज की कोई दवा नहीं। अव्यय—कोई दो साल हो गये अब तक उसका कुछ पता नहीं है।

खाक—अव्यय—तुम मेरी सहायता क्या खाक करोगे? संज्ञा सब किया-कराया खाक में मिल गया है।

हाँ—संज्ञा—हाँ में हाँ मिलाने से काम नहीं चलेगा। अव्यय—हाँ जी अब चलो! समुच्चयबोधक—तुम्हारा कहना तो सभी ठीक है, हाँ, एक बात इसमें अवश्य खटकती है।

क्या—सर्वनाम—उसने कल क्या कहा था?

क्रियाविशेषण—वह चलेगा क्या खाक पैर में तो घाव हो गया है।

विशेषण—क्या—क्या चीज़ें लायी जायँ।
दूसरा—विशेषण—उसका दूसरा नम्बर है।
विशेष्य—दूसरों को क्या गरज़ पड़ी है।
क्रिया-विशेषण—वह क्या कोई दूसरा है।

अभ्यास

१—पांच ऐसे शब्द बताओ जो भिन्न-भिन्न रूप से व्यवहृत होते हों।

Mention five words which are used as different part of speech.

२—निम्नलिखित शब्दों को विशेषण के रूप में वाक्य में व्यवहृत करो।

Use the following words as Adjective. तनु, लाल, चार, जो, यह।

चतुर्थ परिच्छेद

पद-संगठन

(Structure of words)

पूर्व के तीन परिच्छेदों में शब्दों के बनाने और उनके अर्थ को प्रकाशित करने की विधियों पर थोड़ा-बहुत प्रकाश डाला जा चुका है। अब इस परिच्छेद में यह दिखाने का प्रयत्न किया जायगा कि शब्द को संगठित कर वाक्य में किस ढंग से प्रयुक्त करते हैं। ऐसे पद-समूहों को, जिनसे पूरा अर्थ निकले, वाक्य कहते हैं। शब्दों को यों ही जिधर-तिधर रख देने से पूरा अर्थ नहीं निकल सकता। उन्हें संगठित कर व्याकरण के नियमों के मुताबिक रखने से ही पूरा अर्थ प्रकाशित होता है। शब्दों को संगठित या शृङ्खलाबद्ध करते समय आवश्यकतानुसार उनकी आकृतियों को कुछ बदलना पड़ता है और कुछ शब्दांश या चिह्न भी जोड़े जाते हैं; जैसे—लड़का, खाना, रोटी—इतने शब्द विशृङ्खल रूप से रख देने से मनोभाव प्रकट नहीं होता; अतः यह वाक्य नहीं है। मगर जब इन्हीं शब्दों को शृङ्खलाबद्ध कर, उनकी आकृतियों को यथारीति बदलकर तथा उनमें शब्दांशों को जोड़कर इस प्रकार—'लड़के ने रोटी खाई'

कर दिया—तब यह एक वाक्य हो गया। इसी विधि को पद-संगठन कहते हैं।

जबतक शब्द अलग-अलग रहते हैं तबतक तो वे शब्द ही कहलाते हैं पर जब वे वाक्य में ग्रथित हो जाते हैं तो पद कहलाने लगते हैं। अर्थात् वाक्य में व्यवहृत शब्द पद कहलाते हैं। कहीं तो शब्द की आकृति बदलकर पद होते हैं और कहीं आकृति में परिवर्तन नहीं भी होता है। जो शब्दांश जोड़े जाते हैं वे विभक्ति कहलाते हैं। यों तो प्रत्येक पद में विभक्ति रहती है पर किसी में प्रत्यक्ष रूप से किसी में गुप्त रूप से रहती है। अतः विभक्ति सहित शब्द, चाहे विभक्ति का रुप प्रकट रहे या नहीं, पद कहलाता है। जैसे राम रोटी खाता है।

ऊपर के वाक्य में राम, रोटी को, खाता है—ये तीन पद हैं। पहले पद 'राम' में प्रत्यक्ष रूप से कोई चिह्न नहीं है, 'रोटी' के अंत में कर्मकारक का चिह्न 'को' के रूप में आया है और 'रोटी खाना' क्रिया में विभक्ति 'ता है'—है। विभक्ति आकर शब्द की आकृति को बदल कर 'खाता है' का रूप देती है।

वाक्य में पाँच प्रकार के पद होते हैं—संज्ञा-पद, सर्वनाम-पद, विशेषण-पद, क्रियापद और अव्यय-पद। इनमें विशेषण-पद तो अपने विशेष्यपद के अनुसार कहीं अपने मूल शब्द की आकृति को बदल देता है और कहीं ज्यों का त्यों रहता है। अव्यय-पद का रूप प्रायः परिवर्तित नहीं होता। हाँ, जब अव्यय विशेषणादि के रूप में व्यवहृत होता है तो उसमें परिवर्तन हो जाता है।

शब्दों की आकृतियाँ बदलने के लिये लिंग, वचन और कारक का प्रयोग जानना बहुत ज़रूरी है। क्योंकि विशेषतः लिंग, वचन और कारक से ही शब्दों में विकार उत्पन्न होता है।

हाँ, इनके सिवा भी क्रिया-पद में धातु-प्रयोग के द्वारा या, ता, ता है आदि विभक्तियों के जोड़ने से भी विकार उत्पन्न होता है। यहां पर लिंग, वचन और कारक के विषय में थोड़ा-बहुत प्रकाश डाला जाता है।

लिंग (Gender)

हिन्दी में केवल दो लिंग होते हैं—स्त्रीलिंग और पुंलिंग, स्त्री-जाति-बोधक शब्द स्त्रीलिंग और पुरुष-जाति-बोधक पुंलिंग कहलाते हैं। और जो शब्द न तो स्त्री-जाति के बोधक हैं और न पुरुष-जाति के उनका लिंग-निर्णय करने के लिए अंगरेज़ी, संस्कृत आदि भाषाओं में तो क्लीव लिंग के नाम से एक तीसरा लिंग भी माना गया है; पर हिन्दी में ऐसे संदिग्ध शब्द कुछ तो स्त्री-लिंग में व्यवहृत होते हैं और कुछ पुंल्लिंग में। यही कारण है कि हिन्दी में लिंग-विचार एक विशेष महत्व रखता है और इसके विषय में अब तक बड़े-बड़े लेखकों तक में मतभेद चला आता है। इसके निर्णय के लिए हिन्दी-व्याकरण में न तो कोई खास नियम है और न विद्वानों का एक मत है। यही नहीं बल्कि यहाँ तक देखा गया है कि जो शब्द संस्कृत आदि भाषाओं में पुंल्लिंग माने जाते हैं हिन्दी लेखक स्त्री-लिंग लिख डालते हैं और जो शब्द संस्कृतादि में स्त्री-लिंग माने जाते हैं उन्हें पुंल्लिंग में प्रयोग करते हैं। इस विचित्र गड़बड़झाला में पड़कर नवसिखुए लेखक प्रायः असमंजस में पड़ जाते हैं जो स्वाभाविक है। कहा भी है कि जहाँ कोई नियम लागू न हो सके वहाँ 'महाजनः येन गतः स पंथा' के अनुसार महापुरुषों के पक्ष का अनुसरण करना मान्य है। परन्तु यहाँ बड़े-बड़े में ही जब एक मत नहीं है तो

किस पंथ का अनुसरण किया जाय यह जटिल समस्या सामने आ खड़ी हो जाती है। हमारी समझ में ऐसी परिस्थिति में नव-सिखुए लेखकों के लिए एक ही उपाय यह बच रहा है कि वे बहुमत को मान्य समझें। यहाँ पर हम संस्कृत के कुछ ऐसे शब्द दिखलाते हैं जो संस्कृत में स्त्री-लिंग होने पर भी हिन्दी में पुंल्लिग और संस्कृत में पुंल्लिग होने पर भी हिन्दी में स्त्रीलिङ्ग में कुछ तो पहले से व्यवहृत होते चले आ रहे हैं और कुछ अब व्यवहृत होने लग गये हैं।

उदाहरण—(१) देवता, तारा आदि शब्द संस्कृत में स्त्री-लिङ्ग हैं पर हिन्दी में पुंलिङ्ग माने जाते हैं। कोई-कोई देवता को स्त्रीलिङ्ग लिखने लग गये हैं।

आती है स्वातन्त्र-देवता, उसके चरण धुलाने में
—(एक भारतीय आत्मा)

(२) सन्तान, विधि, महिमा आदि शब्द संस्कृत में पुंल्लिङ्ग हैं पर हिन्दी में स्त्रीलिङ्ग में प्रयुक्त हो रहे हैं।

(३) आत्मा, अग्नि, वायु, पवन, समीर, समाज, विनय, विजय, कुशल आदि संस्कृत में पुंिग हैं पर हिन्दी में स्त्रीलिंग और पुंल्लिग दोनों में प्रयुक्त होते हैं। प्रायः देखा जाता है कि संयुक्त-प्रान्त के अधिकांश लेखक अब इन शब्दों को स्त्रीलिंग में लिखने लग गये हैं। उर्दू का हवा शब्द स्त्री-लिंग है, पर वायु, पवन आदि पुंल्लिग। कुछ विद्वानों का मत है कि हवा के जितने पर्यायवाची शब्द हों सभी स्त्रीलिंग में व्यवहृत होने चाहियें।

वायु बहती है घटा उठती है जलती है अग्नि। (हरिऔध)
पवन लागी बहन—(पूर्ण)।

'विनय' को हिन्दी-शब्दार्थ-पारिजात के लेखक ने पुंलिङ्ग लिखा है।

'आत्मा' के सम्बन्ध में एक विचारशील लेखक और हिन्दी के प्रगाढ़ विद्वान का कथन है कि जहाँ 'आत्मा' का प्रयोग ईश्वर-अंश के ऐसा हो वहाँ पुंलिंग रहे पर जहाँ विशेष अर्थ में प्रयुक्त हो वहाँ स्त्रीलिंग रहे। जैसे—पुंलिंग-प्रयोग—सब का आत्मा अमर है। आत्मा न तो जरता है और न मरता है।

स्त्रीलिंग-प्रयोग—पानी पिलाकर मेरी आत्मा को तृप्त करो। मेरी आत्मा तो इस बात की गवाही नहीं देती।

हमारे विचार से जो संस्कृत या अन्यान्य भाषा के शब्द सर्व-सम्मति से, हिन्दी में, लिंग के सम्बन्ध में, किसी निर्णय पर पहुँच चुके हैं उनके लिए माथा-पच्ची करना व्यर्थ है। उन्हें उसी रूप में अब रहने दिया जाय जिस रूप में वे व्यवहृत हो रहे हैं। परन्तु जिन शब्दों के सम्बन्ध में अब तक खींचातानी चली आ रही है—जिनके विषय में विद्वानों का एक मत नहीं है—उनके लिए, हालाँ कि हिन्दी एक स्वतन्त्र भाषा है, संस्कृत या अन्य भाषाओं में वे जिस लिंग में हैं उसी लिंग में हिन्दी में भी रहने दिये जायँ। ऐसा करने से अन्य भाषाओं के स्त्रीलिंग और पुंलिंग शब्दों का हिन्दी में प्रयोग होने में लिंग-सम्बन्धी बखेड़ा मिट जायगा और तब केवल अन्य भाषाओं में व्यवहृत नपुंसक या क्लीव लिंग के शब्दों के लिंग-निर्णय की समस्या रह जायगी।

पुंल्लिंग शब्द (Masculine)

प्रत्यय हों वे प्रायः पुंलिंग होते हैं; जैसे—चढ़ाव, उतराव, चुनाव, नाव, मनुष्यत्व, पुरुषत्व, लड़कपन, बचपन, बुढ़ापा, राज्य इत्यादि।

(२) थोड़े से प्राणिवाचक शब्द; जैसे—तीतर, चील्ह, नाग, गिद्ध, गो, बेंग, सारद, गरुड़, बाज, लाल, प्राणी जीव, पक्षी, पंछी—इत्यादि।

नोट—नीचे लिखे शब्द हैं तो दोनों लिंगों के (Common Gender) परन्तु पुंलिंग के रूप में व्यवहृत होते हैं। शिशु, मित्र, दम्पति, कुतरू, परिवार, पढरू, बछरू, शत्रु आदि।

(३) थोड़े से अन्न या फलवाची शब्द; जैसे—जौ, मटर, चना, उर्द, गेहूँ, गन्ना, तिल, धनिया, नीबू आदि।

(४) संस्कृत के नपुंसक और पुंलिंग शब्द प्रायः हिन्दी में कुछ अपवादों को छोड़कर पुंलिंग होते हैं।

अपवाद—जय, देह, सन्तान, शपथ, विधि, ऋतु, मृत्यु, वस्तु, पुस्तक, औषध, उपाधि, आय आदि स्त्रीलिंग में व्यवहृत होते हैं, परन्तु विजय, विनय, समाज, तरंग, कुशल, वायु, अग्नि, सामर्थ्य आदि दोनों लिंगों में प्रयुक्त होते हैं। इन वैकल्पिक शब्दों में हमारे विचार से विनय, विजय, कुशल, तरंग आदि को स्त्रीलिंग में और वायु, अग्नि, समाज, सामर्थ्य आदि को पुंलिंग में प्रयोग करना उचित है।

(५) अकारान्त और आकारान्त शब्द—दाँत, कान, बाल, केश, मुँह, कीचड़, पहिया आदि।

अपवाद—(क) आँच, बाँह, आँख, नाक, साँस, लहर, सड़क, घास, ईंट, भौंह, कीच, मूँछ इत्यादि।

(ख) इया—प्रत्ययान्त ऊनवाचक शब्द भी स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—डिबिया, खटिया आदि।

(६) उर्दू के वे शब्द जिनके अंत में ब, आब और श रहे वे पुंल्लिंग होते हैं; जैसे—गुलाब, जुलाब, हिसाब, खिजाब, कबाब, जवाब, नसीब, ताश, मजहब, गोश, गश, जोश, मतलब आदि।

अपवाद—किताब, तलब, शब, दाब, तर्कीब, किमख्वाब, सुरखाब, ख्वाब, मिहराब, शराब आदि स्त्रीलिंग हैं।

(७) पहाड़ों, ग्रहों, दिनों, महीनों, नगों, धातुओं और देशों के नाम पुंल्लिंग होते हैं, जैसे—

हिमालय, चन्द्र, शुक्र, गुरुवार, चैत, फरवरी, लाल, हीरा, मोती, सोना, जापान, इँगलैण्ड, भारतवर्ष आदि।

अपवाद—चाँदी और पीतल स्त्रीलिङ्ग हैं। देशों में टर्की को भी लोग स्त्रीलिङ्ग लिखते हैं। बृटेन का रूप जब बृटेनिया होता है तो लोग इसे भी स्त्रीलिङ्ग मानते हैं। भारत के अन्त में 'माता' शब्द जोड़ने से 'भारत माता' स्त्रीलिङ्ग में लिखा जायगा।

नोट—स्त्रीलिङ्ग नियमों के अपवादवाले शब्द पुंल्लिङ्ग होंगे और पुंल्लिङ्ग नियमों के अपवादवाले शब्द स्त्रीलिङ्ग हैं।

स्त्रीलिङ्ग

(१) जिन शब्दों के अन्त में आई, ता, वट, हट, और न प्रत्यय रहे वे प्रायः स्त्रीलिङ्ग होते हैं; जैसे—लम्बाई, लड़ाई, मित्रता, शत्रुता, स्वार्थपरता, चिकनाहट, बनावट तरावट, चलन इत्यादि।

नोट—चालचलन को लोग पुंल्लिङ्ग कहते हैं।

(२) थोड़े से प्राणिवाचक शब्द—

उड़ीसा, चील, कोयल, बटेर, मैना, श्यामा, चिड़िया, जोंक, कचचचिया, तूती, मुनिया इत्यादि।

कोकिल शब्द पुंलिङ्ग है जिसका स्त्रीलिङ्ग-प्रयोग कोकिला है।

(३) थोड़े से अन्न और फलवाची शब्द—

मूँग, मसूर, गाजर, अरहर, दाख इत्यादि।

(४) संस्कृत के स्त्रीलिङ्ग शब्द—

दया, माया, प्रकृति, आशा, कृपा आदि।

(५) अरबी के वे शब्द जिनके अन्त में आ, त, फ, अ, ई, और ल रहे; जैसे—दगा, हवा, सज़ा, दवा, खता, बला, दुआ, रज़ा, कज़ा, वफ़ा, तमन्ना, रसीद, तर्कीब, तमीज़, इलाज, दुनिया, तफसील, फसल आदि।

नोट—तावीज शब्द पुंलिङ्ग है।

(६) जिन शब्दों के अन्त में ई, त, आस और इश रहे वे प्रायः स्त्रीलिङ्ग में प्रयुक्त होते हैं; जैसे—चिट्ठी, रोटी, साड़ी, धोती, बोटी, रात, बात, जात, घात, गत, दौलत, नौबत, प्यास, आस, उच्छ्वास, मिठास, कोशिश, पुरशिश इत्यादि।

अपवाद—घी, दही, मोती, हाथी, पानी, भात, दाँत, गोत, मूत, सूत, भूत, प्रेत, शर्बत, बन्दोबस्त, दस्त, दस्तखत, निकास, विकास, इजलास इत्यादि।

नालिश शब्द दोनों लिङ्गों में व्यवहृत होता है।

(७) तिथियों, नक्षत्रों और नदियों के नाम—

द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, तीज, अश्वनी, भरणी, रोहिणी, कृत्तिका, गंगा, यमुना, सोन, गंडक, नील इत्यादि।

अपवाद—पुष्य, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाषाढ़ और उत्तराषाढ़ ये नक्षत्र पुंलिङ्ग हैं। सिंधु पुंलिङ्ग में व्यवहृत होता है पर यह नदी नहीं कहलाकर नद कहलाता है।

यौगिक शब्दों का लिङ्ग-निर्णय

यौगिक या सामासिक शब्दों का लिङ्ग उन शब्दों के अंतिम खण्ड के अनुसार होता है; जैसे मातापिता, कृपासिन्धु गङ्गासागर आदि पुलिङ्ग हैं और जयश्री, वसन्तश्री, हेमलता आदि स्त्रीलिङ्ग हैं। स्त्रीलिङ्ग और पुंलिङ्ग—ये दोनों शब्द भी पुलिङ्ग हैं।

नोट—आजकल के लेखकों में प्रायः यह बात पायी जाती है कि अगर यौगिक शब्दों के आगे कोई अव्ययसूचक शब्द हो तो वे प्रथम खंड के लिङ्गानुसार उनके लिङ्ग का प्रयोग करते हैं परन्तु हमारी समझ में यह प्रयोग उचित नहीं है—व्यर्थ का व्याकरण के नियमों को जटिल बनाकर लोगों को संशय में डालना है; जैसे इच्छानुसार, आज्ञानुसार आदि शब्द नियम के अनुसार, पुंलिङ्ग हैं पर शब्दों के प्रथम खंड में स्त्रीवाची शब्द रहने से कोई-कोई इन्हें स्त्रीलिङ्ग लिखने लग गये हैं।

हिन्दी में प्रयुक्त अंगरेज़ी या अंगरेज़ी के अपभ्रंश शब्दों में से निम्नलिखित शब्द स्त्रीलिङ्ग में प्रयुक्त होते हैं—कान्फ्रेंस, गवर्नमेन्ट, लालटेन, अपील, पेंसिल, डेस्क, इञ्जिन, एञ्जिन, वोट, कमिटी, लिस्ट, एक्सप्रेस, पैसिञ्जर, पार्टी, रिपोर्ट, मिल, कांग्रेस, काउन्सिल, एसेम्बली, फीस, रेल, लौरी, लौटरी, मिलेटरी, पुलिस इत्यादि।

नोट—'नोटिस' शब्द को लोग दोनों लिङ्गों में लिखते हैं।

अन्य स्त्रीलिङ्ग शब्द

अदालत, अहेर, अकड़, अफ़ीम, अक्ल, अनबन, अचकन, अंगिया, अफ़वाह, अम्ल, आग, आमद, आब, आतशबाज़ी, आवाज़, आस्तीन, आह, आढ़त, आन, ओट, आयु, इज़्ज़त, इल

इजाजत, इमतिहान, ईख, ईंट, इमारत, इकरारनामा, ईंधन। उम्र, उशीर, उठबैठ, उड़ान, उलझन, उमींद। एवज, ऐंठ। ओट, ओप, ओझल, औलाद, औषध। कृदर, कसर, कल, कमीज़, कसम, कनात, किताब, कैफियत, कौम, कतरन, कमर, कमान, कलकृ, कलम, कचकच, किरण, किवाड़, कूक, कौम, किस्त, कुदरत, कज़ा, कीमत, कारीगरी। खातिर, खपत, ख्वाहिश, खैंचातानी, खबर, खरभर, खल, खरीद, खीर, खाल, खाद, खिद-मत, खता, खोल, खड़ाऊं, खुशामद, खैर, खैरात, खटखट, खाज, खोह, खान, खिझ। गजल, गच, गर्ज, गुजर, गाजर, गर्मी, गर्दन, गाँठ, गागर, गाज, गंध, गर्दन; गरज़, गेंद, गोंद, गत, गमक, गुड़िया, गोष्ठी। घूसा, घुमनी, घूस, घिन। चहल-पहल, चरबी, चेन, चंग, चलचुल, चपरास, चटकमटक, चीज, चाट, चास, चिट, चोट, चमक, चश्म, चाह, चेतावनी, चोंच, चालढाल, चादर, चूक, चाल, चुरुट, चौखट, चौबंदी, चालाकी, छान्ह, छत, छूट, छान, छाया, छाँट, छटाँक, छाँह, छड़ी, छड़, छाती, छींट, छाप, छींक। जमीन, जागीर, जायदाद, जगह, जमानत, जिरह, जाजिम, जोख, जाँघ, जमा, जमायत, जलीकटी, जरूरत, जबान, जीभ, जलन, जेब, जान, जड़। झलक, झाड़न, झाड़, झिलम, झाँझ, झूल, झकोर, झील, झिझक, झोंक, टर, टसक, टीस, टेर, टेव, टंकोर, टनक, टाप। ठसक, ठेका, ठोली, ठेक, ठोक, ठिठक, ठुमरी, ठण्ढ, ठठक। डाल, डाली, डगर, डाँक, डाह, डींग, डफ, डाढ़, डांट डोर, डीठ। ढाल, ढार। तरह, तलछट, तांत, तामील, तोहीन, तहसील, तसफ़िया, तफ़सील, तबी-यत, तर्ज, तुक, ताव, तकरार, तलब, तरवार, तलाक, तकलीफ, ताकत, तातील, तमीज़, तहवील, तदवीर, तर्कीब, तारीफ,

तारीख, तहरीर, तस्वीर, तलाश, तड़क, तनख्वाह, तान, ताक, तोल, तीली, थाह, थाप, थाली। दमक, दवा, देह, दाव, दावत, दाग, दफा, दरकार, दरख्वास्त, देखरेख, दूकान, दाद, दुम, दुः देगची, दहशत, दिक, दगा, दंडवत, दलील, दरगाह, दरियाफ्त, दरिया, दुनिया, दोज़ख, दाढ़, दामन, दीवार, दौड़धूप। धरोहर, धमक, धाक, धूम, धधक, धूल, धुन, धौल। नस, नकल, नज़र, नज़ाकत, नफा, निगाह, नींव, नब्ज, नकेल, नौबत, नेवार, नजीर, निमाज़, निस्वत, नख, नस्ल, नाव, नौका, नाल, निछावर, नींद, नोकझोंक, नुकता। पकड़, पोशाक, पलटन, परवाह, परेड, पुलिस, पूनी, पियाज, परवरिश, पलक, पहुँच, पहचान, पुकार, पुड़िया, पतवार पागुर, पायल, पाग, पिस्तौल, पिनक, पीठ, पीर, पीब, पुरशिश, पूंछ, पैठ। फबन, फब, फाव, फसल, फुरसत, फजीहत, फीस, फिक्र, फांक, फूट, फुहार, फुनगी, फुन्सी, फतह, फौज, फाँक। बहस, बन्दूक, बम, बारात, बानगी, बनात, बाग डोर, बटन, बला, बौछार, बोतल, बैठक, बकझक, बवासीर, बिध, बिलावल, बाढ़, बांट, बगल, बैन, बीन, बुनियाद, बूंद, बूझ, बरकत, बू, बरसात, बलि, बटेर, बर्फ, बरी। भनक, भीख, भंडा, भभूत, भाँग, भरमार, भीड़, भेंट, भाफ, भस्म, भूल, भूमि, भूख। मदद, मजाल, मिस्ल, मरन, मढ़न मसनद, महताब, माँग, मियाद मार, मालिश, मसजिद, मसनद, मुराद, मौत, मेहराब, मिहनत, मरम्मत, मारफत, मीजान, मौज, मैल मुलाकात, मात, मीनार, मेज, मुद्दत, मुश्किल, मुसीबत, मोहब्बत, मोहलत, मलमल, मरोड़, मुहर, मूंज, मांद, मूँछ। याद। रगड़, रीस, रग, रसद, रसीद, रकम, रपट, रैयत, राव, रहमत, रास, राशि, राह, रेह, रियासत, रगड़, रहन, रीढ़, रेल, रोक, रोकड़, रंगत,

रिस, राय, रेकाबी, रोर। लहर, लकीर, लचक, लट, लपक, लड़, लताड़, लाठ, लाठी, लाश, ललक, लहक, लाज, लगाम, लीक, लाह, लीद, लोह लोथ, लौंग, लू, लूक, लपेट, लूट, लज्जत, लत, लता, लाग। वकालत, विज्ञप्ति, विधि, वन्दना, वयस, वजह, वारिश, वार, वस्तु, वफा, विनती वसीठी। शमा, शर्म, शमसेर, शब, शक्कर, शरण, शपथ, शिकार, शाम, शाला, शङ्का, शिकायत, शुहरत, शर्त, शरह, शिखा। साख, सरकार, सड़क सजा, सकुच, समझ, सानी, सहन, समक्ष, संस्था, सनद, संभार, साध, सतह, सलाह, सांझ, सांस, साजिश, सिफारिश, सीख, सीमा, सुध, सुलह, सुविधा, सूचना, सौंह, सौगंध, सूजन, सूझ, सेना, सैन, सैर, सौंफ, सरसों, सन्तान, संखिया, सौगात, सूरत, सुबह, सिफत, सलाह, (समाज पहले स्त्रीलिङ्ग में प्रयुक्त होता था पर अब लोग इसे पुंलिङ्ग लिखने लगे) समिति, सम्मति, साटी, सादी, सेंध। हलचल, इज्जत, हजामत, हैसियत, हरारत, हींग, हद, हिफाजत, हिरासत, हालत, हिकमत, हर्कत, हवस, हुलिया, हाँड़ी, हड्डी, हवा, हरताल, होड़, हड़ताल इत्यादि।

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों का लिङ्ग-निर्णय करो।

Determine the gender of the following.

घाटा, इरादा, दुर्दशा, कम्पनी, फैक्टरी, खबर, नोंकझोंक, प्रतिज्ञा, शेखी, खर्च, स्वार्थ, जीवन, आत्मा, दर्शन, हृदयोद्गार, नरनारी, धन्धा, महत्त्व, और महत्ता।

२—दस ऐसे शब्द बताओ जिनके लिङ्ग के सम्बन्ध में हिन्दी में एक मत नहीं है।

Write such ten words the gender of which are not settled in Hindi.

वचन

वचन भी हिन्दी में दो हैं—

जहाँ एक का बोध हो वहाँ एक वचन और जहाँ दो या अनेक का बोध हो वहाँ बहुवचन होता है।

एक वचन में ए, एँ, ओं, यों, ओ, और, याँ आदि लगाकर बहुवचन बनाते हैं। व्यक्तिवाचक भाववाचक समूहवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाओं का बहुवचन नहीं होता। जहाँ कहीं ऐसी संज्ञाओं का प्रयोग बहुवचन में होता है वहाँ वे जातिवाचक के रूप में व्यवहृत होती हैं।

कहीं-कहीं जन, वर्ग, गण आदि शब्दों को एक वचन में जोड़ने से बहुवचन हो जाता है। जैसे प्रजाजन, ब्राह्मण लोग बाल वर्ग, युवक गण आदि।

कुछ ऐसे भी शब्द हैं जो सदा बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं जैसे—दाँत, प्राण, दर्शन इत्यादि।

कारक

जो क्रिया की उत्पत्ति में सहायक हो उसे कारक कहते हैं। हिन्दी-भाषा में आठ प्रकार के कारक माने गये हैं। १—कर्त्ता, २—कर्म, ३—करण, ४—सम्प्रदान, ५—अपादान, ६—सम्बंध, ७—अधिकरण और ८—सम्बोधन।

जो काम करे वह कर्त्ता, जिसपर काम का असर या फल हो वह कर्म, जिसके द्वारा काम हो वह करण, जिसके लिए काम

किया जाय वह सम्प्रदान, जिससे कोई वस्तु पृथक् हो वह अपादान, जो किसी का सम्बन्ध प्रदर्शित करे वह सम्बंध और जो किसी वस्तु का आधार हो उसे अधिकरण कारक कहते हैं। जहाँ किसी को चेताकर बुलाया जाय वहाँ सम्बोधन होता है।

संस्कृत के वैयाकरण और कुछ हिन्दी के वैयाकरण भी सम्बंध और सम्बोधन को कारक की श्रेणी में नहीं गिनते।

कारक के चिन्ह

कर्त्ता—ने, से, शून्य। अपादान—से।
कर्म—शून्य, को। सम्बंध—का, के, की।
करण—से, द्वारा। ना, ने, नी, } सर्वनाम
रा, रे, री, } में
सम्प्रदान—को, के लिए, निमित्त। अधिकरण—में, पर, पै।
सम्बोधन—हो, हे, अरे, रे।

एक वाक्य में आठों कारक

हे मोहन! पिता ने पुत्र को विद्या से भूषित करने के लिए घर से गुरु के आश्रम में भेजा। (वा० व्या०)

१—कर्त्ता

ऊपर लिखा जा चुका है कि जो काम करे या क्रिया की उत्पत्ति में सहायता दे उसे कर्त्ता कहते हैं, जैसे—राम सोता है। यहाँ सोना क्रिया या सोने का काम राम-द्वारा सम्पादित होता है, इसलिए राम कर्त्ता हुआ।

वाक्य में कर्त्ता दो प्रकार से प्रयुक्त होता है—एक प्रधान रूप से दूसरे अप्रधान रूप से। वाक्य में जहाँ क्रिया कर्त्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार हो वहाँ कर्त्ता प्रधान या उक्त कहलाता है, पर जहाँ वाक्य में क्रिया का लिंग, वचन और पुरुष कर्त्ता के अनुसार न होकर कर्म के अनुसार हो वहाँ कर्त्ता अप्रधान या अनुक्त कहलाता है। जैसे—'राम सोता है'—इस वाक्य में कर्त्ता ' राम ' के अनुसार क्रिया 'सोता है'—है, अतः 'राम' प्रधान या उक्त कर्त्ता हुआ। फिर 'राम ने रोटी खायी' वाक्य में 'खायी' क्रिया, के लिंग, वचन और पुरुष 'राम' (कर्त्ता) के अनुसार नहीं होकर 'रोटी' (कर्म) के अनुसार हैं; इसलिए यहाँ 'राम' अनुक्त या अप्रधान कर्त्ता है।

कर्त्ता में चिह्न-प्रयोग

कर्त्ता कारक के चिह्न हैं—ने से, और शून्य। कर्त्ता का 'ने' चिह्न—प्रायः अनुक्तकर्त्ता में 'ने' चिह्न आता है। अर्थात्—

(१) सकर्मक क्रियाओं के सामान्यभूत, आसन्नभूत, पूर्णभूत और संदिग्धभूत कालों में कर्त्ता के आगे ने चिह्न आता है; जैसे—मैंने पुस्तक पढ़ी, राम ने भात खाया है। उसने खेल देखा था और मोहन ने फल खाया होगा इत्यादि।

अपवाद—(क) बकना, बोलना, भूलना, लाना (ले+आना) और लेजाना—इन क्रियाओं में सकर्मक होने पर भी कर्त्ता का 'ने' चिह्न किसी हालत में प्रयुक्त नहीं होता है। हाँ, कुछ पुराने लेखकों ने उक्त सकर्मक क्रियाओं के सामान्य, आसन्न, पूर्ण, और संदिग्ध भूतकालों में 'ने' का प्रयोग किया है। पर

अब ऐसा प्रयोग मान्य नहीं है। यदि सजातीय कर्म के साथ बोलना क्रिया उक्त चारो भूत कालों में प्रयुक्त हो तो कोई-कोई अब भी 'ने' चिह्न का प्रयोग करते हैं; जैसे उसने कई बोलियाँ बोलीं।

(ख) समझना, जनना, सोचना और पुकारना इन सकर्मक क्रियाओं में कहीं तो 'ने' चिह्न प्रयुक्त होते हैं और कहीं नहीं होते हैं। जैसे—गाय ने बछड़ जना, गाय बछड़ जनी। मैंने यह बात समझी, मैं यह बात समझा। वह पुकारा, उसने मोहन को पुकारा। मोहन सोचा, मोहन ने इस बात को सोचा होगा। "मैं समझी थी अपने मन में हम केवल हैं दोही"—(पथिक)।

प्रायः देखा जाता है कि अधिकांश लेखक अब उक्त क्रियाओं के चारो भूतकालों में 'ने' चिह्न का प्रयोग करने लग गये हैं। किसी-किसी का मत है कि उक्त क्रियाएं चारो भूतकालों में कर्म के साथ प्रयुक्त हों तो 'ने' चिह्न देना चाहिये और अगर कर्म-विहीन हों तो 'ने' का प्रयोग करना ठीक नहीं है।

(ग) सजातीय कर्म (Cognate object) लेने के कारण कभी-कभी अकर्मक क्रिया भी सकर्मक क्रिया हो जाती है। ऐसी अवस्था में यदि क्रिया उपर्युक्त चारो भूतकालों में रहे तो कहीं तो कर्त्ता का 'ने' चिह्न प्रयुक्त होता है और कहीं नहीं होता है ; जैसे—उसने मेरे साथ टेढ़ी चाल चली। सेना कई लड़ाइयाँ लड़ीं।

(२) जब संयुक्त क्रिया में दोनों खंड सकर्मक हों तो सामान्य आसन्न, पूर्ण और संदिग्ध भूतकालों में कर्त्ता का 'ने' चिह्न आता है; जैसे—मैंने भर पेट खा लिया।

अपवाद—(क) नित्यता-बोधक संयुक्त सकर्मक क्रिया में

अर्थात् जिस संयुक्त क्रिया के आगे 'करना' शब्द रहे उसमें 'ने' चिह्न कभी नहीं आता; जसे—मैं खाया किया।

अपवाद—(ख) जब संयुक्त क्रिया का कोई खंड अकर्मक रहे तो 'ने' चिह्न प्रायः नहीं आता।

(३) संयुक्त अकर्मक क्रिया का अन्तिम खंड 'डालना' हो तो सामन्य, आसन्न, पूर्ण और संदिग्ध भूतकालों में कर्त्ता का 'ने' चिह्न आता है परन्तु यदि अन्तिम खंड 'देना' हो तो विकल्प से आता है, जैसे—मैंने बैठे-बैठे रात भर जाग डाला। मैं बैठे-बैठे रात भर जाग दिया। उनने रात भर जाग दिया (दत्त)।

नोट—किसी-किसी व्याकरण में लिखा है कि हँस देना, रो देना और मुस्करा देना क्रियाओं के सामान्य, आसन्न, पूर्ण और संदिग्ध भूतकालों में कर्त्ता का 'ने' चिह्न कभी नहीं छूटता परन्तु आजकल के अधिकांश लेखक इस नियम की उपेक्षा कर अक्सर 'ने' का प्रयोग नहीं करते हैं।

(४) थूकना और खांसना—इन दो अकर्मक क्रियाओं के सामान्य, आसन्न, पूर्ण और संदिग्ध भूतकालों में लोग क़र्त्ता के साथ 'ने' चिह्न का प्रयोग करते हैं; जैसे—मैंने थूका। उसने खांसा।

से चिह्न—दरअसल कारक का से चिह्न तो करण और अपादान कारक के लिए है पर कभी-कभी कर्त्ता कारक में भी प्रयुक्त हो जाता है। जहाँ कर्त्ता में 'से' चिह्न का प्रयोग होता है वहाँ कर्त्ता करण के रूप में बदल जाता है। जैसे—'मैंने भात खाया' में अगर 'मैं' के आगे 'से' को प्रयुक्त करना चाहें तो उसे करण में बदलकर क्रिया को भी, जो कर्तृप्रधान में है, कर्मप्रधान के रूप में कर देना पड़ेगा अर्थात् मुझसे भात खाया

गया। कहने का तात्पर्य्य यह है कि जब क्रिया कर्म-प्रधान या भावप्रधान के रूप में व्यवहृत होती हो तब कर्त्ता का 'से' चिह्न आता है अथवा कर्त्ता का रूप करणकारक में बदल जाता है जैसे—

मोहन पुस्तक पढ़ता है—मोहन से पुस्तक पढ़ी जाती है।
मैं ने रोटी खायी—मुझसे रोटी खायी गयी।
वह सोता है—उससे सोया जाता है।
वह फल तोड़ता है—उससे फल तोड़ा जाता है।
वह घर गया—उससे घर जाया गया।

शून्य चिह्न—शून्य चिह्न का तात्पर्य्य यह है कि जहाँ कारक की कोई विभक्ति प्रगटरूप से नहीं रहे। कर्त्ता कारक में भी कभी-कभी प्रत्यक्ष-रूप से कोई विभक्ति नहीं आती है, ऊपर बतायी गयी जिन-जिन अवस्थाओं में कर्त्ता में 'ने' और 'से' चिह्न प्रयुक्त होते हैं उन-उन अवस्थाओं को छोड़कर शेप अवस्थाओं में कर्त्ता के आगे कोई विभक्ति प्रगट-रूप से नहीं आती है अर्थात् कर्त्ता का शून्य चिह्न आता है। जहाँ जहाँ कर्त्ता में शून्य चिह्न आता है वहाँ वहाँ उसकी क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्त्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होते हैं। इसलिए केवल भाव-प्रधान क्रिया को छोड़ कर, जिसमें कर्त्ता का से चिह्न रहता है पर कर्त्ता उक्त-रूप में होता है, शेप सभी उक्त कर्त्ताओं में 'शून्य' चिह्न ही प्रयुक्त होता है। कुछ नियम यहाँ दिये जाते हैं—

(१) थूकना और खांसना को छोड़कर सभी अकर्मक क्रियाओं के किसी भी काल में।

(२) वर्तमान, भविष्यत् और अपूर्ण तथा हेतुहेतुमद्भूत-काल में आने वाले कर्त्ताओं में।

(३) संयुक्त क्रिया का कोई भी खंड अगर अकर्मक हो तो उस हालत में।

(४) नित्यता-बोधक सकर्मक संयुक्त क्रिया में।

(५) बकना, भूलना, लाना, बोलना, आदि सकर्मक क्रियाओं के किसी भी काल में।

इनके अतिरिक्त जहाँ जहाँ 'ने' चिह्न के प्रयोग में अपवाद माना गया है वहाँ वहाँ 'शून्य' चिह्न प्रयुक्त होता है और जहाँ जहाँ 'ने' विकल्प से आने की बात कही गयी है वहाँ वहाँ 'शून्य' चिह्न भी विकल्प से ही आता है।

२—कर्म

कर्म कारक प्रायः सकर्मक क्रियाओं के साथ आता है। कर्म भी कर्त्ता की नाईं दो प्रकार से वाक्य में प्रयुक्त होता है—एक प्रधान रूप से दूसरा अप्रधान रूप से। जहाँ वाक्य में क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्म के लिंग वचन और पुरुष के अनुसार हों वहां कर्म प्रधान या उक्त कहलाता है; परन्तु जहाँ वाक्य में क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार न होकर कर्त्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार हों वहाँ कर्म अप्रधान या अनुक्त कहलाता है; जैसे—स्त्री से कपड़ा सीया जाता है—यहाँ 'जाता है' (क्रिया) के लिंग, वचन और पुरुष 'कपड़ा' (कर्म) के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार आये हैं इसलिए कपड़ा प्रधान या उक्त कर्म है। फिर स्त्री कपड़ा सीती है' वाक्य में 'सीती है' (क्रिया) के लिंग, वचन और पुरुष 'कपड़ा' (कर्म) के अनुसार न होकर स्त्री (कर्त्ता) के अनुसार हैं इसलिए 'कपड़ा' अप्रधान या अनुक्त कर्म है।

कोई-कोई सकर्मक क्रिया दो कर्म लेती हैं। ऐसी क्रियाएं द्विकर्मक कहलाती हैं और दोनों कर्मों में से एक कर्म मुख्य और दूसरा गौण कर्म कहलाता है, जैसे—उसने मुझे खेल दिखाया। उसने मुझे हिसाब बताया। इन वाक्यों में से प्रत्येक वाक्य में दो कर्म आये हैं। प्रायः देखा जाता है कि ऐसे कर्मों में से एक वस्तुबोधक और दूसरा प्राणिबोधक होता है। वस्तुबोधक को मुख्य कर्म और प्राणिबोधक को गौण कर्म कहते हैं।

सजातीय कर्म (Cognate object)—यदि किसी अकर्मक क्रिया के साथ उसीके धातु से बना हुआ या मिलता-जुलता कर्म आवे तो वह सजातीय कर्म कहलाता है, जैसे—मैं खेल खेला, वह दौड़ दौड़ा, सेना लड़ाई लड़ी इत्यदि।

कर्म के चिह्न

कर्म कारक के चिह्न शून्य और को हैं।

शून्य चिह्न—(१) जब वाक्य में क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्म के अनुसार हों तो वहां कर्म कारक के आगे कोई विभक्ति प्रत्यक्ष होकर नहीं आती है अर्थात् उक्त कर्म में शून्य चिह्न आता है; जैसे उसने भली बात कही। यानी से फल खाया गया इत्यादि।

(२) द्विकर्मक क्रिया में जब दोनों कर्म रहें तो मुख्य कर्म में शून्य चिह्न आता है; जैसे—मोहन मुझे गीता पढ़ाते हैं। राम ने मुझे पूरियाँ खिलायीं इत्यादि।

(३) कर्म के रूप में आयी हुई अप्राणिवाचक संज्ञाओं और छोटे-छोटे जीवों के लिए भी कर्म की कोई-कोई विभक्ति प्रगट होकर नहीं आती ; जैसे मैं भात खाता हूँ।

को विभक्ति—(१) जहाँ कर्म अनुक्त या अप्रधान रहे वहाँ उसके साथ कर्म का 'को' चिह्न आता है; जैसे—वह चन्द्रदेव को देख रहा है। कच्चे फलों को मत तोड़ो इत्यादि।

(२) जहाँ मुख्य और गौण दोनों कर्म रहें वहाँ गौण कर्म में प्रायः 'को' चिह्न प्रयुक्त होता है। गौण कर्म प्रायः सम्प्रदान कारक को भी प्रतिध्वनित करता है; जैसे—भागवत ने मुझे एक फूल दिया। मास्टर साहब सतीश को रामायण पढ़ाते हैं इत्यादि।

नोट—कर्म अगर सर्वनाम रहे तो कहीं-कहीं 'को' के बदले 'ए' चिन्ह आता है; जैसे—मैंने उसे पुकारा। कमलाकान्त ने मुझे बुलाया था इत्यादि।

'कहना, पूछना, जाँचना, पकाना' आदि क्रियाओं के साथ कभी-कभी कर्म का 'को' न प्रयुक्त होकर, अपादान कारक का 'से' चिह्न आता है; जैसे—आपने उस दिन मुझसे कुछ भी नहीं पूछा। वह मुझ से बिना कुछ कहे चला गया। दरिद्र धनी से जाँचता है इत्यादि।

३—करण कारक

जिस कारक के द्वारा कर्त्ता काम करे उसे करण कारक कहते हैं। इसका चिह्न 'से' है। कहीं कहीं द्वारा, के द्वारा, आदि चिह्न भी करण के लिए आते है। यहाँ पर करण के कुछ उदाहरण दिये जाते हैं—

'हाथ से' खाते हैं। मुझे केवल 'आप से' सरोकार है। 'ईख से' शक्कर, 'शक्कर से' चीनी और 'चीनी से' अनेक मिठाइयाँ बनती हैं। विक्टोरिया 'जहाज के द्वारा' वह लंडन गया। 'उसी के द्वारा' मेरा काम हो सकता है। 'नौकर के द्वारा' चिट्ठी भेजवा दी इत्यादि।

नोट—कहीं-कहीं करण कारक में 'से' चिन्ह लुप्त भी रहता है; जैसे—'न कानों सुनी न आँखों देखी'। मैं तुझे 'आँखों देखी' बात कह रहा हूँ इत्यादि।

४—सम्प्रदान

जिसके लिए कर्त्ता काम करे वह सम्प्रदान कारक है। इसके चिह्न हैं—को या के लिए। कहीं-कहीं 'के निमित्त' 'के हितार्थ' 'के अर्थ' 'के वास्ते' आदि चिह्न भी सम्प्रदान कारक के चिह्न माने जाते हैं। जैसे—'गरीब को' धन दो। 'भूखे को' भोजन और 'प्यासे को' पानी दो। राम ने अपने 'लड़के के लिए' एक पुस्तक खरीदी। यह 'आप को' शोभा नहीं देती। ये फूल 'पूजा के निमित्त' लाये गये हैं। 'युद्ध को' चल दिया। 'मेरे लिए' यही उपाय बच गया है। दुःख 'नाम का' भी न रहा। आप के वास्ते मैं सब कुछ 'करने को' तैयार हूँ। 'किसके अर्थ' इतना दुःख सह रहे हो। कवीन्द्र रवीन्द्र 'योरोप के लिए' रवाने हो गये इत्यादि।

५—अपादान

अपादान कारक का चिह्न 'से' है। इस कारक के उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं। 'पेड़ से' पत्ते गिरे। 'विद्या से' हीन पुरुष पशु के समान है। 'पटने से' कल मैं रवाना हो जाऊँगा। 'पाप से' दूर भागना चाहिये। अरे, यह कहाँ से टपक पड़ा। 'आसमान से' ओले बरसने लगे। गंगा नदी 'हिमालय पहाड़ से' निकली है। वे 'मुझसे' अलग रहते हैं। नशा से हानि है इत्यादि।

६—सम्बन्ध

यों तो सम्बन्ध कारक के चिह्न 'का, के, की' हैं पर सर्वनाम

में 'रा, रे, री' और 'ना, ने, नी' होते हैं, जैसे—'राम की' गाय; 'दूध का' दूध; 'पानी का' पानी; 'दूध का' धोया; 'पीने का' पानी; 'सारा का' सारा बरबाद हो गया; 'आफत का' मारा मैं; 'अपना' काम देखो; मैं यह भार 'अपने' ऊपर नहीं ले सकता; 'मेरी' आखों के' तारे; 'मेरा' क्या लोगे; 'कहाँ की' आफ़त आयी इत्यादि

७—अधिकरण

आधार को अधिकरण कारक कहते हैं। आधार तीन प्रकार के होते हैं; पहला वह है जिसके किसी अवयव से संयोग हो, दूसरा वह है जिससे किसी विषय का बोध हो और तीसरा वह है जिसमें आधेय सम्पूर्णरूप से व्याप्त हो। अधिकरण के चिह्न 'में, पर, पै, ऊपर' आदि हैं। उदाहरण—(१) मैं चौकी पर बैठा हूँ। राम फुलवारी में टहल रहा है। सब शिक्षकों के ऊपर हेडमास्टर हैं। (२) ईश्वर में ध्यान लगाओ। मुझमें वह आत्मबल कहाँ? (३) तिल में तेल है। सब के हृदय में ईश्वर वास करते हैं। इत्यादि।

८—सम्बोधन

सम्बोधन कारक के चिह्न हैं—हे, हो, अरे, अरी, री इत्यादि। अरी, री स्त्रीलिंग सम्बोधन में प्रयुक्त होते हैं। कभी-कभी सम्बोधन में कोई चिह्न नहीं आता है। जिस प्रकार अन्य कारकों के चिह्न उन कारक जताने वाले शब्दों के अंत में व्यवहार में लाये जाते हैं उसी प्रकार सम्बोधन के चिह्न शब्दों के अंत में नहीं आते बल्कि पहले ही आते हैं; जैसे—

'अरे, राम', यह तुमने क्या अनर्थ किया। हे ईश, गरीब की सुधि लो। मोहन! तुम क्या रह रहकर गुनगुना रहे हो।

अन्य ज्ञातव्य बातें

कारक की विभक्तियाँ संस्कृत विभक्तियों से बिलकुल भिन्न हैं। प्राकृत में व्यवहृत विभक्तियों का अपभ्रंश होते होते हिन्दी-कारक की विभक्तियाँ बनी हैं। इन विभक्तियों के लिखने के सम्बन्ध में भी हिन्दी के विद्वानों में मतभेद है। किसी-किसी का मत है कि हिन्दी में कारक की विभक्तियाँ जिन कारकों के लिए प्रयुक्त हों उनके साथ मिलाकर लिखना चाहिये और किसी-किसी का कथन है कि विभक्तियों को शब्द से अलग लिखना ही ठीक है, विभक्ति मिलाकर लिखने के पक्षवाले अपनी पुष्टि संस्कृत व्याकरण के आधार पर करते हैं। उनका कहना है कि विभक्तियाँ स्वतन्त्र नहीं हैं और न कभी स्वतन्त्र रूप से प्रयुक्त होती हैं। इस लिए जिस प्रकार संस्कृत में ये शब्द के साथ मिलाकर लिखी जाती हैं उसी प्रकार हिन्दी में भी मिलाकर लिखना ठीक है। दूसरे मत के पृष्ठ-पोषकों का कहना है कि कारक की विभक्तियों के सम्बन्ध में संस्कृत व्याकरण के नियम लागू नहीं हो सकते हैं; क्योंकि इनका सम्बन्ध संस्कृत से बिलकुल नहीं है। ये तो प्राकृत-भाषा की विभक्तियों के अपभ्रंश रूप हैं।

जो हो, हमारे विचार से ये दिलीलें व्यर्थ हैं चूंकि चाहे विभक्तियाँ मिलाकर लिखी जायँ या पृथक् रूप से, शब्द के अर्थ में कोई परिवर्तन होता नहीं—'राम को' का वही अर्थ प्रतिध्वनित होता है जो 'रामको' का है—इसलिए इस बात के लिए सिर खपाना व्यर्थ है, तो भी हम नवसिखुए लेखकों के हितार्थ दोनों मतों की अच्छाई और खराबी का थोड़ा-बहुत दिग्दर्शन करा देते हैं, इस विषय पर विचार करने के लिए हम न तो संस्कृत

व्याकरण की शरण लेंगे और न प्राकृत व्याकरण की। किसी में इस विषय में कुछ रहे हमें उससे मतलब नहीं। हिन्दी को एक स्वतन्त्र भाषा मानकर दूसरी भाषा के सहारा से इसे पृथक् करने के उद्देश्य से हम स्वतन्त्र रूप से इस पर विचार करेंगे।

(१) विभक्तियों को साथ लिखना—

(क) जब प्रत्यय, जो एक खास अर्थ रखता है और विभक्ति की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र है, किसी शब्द में साथ मिलाकर लिखा जाता है तो क्या कारण है कि विभक्ति, जो अपना कोई खास अर्थ नहीं रखती और सर्वथा शब्दों के अधीन है साथ मिलाकर नहीं लिखी जायगी ?

(ख) उसी प्रकार उपसर्ग भी जब शब्दों के साथ मिलाकर ही लिखे जाते हैं तो विभक्ति भी मिलाकर लिखने में क्या आपत्ति है।

(ग) जब भिन्न-भिन्न अर्थ के दो शब्द भी सामासिक शब्द बनाने के लिए साथ मिलाकर प्रयुक्त होते हैं तो शब्द को पद बनाने की गरज़ से व्यवहार की जानेवाली विभक्ति क्यों अलग लिखी जाय ?

(घ) लिंग, वचन, और क्रियादि को परिवर्तन करने के लिए जिन विभक्तियों का प्रयोग करते हैं वे भी शब्दों के साथ संयुक्त कर दी जाती हैं तो कारक की विभक्तियों को क्यों पृथक् कर दिया जाय ?

(ङ) हिन्दी के धुरन्धर विद्वान प्रो० रामदास गौड़ का कहना है कि विभक्तियों को साथ मिलाकर लिखने में आर्थिक दृष्टि से भी बहुत लाभ है। एक तो कागज़ की बचत होती है, दूसरे जब हिन्दी में तार देना हो और हिन्दी प्रेमियों को हिन्दी में ही तार देना उचित है, तो अगर विभक्ति को अलग लिखने

की प्रथा चल जायगी तो वह भी एक अलग शब्द समझी जायगी और तार देने में शब्द बढ़ जाने से कीमत भी अधिक देनी पड़ेगी। जैसे—'राम को'—को अगर Rama ko लिखेंगे तो एक शब्द माना जायगा पर अगर Rama ko लिखेंगे तो दो शब्द मान लिया जायगा। कहते हैं गौड़ महाशय को ऐसा मौका भी मिला है और वे प्रमाण के साथ अपने निश्चय पर अटल रहकर पैसे की बचत कर पाये हैं।

(२) विभक्ति को अलग लिखना—

(क) अगर विभक्तियाँ अलग नहीं लिखी जायँगी तो जिन शब्दों के आगे 'जी' रहे उनमें विभक्तियाँ किस ढंग से जोड़ी जायँगी। अगर 'रामजीने' लिखा जाय तो देखने में बिल्कुल भद्दा मालूम पड़ेगा और अगर रामने जी लिखा जाय तो अर्थ स्पष्ट नहीं होगा।

(ख) जो 'हो' को शब्दों के साथ मिलाकर लिखने के पक्ष में हैं उन्हें भी विभक्तियों को अलग लिखने में विशेष सुविधा है। जैसे—'मैंहीने' लिखना भद्दा सा मालूम होता है। इसी तरह विभक्तियों को साथ मिलाकर लिखने से अनेक कठिनाइयाँ हैं।

अस्तु। ऊपर दोनों मतों के विषय में हम अपना स्वतन्त्र विचार प्रगट कर चुके। अब नवसिखुए लेखकों को उचित है कि उन्हें जो मत अधिक रुचिकर हो वही मानें। फिर भी उन्हें ख्याल रखना चाहिये कि सम्बन्ध कारक में आनेवाले सर्वनाम की विभक्तियों को उन्हें अलग नहीं करना पड़ेगा चाहे वे अन्य विभक्तियों को भले अलग कर दें। तुम्हा रा लिखना तो किसी भी हालत में उचित नहीं है। पर साथ ही सम्बोधन कारक के

चिह्नों को, जो विभक्ति नहीं माने गये हैं—साथ मिलाकर नहीं लिखना चाहिये चाहे अन्य विभक्तियों को साथ मिलाकर ही क्यों न लिखा जाय। 'हेमोहन' के बदले—हे मोहन लिखना ठीक है।

अभ्यास

१—सकर्मक और अकर्मक से बनी कैसी संयुक्त क्रियाओं में कर्ता का 'ने' चिह्न आता है ?

Which संयुक्त क्रियायें composed of both सकर्मक and अकर्मक take 'ने' after their nominatives ?

२—'ने' चिह्न का प्रयोग कहाँ-कहाँ होता है, सोदाहरण लिखो।

Cite and illustrate the use of 'ने'.

३—शुद्ध करो।

Correct the following.

कैकेई कही,—अयि मन्थरे ! तू ही मेरी हितकारिणी है।

मैं मोहन को अंकगणित को पढ़ाया था।

जिसका लाठी उसका भैंस। मैं हँस डाला। उसने रात भर नाटक देखा किया।

४—का, के और की का व्यवहार करते हुए पाँच हिन्दी के वाक्य बनाओ।

Frame five sentences in Hindi illustrating the use of का, के and की।

५—एक ऐसा वाक्य बनाओ जिसमें आठों कारकों का प्रयोग हो।

Make a sentence illustrating the use of all कारक.

६—कर्त्ता के 'से' चिह्न का प्रयोग कर चार वाक्य बनाओ।

Frame four sentences illustrating the use of 'से' in nominatives.

७—कारक की विभक्तियों को शब्दों के साथ मिलाकर लिखना अच्छा है या अलग कर—कारण सहित समझाओ।

विभक्ति of कारक should be mingled with the words or not—show the causes.

पञ्चम परिच्छेद

शब्दों का अपप्रयोग

शब्दों को वाक्य में प्रयुक्त करते समय लड़के प्रायः भूलें किया करते हैं। कहीं-कहीं तो यहाँ तक देखा जाता है कि अच्छे-अच्छे लेखक भी शब्दों का अपप्रयोग कर बैठते हैं, आजकल की पुस्तकों और समाचार-पत्रों तक में अपप्रयोग देखने में आता है। शब्दों में वर्ण, मात्रा आदि देने में, शब्दों की संधि मिलाने में, समास के प्रयोग में तथा प्रत्यय आदि जोड़कर नये शब्दों को संगठित करने में अक्सर भूलें हो जाया करती हैं। नीचे कुछ ऐसे शब्द, जो प्रायः भूल से व्यवहृत होने लगे हैं, और उनके शुद्ध शब्द लिखे जाते हैं। लड़कों को इस पर विशेष ध्यान देना चाहिये।

१—मात्रा और वर्ण सम्बन्धी अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अगामी	आगामी	बेराम	बीमार
गर्द्धव	गर्दभ	जागृत	जागरित
प्रन्तु	परन्तु	निरिह	निरीह
अर्थात	अर्थात्	पैत्रिक	पैतृक

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
महत्व	महत्त्व	ब्रिटिश	बृटिश
श्रवन	श्रवण	भविष्यत	भविष्यत्
भरथ	भरत	उज्वल	उज्ज्वल
दुर्णाम	दुर्नाम	घनिष्ठ	घनिष्ट
फाल्गुण	फाल्गुन	यथेष्ठ	यथेष्ट
सिंघ	सिंह	सन्तुष्ट	सन्तुष्ट
आधीन	अधीन	दशाहारा	दशहरा
द्वारिका	द्वारका	भाष्कर	भास्कर
		आशिर्वाद	आशीर्वाद

२—सन्धि सम्बन्धी अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अत्योक्ति	अत्युक्ति	अक्षोहिणी	अक्षौहिणी
उपरोक्त	उपर्युक्त	जगवन्धु	जगद्बन्धु
इतिपूर्व	इतःपूर्व	वारम्वार	बारंबार
हस्ताक्षेप	हस्तक्षेप	सन्मान	सम्मान
सन्मुख	सम्मुख	भाष्कर	भास्कर
जगतेश	जगदीश	सदोपदेश	सदुपदेश
पुरष्कार	पुरस्कार	मनहर	मनोहर
सदोपदेश	सदुपदेश	गमनान्तर	गमनानन्तर
निरोग	नीरोग	तदोपरान्त	तदुपरान्त
पश्वाधम	पश्वधम	दुरावस्था	दुरवस्था
मनोकष्ट	मनःकष्ट	मतन्तर	मतान्तर
		द्वीपानन्तर	द्वीपान्तर

३—प्रत्यय सम्बन्धी अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
आवश्यकीय	आवश्यक	मान्यनीय	माननीय,मान्य
उत्कर्षत	उत्कर्ष	धैर्यता	धैर्य
दरिद्रता	दारिद्र्य,दरिद्री	कौशलता	कौशल
भाग्यमान	भाग्यवान्	सौजन्यता	सौजन्य
विद्यमान्	विद्यमान	पष्ठम	षष्ठ
महानता	महत्ता	सौन्दर्यता	सौन्दर्य
अकाट्य	अखण्डनीय	सिञ्चित	सिक्त
सराहनीय	श्लाघनीय	व्यवहारित	व्यवहृत
भागिरथी	भागीरथी	मैत्रता	मैत्री, मित्रता
त्रिवार्षिक	त्रैवार्षिक	पौर्वात्य	पौरस्त्य, प्राची
बुद्धिवान्	बुद्धिमान्	मिश्र	अमिश्र,
		सप्ताहिक	साप्ताहिक

४—समास सम्बन्धी अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
कृतघ्नी	कृतघ्न	निरोगी	नीरोग
गुणीगण	गुणिगण	देवीदास	देविदास।
निराशा	नैराश्य	दिवारात्रि	दिवारात्र
पक्षीशावक	पक्षिशावक	निर्दोषी	निर्दोष
महाराजा	महाराज	निर्धनी	निर्धन
महत्मागण	महात्मागण	सक्षम	क्षम
कालीदास	कालिदास	सतोगुण	सत्त्वगुण
		भ्रातागण	भ्रातृगण

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
निलज्जा	निर्लज्ज	निरपराधी	निरपराध
आधिक्यता	आधिक्य	एकत्रित	एकत्र
प्रफुल्लित	प्रफुल्ल	पितामाता	मातापिता

५—पुनरुक्ति सम्बन्धी अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध
यौवनावस्था	यौवन, युवास्था
अधीनस्थ	अधीन
समतुल्य	सम, तुल्य
अपने स्वाधीन	स्वाधीन
असंख्य प्राणिगण	असंख्य प्राणी
पूज्यनीय,	पूज्य, पूजनीय
ग्राह्ययोग्य	ग्राह्य, ग्रहण योग्य
पूज्यास्पद	पूजास्पद, पूज्य
गोप्यनीय	गोप्य, गोपनीय

६—विशेषण और विशेष्य सम्बन्धी अशुद्धियाँ

अशुद्ध	शुद्ध
लब्धप्रतिष्ठित	लब्धप्रतिष्ठ
लाचारवश	लाचारीवश
निश्चय पदार्थ	निश्चित पदार्थ
आश्चर्य दृश्य	आश्चर्य जनक दृश्य
सकुशल पूर्वक,	सकुशल, कुशलपूर्वक
सविनय पूर्वक,	सविनय, विनयपूर्वक
वास्तविक में,	वास्तव में　　इत्यादि ।

नोट—(१) कुछ ऐसे भी शब्द हैं जो दो तरह से लिखे जाते हैं और दोनों शुद्ध माने जाते हैं। जैसे—अन्तर्राष्ट्रीय-अन्तरराष्ट्रीय; राष्ट्रिय-राष्ट्रीय, चिह्न-चिन्ह, कमिशन-कमीशन आदि।

(२) पटने जिले में बोलने के समय लोग प्रायः अमरूद का अरमूद, आदमी का अमदी, पहुँचना का चहुँपना, मतलब का मतबल आदि प्रयोग करते हैं।

(३) कुछ जिलों के लोग घोड़ा को घोरा, बड़ा को बरा, घबड़ाहट को घबराहट अथवा 'ड़' को 'र' कहते हैं और कभी-कभी लिख भी देते हैं।

(४) द्वन्द्व-समास में अगर दोनों लिंगों के शब्द संयुक्त करना हो तो पहले खण्ड में स्त्रीलिंग शब्द को रखना चाहिये। जैसे—स्त्रीपुरुष, मातापिता आदि।

(५) लड़के ब और व लिखने में प्रायः भूल किया करते हैं। बोलने में तो प्रायः लोग विशेष कर बिहार वाले 'व' का उच्चारण 'ब' ही करते हैं, ऐसा नहीं चाहिये। विशेष कर लिखने के समय ब और व का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये। हिन्दी में क्रियाओं में प्रायः 'ब' ही रहा करता है।

अभ्यास

१—नीचे लिखे शब्दों को शुद्ध करो।

Write Correctly the following.

गान्डीव, एकत्रित, प्रमेश्वर, दर्शाण, पष्ठम, गृहस्त, आवश्यकोय, आश्चर्य दृश्य।

२—नीचे लिखे वाक्यों में आये अशुद्ध शब्दों को शुद्ध कर लिखो—Correct the following words used incorrectly, in the following sentences.

मैं लाचार वश वहाँ गया। वास्तविक में आज की रात बड़ी अन्धेरी है। जगतेश की कृपा से मैं सकुशल-पूर्वक घर पहुँच गया। आप का भविष्यत उज्वल प्रतीत होता है। मेरे लिए इतना ही यथेष्ठ है। मैं आप की बातों से सन्तुष्ट हो गया।

विविध प्रश्न

१—एक ऐसा वाक्य बनाओ जिसमें सम्बन्ध और संबोधन को छोड़कर शेष सभी कारकों का व्यवहार हो।

Frame a sentence in which there are instances of all the cases except सम्बन्ध and सम्बोधन।

२—इनके भेद बतलाते हुए अलग-अलग वाक्य बनाओ।

Make short sentences illustrating the difference between—

प्रणय, प्रेम। अलौकिक, अस्वाभाविक। चिन्ता, दुःख।

३. Write sentences to illustrate the use of the following. नीचे लिखे शब्दों का प्रयोग कर वाक्य बनाओ। अधमुआ, चकनाचूर, भला-चंगा, करतूत और उथल-पुथल। (M. E. 1915)

४—नीचे लिखे शब्दों के अर्थ लिखो।

Give the meaning of the following.

गगनचुम्बी अट्टालिका, अंशुमाली, शुभ्र ज्योत्स्ना, राका-शशि, दीरघ दाघ निदाघ, दुराराध्य, अनन्त, ऋतुराज और प्रावृट।

५—नीचे लिखे शब्दों के विपरीतार्थक अर्थ लिखो।

Give the antonyms of the following.

अथ, शुरू, लौकिक, दिन, गरफ़ी, झूठ, भलाई, आलोक, मृत्यु और शान्ति।

६—नीचे लिखे शब्दों का लिङ्ग निर्णय करो।

Determine the gender of the following.

फैसला, फासला, लीग, मिटिंग, कोर-कसर, पुश्त, स्वागत और खैर।

७. Are there exceptions to the general rule in Hindi "that names of lifeless things ending in 'e' are Feminine" ? give examples. निर्जीव इकरान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं। क्या इस नियम के अपवाद भी हैं ? उदाहरण दो। (M. E. 1913)

८—नीचे लिखे प्रत्येक जोड़े शब्द में भेद बताओ।

Distinguish between.

उपकरण—उपादान। अहंकार—अभिमान। नीर—नीड़। वसना—वासना।

तृतीय खण्ड

वाक्य-विचार

प्रथम परिच्छेद

वाक्य-रचना

(Construction of the sentences)

वाक्य (Sentence)

वाक्य—ऐसे पद-समूह के योग को जिससे पूरा-पूरा भाव प्रकाशित हो वाक्य कहते हैं। वाक्य भाषा का एक मुख्य अंग है। प्रत्येक वाक्य के अंत में समापिका क्रिया का होना आवश्यक है। जैसे—मोहन बाग में टहल रहा है। परन्तु कभी-कभी समापिका क्रिया के न रहने पर भी वाक्य हो सकता है। जैसे—किसी ने पूछा—'आप कहाँ जा रहे हैं?' उत्तर मिला—'कलकत्ते।' इस जगह 'कलकत्ते' कहने से ही कहनेवाले का स्पष्ट अभिप्राय समझ में आ जाता है, इसलिए 'कलकत्ते' समापिका क्रिया के न रहते हुए भी वाक्य है। सारांश यह है कि ऐसे पद या पद-समूह को वाक्य कहते हैं जिससे पूरा-पूरा अर्थ प्रकाशित हो चाहे अंत में समापिका क्रिया रहे अथवा न रहे।

किसी भाव को स्पष्ट रूप से प्रकाशित करने के लिए प्रत्येक वाक्य में उसमें व्यवहृत पद-समूह में परस्पर सम्बन्ध होना भी ज़रूरी है अन्यथा वाक्य का अर्थ समझ में नहीं आता है और वह वाक्य ऊटपटाँग सा हो जाता है। वाक्य के अन्तर्गत पदों के सम्बन्ध को आकांक्षा, योग्यता और क्रम कहते हैं। इसीलिए वाक्य की एक परिभाषा यह भी हो सकती है कि आकांक्षा, योग्यता और क्रमयुत वाक्य-समूह को वाक्य कहते हैं।

आकांक्षा—पूरा मतलब समझने के लिए एक पद को सुन कर सुननेवालों के हृदय में दूसरे पद को सुनने की जो स्वाभाविक इच्छा उत्पन्न होती है उसी इच्छा को आकांक्षा कहते हैं। जैसे—अगर किसी ने कह दिया, 'आकाश में' तो इसके बाद और कुछ सुनने की स्वाभाविक इच्छा होती है अर्थात् 'तारे टिमटिमा रहे हैं।'

योग्यता—जब वाक्य में पदों के अन्वय करने के समय अर्थ सम्बन्धी बाधा अथवा अयोग्यता सिद्ध न हो तो उसे योग्यता कहते हैं। जैसे—'माली जल से पौदे सींचता है।' यहाँ जल में पौदे को सींचने की योग्यता विद्यमान है पर अगर कोई यह कहे कि 'माली आग से पौदे सींचता है' तो यहाँ योग्यता के अनुसार पद का विन्यास नहीं हुआ; क्योंकि आग में पौदे को सींचने की योग्यता अथवा क्षमता कहाँ? आग से सींचने से तो पौदे लहलहाने के बदले उलटे सूख जाँयगे।

क्रम—योग्यता और आकांक्षायुत पदों को नियमानुकूल स्थापन करने की विधि को अथवा यों कहिये कि पद-स्थापन-प्रणाली विधि को क्रम कहते हैं। जैसे—"तारे" इसके बाद ही "टिमटिमाते हैं" लिखना चाहिये। नहीं तो क्रम-भङ्ग हो जायगा

और वाक्य का असली भाव ही नष्ट हो जायगा "मालिक का कर्त्तव्य है नौकर की सेवा करना" इस पद-समूह का भाव, क्रम ठीक न रहने से अच्छी तरह समझ में नहीं आता है, इसलिए इसे वाक्य नहीं कहेंगे। जब क्रम ठीक करने पर इसका रूप—"मालिक की सेवा करना नौकर का कर्त्तव्य है"—हो जायगा और पूरा मतलब समझ में आ जायगा, तब यह वाक्य हो जायगा।

वाक्यांश और वाक्य-खंड
(Phrase and clause)

वाक्यांश (Phrase)—वाक्य के एक-एक अंश का नाम वाक्यांश है। जैसे—'दुःख भोग चुकने पर', 'इतना सुनते ही' इत्यादि।

वाक्य-खंड (clause)—पदों के समूह को जिससे पूरा नहीं केवल आंशिक भाव प्रगट हो, वाक्य-खंड कहते हैं। वाक्य-खंड से पूरा-पूरा मतलब समझ में नहीं आता। एक वाक्य-खंड बराबर दूसरे वाक्य-खंड की अपेक्षा रखता है। जैसे—उसने ज्योंही मेरी बात सुनी। जब वह मध्यमा परीक्षा में सम्मिलित हुआ आदि।

वाक्य-खण्ड के दो भेद हो सकते हैं—एक प्रधान खण्ड (Principal clause), दूसरा आश्रित या अप्रधान खण्ड (Subordinate clause)। जैसे—'जब उसने बी० ए० की परीक्षा पास की'—इतना कहने से पूरा अर्थ नहीं प्रगट होता है। पूरा अर्थ प्रदर्शित करने के लिए इस खण्ड में 'तो उसके जी में जी आया' या इसी प्रकार का एक खण्ड-वाक्य और जोड़ना पड़ेगा। इसमें पहले खण्ड का भाव दूसरे खण्ड की अपेक्षा करता है।

अतएव पहला खण्ड अप्रधान या अधीन या आश्रित खण्ड और दूसरा प्रधान खंड कहलावेगा।

गर्भितवाक्य—कभी-कभी किसी वाक्य के अन्तर्गत छोटे छोटे वाक्य व्यवहार में आते हैं जो गर्भितवाक्य (Parenthetical sentence) कहलाते हैं। जैसे—उसकी दुःख भरी कहानी—ओह कैसी करुणा-जनक थी—सुनते सुनते मेरी आखों में आँसू आ गये। इस वाक्य में 'ओह! कैसी करुणा-जनक थी' वाक्य गर्भितवाक्य है।

अभ्यास

१—वाक्य, वाक्यांश और खण्ड-वाक्य किसे कहते हैं सोदाहरण समझाओ।

Define a sentence, phrase and clause and give the examples.

२—आकांक्षा, योग्यता और क्रम से क्या समझते हो?

What do you understand by आकांक्षा, योग्यता and क्रम?

वाक्यांग (Parts of sentences)

प्रायः प्रत्येक वाक्य के दो अंग होते हैं—उद्देश्य और विधेय।

वाक्य में जिसके विषय में कुछ कहा जाता है उसे उद्देश्य (Subject) और उद्देश्य के विषय में जो कुछ कहा जाता है उसे विधेय (Predicate) कहते हैं। जैसे—मोहन पढ़ता है। इस वाक्य में 'मोहन' के विषय में कुछ कहा गया है इसलिए 'मोहन' उद्देश्य है और उद्देश्य 'मोहन' के विषय में यह कहा गया है कि वह 'पढ़ता है' इसलिए 'पढ़ता है' विधेय है। प्रायः उद्देश्य और विधेय भिन्न-भिन्न तरह के पदों के मिलने से बढ़ जाया करते हैं।

किसी वाक्य में उद्देश्य और विधेय के अलावे अन्य जितने पद होते हैं उनमें से कुछ तो उद्देश्य के सहकारी होते हैं और कुछ विधेय के। सहकारी पद सहित मुख्य उद्देश्य, उद्देश्य के अन्तर्गत और सहकारी पद सहित मुख्य विधेय, विधेय के अन्तर्गत समझे जाते हैं।

उद्देश्य के भेद—वाक्य में उद्देश्य नीचे लिखे रूप में आते हैं; इसलिए साधारणतः उद्देश्य के निम्नलिखित शब्दभेद माने जाते हैं—

१—संज्ञा उद्देश्य (Noun)—"मोहन" पढ़ता है।

२—सर्वनाम (Pronoun)—'वह' देखता है।

३—विशेषण (Adjectives-used as nouns)
(जब संज्ञा या विशेष्य के रूप में व्यवहृत होता है)—'गरीब' भूख से मरते हैं।

४—क्रियार्थक संज्ञा (Verbal noun) 'टहलना' लाभप्रद है।

५—वाक्यांश (Phrase) (विशेष्य रूप में) } 'दैव के भरोसे बैठना' कायरों का काम है।

उद्देश्य का विस्तार (Adjunct to subject)—उद्देश्य के स्थान, रूप और गुण के स्वभावादि को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए वाक्य में जो पद जोड़े जाते हैं वे ही उद्देश्य के परिवर्द्धित पद कहलाते हैं। उद्देश्य कई तरह से परिवर्द्धित किये जाते हैं। यहाँ थोड़े से उदाहरण दिये जाते हैं।

(१) विशेषण से—'चंचल' बालक दौड़ता है। यहाँ 'बालक' उद्देश्य है और 'चंचल' विशेषण के द्वारा परिवर्द्धित किया गया है। उसी प्रकार सुगंधित पुष्प खिल रहे हैं, निर्मलचन्द्र हँस रहे हैं आदि। कभी-कभी एक ही उद्देश्य कई विशेषणों द्वारा

बढ़ाया जाता है जैसे—शीतल, मंद, सुगंध वायु बह रही है।

(२) सम्बन्ध कारक से—'मद्युप का' बालक दौड़ता है। यहाँ 'मद्युप का' सम्बन्ध पद से उद्देश्य का विस्तार हुआ है। इसी प्रकार 'राम का' लड़का स्कूल में पढ़ता है। 'दशरथ के' पुत्र राम ने रावण को मारा इत्यादि।

(३) विशेषण के रूप में व्यवहृत विशेष्य से; जैसे—'सम्राट् अशोक की राजधानी पाटलिपुत्र थी। यहाँ सम्राट् विशेष्य है पर विशेषण के रूप में व्यवहृत हुआ है।

(४) वाक्यांश के द्वारा—'परिवार के सहित' मोहन पटने से रवाना हो गये। यहाँ 'परिवार के सहित' वाक्यांश के द्वारा उद्देश्य का विस्तार किया गया है।

(५) क्रियाद्योतक से—'चलती हुई' ट्रेन उलट गयी, 'धोया' कपड़ा पहना करो। यहाँ 'चलती हुई' और 'धोया' क्रियाद्योतक पद के द्वारा उद्देश्य बढ़ाया गया है।

इसी प्रकार और भी कई प्रकार से उद्देश्य का विस्तार हो सकता है। फिर उद्देश्य के विस्तार के लिए व्यवहृत पद को भी उपर्युक्त ढंग से विशेषण आदि पदों के द्वारा बढ़ाया जाता है। जैसे—"पटने के रहने वाले सुप्रसिद्ध रईस "पं० वासुदेव नारायण का चंचल और तीव्र बुद्धिसम्पन्न" बालक अपने वर्ग में प्रथम रहता है।

विधेय के भेद—मुख्यतः विधेय के दो भेद हो सकते हैं—एक सरल विधेय, दूसरा जटिल विधेय। जहाँ एक ही क्रियापद पूरा अर्थ प्रकाशित करे वहाँ सरल विधेय होता है। जैसे—राम पुस्तक पढ़ता है। यहाँ 'पढ़ता है' एक ही क्रियापद से वाक्य का मतलब प्रगट हो जाता है इसलिए 'पढ़ता है' सरल विधेय है।

परन्तु जब विधेय अपूर्ण अर्थ प्रकाशक क्रिया हो और उसके साथ पूर्ण अर्थ प्रकाश करनेवाला कोई पद हो तो उस विधेय को जटिल विधेय कहते हैं। जैसे—दशरथ अयोध्या के 'राजा थे'। यहाँ पर केवल 'थे' क्रिया से वाक्य का पूरा मतलब प्रकाशित नहीं होता है और इसी हेतु मतलब पूरा करने के लिए 'थे' के पहले 'राजा' सहकारी पद जोड़ा गया है; अतएव उपर्युक्त वाक्य में केवल 'थे' नहीं बल्कि 'राजा थे' विधेय है। इस प्रकार का विधेय जटिल विधेय हुआ। जटिल विधेय की क्रिया के पहले पूर्ण अर्थ प्रकाशक सहकारी पद कई रूप में व्यवहार में आते हैं। कभी यह संज्ञा, कभी विशेषण, कभी क्रियाविशेषण और कभी सम्बंध कारक के रूप में आते हैं।

उदाहरण—

संज्ञा के रूप में—लॉर्ड रीडिंग भारत के 'वायसराय' थे।

विशेषण के रूप में—ग्रियर्सन साहब भारतीय भाषाओं के प्रकाण्ड 'विद्वान' हैं।

क्रियाविशेषण के रूप में—मोहन "वहाँ" है।

सम्बंध कारक के रूप में—आज से यह घर 'मेरा' हुआ।

जब वाक्य में विधेय सकर्मक क्रिया के रूप में आता है तो उसका कर्म विधेयवाच्य कहलाता है और विधेय का ही अंश माना जाता है। जैसे—मोहन 'पुस्तक' पढ़ता है इसमें 'पुस्तक' सहित 'पढ़ता है' विधेय है।

कर्म के रूप में—उद्देश्य की नाईं कर्म (Object) भी विशेष्य (संज्ञा), सर्वनाम और विशेष्य के समान व्यवहृत वाक्यांश, विशेषण तथा क्रियार्थक संज्ञा के रूप में आते हैं।

उदाहरण—

संज्ञा (विशेष्य)—हरि 'नाटक' देखता है।

सर्वनाम—राम 'उसे' मारता है।

विशेषण—मोहन 'शिव' को पूजता है।

क्रियार्थक संज्ञा—वह 'खाना' खाता है।

वाक्यांश—गणेश 'बहाना करना' बहुत सीख गया है।

कर्म का विस्तार (Adjunct to the object)—जिस प्रकार उद्देश्य का विस्तार किया जाता है उसी प्रकार विशेषण पद, सम्बन्ध पद, विशेषण के समान व्यवहृत विशेष्य पद, वाक्यांश और क्रियाद्योतक से कर्म भी बढ़ाया जा सकता है।

उदाहरण—

विशेषण से—वह 'शिक्षाप्रद' पुस्तक पढ़ता है।

सम्बन्ध पद से—सोहन 'पटने का' लड्डू खाता है।

विशेष्य से—सम्राट् चन्द्रगुप्त 'मन्त्री' चाणक्य को बड़ा मानते थे।

वाक्यांश से—उसने दूर ही से 'ध्यान में मग्न' मोहन को देख लिया।

क्रियाद्योतक से—प्रोफ़ेसर राममूर्त्ति 'चलती हुई' मोटर रोक लेते हैं।

विधेय का विस्तार (Adjunct to the predicate)—जिन पदों से विधेय की विशेषता प्रगट हो वे पद विधेय के विस्तार कहलाते हैं। साधारणतः क्रियाविशेषण, क्रियाविशेषण के समान भाववाले पद, वाक्यांश, पूर्वकालिक या असमापिका क्रिया, क्रियाद्योतक और कुछ कारक के पदों के द्वारा विधेय का विस्तार किया जाता है।

उदाहरण—

क्रियाविशेषण द्वारा—वह 'धीरे-धीरे' पढ़ रहा है। यहाँ 'धीरे-धीरे' क्रियाविशेषण 'पढ़ रहा है' के विधेय की विशेषता प्रगट करने के कारण विधेय का विस्तार है।

पद वाक्यांश द्वारा—वह 'भोजन करने के बाद ही' सो गया।

पूर्वकालिक क्रिया द्वारा—वह 'खाकर' सो गया।

क्रियाद्योतक द्वारा—रेलगाड़ी 'धक-धक करती हुई' चली जा रही है।

कुछ कारक पदों द्वारा—

(१) करण द्वारा—राम ने रावण को 'बाण से' मारा।

(२) सम्प्रदान द्वारा—उसने सब कुछ मेरे लिए ही किया।

(३) अपादान द्वारा—वह 'छप्पर से' कूद पड़ा।

(४) अधिकरण ,,—उसने गुप्तरूप से 'किले पर' धावा मारा।

अभ्यास

१—नीचे लिखे वाक्यों में उद्देश्य और विधेय बताओ।

Point out subject and predicate in the following sentences. हृदय दुःख से परिपूर्ण है। सम्राट् अशोक बौद्ध-धर्म के अनुयायी थे। वह स्नान कर रहा है। उसका जीवन धन्य है।

२—नीचे लिखे वाक्यों में उद्देश्य का विस्तार करो।

Enlarge the subjects in the following sentences.

अकबर ने पचास वर्ष राज्य किया। घोड़ा चर रहा है। रेलगाड़ी जा रही है। मोहन गाता है। बिल्ली बोलती है।

३—नीचे लिखे वाक्यों में विधेय का विस्तार करो

Enlarge the predicates in the following sentences

मोहन खाता है। राम पढ़ता है। तुझे यह काम करना होगा। वह ज्ञानी है।

४—नीचे लिखे वाक्यों में कर्म का विस्तार करो

Enlarge the objects in the following sentences.

वह रामायण पढ़ता है। स्त्री कपड़ा सीती है। गाय घास खाती है। लड़के फुटबाल खेल रहे हैं।

द्वितीय परिच्छेद

वाक्य-भेद (Division of sentences

स्वरूप के अनुसार

स्वरूप के अनुसार वाक्य के तीन भेद माने गये हैं। सरल, जटिल या मिश्र और संयुक्त या यौगिक वाक्य।

(१) सरल वाक्य (Simple sentence)—साधारणतः सरल वाक्य वह वाक्य है जिसमें एक कर्त्ता या उद्देश्य और एक समापिका क्रिया या विधेय रहता है। जैसे—घोड़ा दौड़ रहा है; इस में 'घोड़ा' उद्देश्य या कर्त्ता और 'दौड़ रहा है' विधेय या समापिका क्रिया है। इसलिए उक्त वाक्य सरल वाक्य है। अब पहले बताये गये नियमों के अनुसार यदि उद्देश्य और विधेय को परिवर्द्धित भी किया जाय तो वह सरल वाक्य ही रहेगा क्योंकि वह कितना ही बढ़ाया जायगा पर जब तक इसमें एक ही उद्देश्य और एक ही विधेय रहेगा तब तक यह सरल वाक्य ही कहलावेगा। जैसे—मोहन का लाल घोड़ा मैदान में बेलगाम होकर शान के साथ दौड़ रहा है।

(२) जटिल या मिश्र वाक्य (Complex sentence)—जिस वाक्य में एक उद्देश्य और एक विधेय मुख्य हो अथवा

एक सरल वाक्य हो और उसके आश्रित एक दूसरा अधीन या अंगवाक्य (Subordinate sentence) हो उसे जटिल या मिश्र वाक्य कहते हैं। जैसे—मैं देखता हूँ कि उसे रहने का कोई ठौर ठिकाना नहीं है। इस वाक्य में 'मैं देखता हूँ' एक सरल वाक्य के आश्रित 'उसे रहने का कोई ठौर ठिकाना नहीं है' अधीन वाक्य है।

मिश्रवाक्य में जो अंश प्रधान रहता है उसे प्रधान और जो अंश अप्रधान रहता है उसे आनुषंगिक अंग कहते हैं। जैसे—मैं जानता हूँ कि उसका लिखना अच्छा होता है। इस वाक्य में 'मैं जानता हूँ' प्रधान अंग है और 'उसका लिखना अच्छा होता है' आनुषंगिक अंग।

आनुषंगिक अंग—(Subordinate sentence)—मिश्र वाक्य में प्रयुक्त आनुषंगिक अंग के तीन भेद हैं—एक विशेष्य वाक्य, दूसरा विशेषण वाक्य और तीसरा क्रियाविशेषण वाक्य।

(१) विशेष्य आनुषंगिक वाक्य—जो आनुषंगिक वाक्य प्रधान वाक्य के किसी संज्ञा या विशेष्य के बदले में व्यवहृत हो उसे विशेष्य वाक्य कहते हैं। जैसे—उन्होंने यह सिद्ध कर दिखाया कि मैं निर्दोष हूँ। इस मिश्र वाक्य में 'मैं निर्दोष हूँ' मुख्य वाक्य के किसी संज्ञा के रूप में व्यवहृत हुआ; क्योंकि अगर सारे वाक्य को सरल वाक्य में बदल दिया जाय तो इसका रूप यों हो जायगा—उन्होंने 'अपनी निर्दोषता' सिद्ध कर दिखायी। यहाँ आनुषंगिक वाक्य 'मैं निर्दोष हूँ' का परिवर्तित रूप 'अपनी निर्दोषता' संज्ञा है, इसलिए 'मैं निर्दोष हूँ' विशेष्य वाक्य है।

विशेष्य रूप में व्यवहृत आनुषंगिक वाक्य कभी कर्त्ता या उद्देश्य, कभी कर्म और कभी समानाधिकरण संज्ञा के बदले में आते हैं।

उदाहरण—

कर्त्ता-रूप में विशेष्य वाक्य—मुझे मालूम है कि 'वह आज कौन-कौन काम करेगा'। अर्थात् मुझे 'उसका आज का काम' मालूम है।

कर्म-रूप में—उन्होंने यह सिद्ध कर दिखाया कि 'मैं निर्दोष हूँ'। अर्थात् उन्होंने 'अपनी निर्दोषता' सिद्ध कर दिखायी।

समानाधिकरण संज्ञा के रूप में—वैज्ञानिकों का यह कथन कि 'पृथ्वी गोल है' सभी मानने लग गये हैं। अर्थात् वैज्ञानिकों का 'पृथ्वी के गोल होने का' कथन सभी मानने लग गये हैं।

विशेष्य वाक्य-संयोजक 'कि' के द्वारा अपने प्रधान वाक्य के साथ आपेक्षित या मिले रहते हैं पर कहीं-कहीं 'कि' शब्द लुप्त भी रहता है। जैसे—यह सभी कहते हैं (कि) काँसे के ऊपर बिजली गिरती है।

(२) विशेषण वाक्य—जो आनुषंगिक वाक्य प्रधान वाक्य के किसी विशेषण के रूप में व्यवहृत हो उसे विशेषण वाक्य कहते हैं। जैसे—'जो मनुष्य सन्तोष धारण करता है' वह 'सदा सुखी रहता है'। अर्थात् 'सन्तोषी मनुष्य' सदा सुखी रहता है। यहाँ पर आनुषंगिक अंग विशेषण के रूप में आया है।

विशेषण वाक्य भी कभी कर्त्ता और कभी कर्म के रूप में आते हैं। ऊपर का विशेषण वाक्य कर्त्ता के रूप में व्यवहृत हुआ है। कर्म के रूप में व्यवहृत विशेषण वाक्य—वह अपने कुत्ते को, 'जो बड़ा स्वामिभक्त है' जी जान से मानता है। अर्थात् वह अपने 'स्वामिभक्त कुत्ते' को, जी-जान से मानता है इत्यादि।

विशेषण रूप में व्यवहृत आनुषंगिक वाक्य अपने प्रधान वाक्य से सम्बंधवाचक सर्वनाम (जो-सो) के द्वारा संयुक्त

होते हैं। कहीं-कहीं ये लुप्त भी रहते हैं। आजकल 'सो' के बदले 'वह' लिखने की परिपाटी चल निकली है जैसा कि ऊपर के वाक्य में प्रदर्शित किया गया है।

क्रियाविशेषण वाक्य—जो आनुषंगिक वाक्य प्रधान वाक्य की क्रिया की विशेषता बतलाने के अभिप्राय से प्रयुक्त हुआ हो उसे क्रियाविशेषण वाक्य कहते हैं। जैसे—जब विपत्ति पड़े तब 'धीरज धरना चाहिये'। अर्थात् 'विपत्ति पड़ने पर' धीरज धरना चाहिये।

क्रियाविशेषण अपने प्रधान वाक्य से जब-तब, जहाँ-तहाँ, यदि तो, जैसे-तैसे आदि प्रत्ययों के द्वारा संयुक्त रहते हैं।

संयुक्त या यौगिक वाक्य

जिस वाक्य में दो या अधिक सरल या जटिल वाक्य एक दूसरे पर आपेक्षित न होकर मिला रहता है उसे यौगिक या संयुक्त वाक्य (Compound sentence) कहते हैं। जैसे—वह बूढ़ा हो गया पर उसके केश काले ही हैं। राम कलकत्ते गया और मोहन पटने आया इत्यादि।

यौगिक वाक्य में एक वाक्य दूसरे के आश्रित नहीं रहते बल्कि दोनों स्वाधीन रहते हैं। इसलिए उन्हें समानाधिकरण वाक्य कहते हैं। ये वाक्य किन्तु, परन्तु, अथवा, या, एवं, और, तथा आदि संयोजक अथवा विभाजक अव्ययों के द्वारा एक दूसरे से जुटे रहते हैं।

उद्देश्य अंश के एक से ज़्यादा विधेय और विधेय अंश के एक से ज़्यादा उद्देश्य रहने पर भी यौगिक वाक्य होता है। जैसे—रसोइया गाता है, रसोई करता है। अर्थात् रसोइया गाता

है और रसोइया रसोई करता है। मोहन और सोहन खेल देखने गये हैं। अर्थात् मोहन खेल देखने गया है और सोहन खेल देखने गया है। परन्तु वाक्य में संयोजक अव्यय रहने से ही तब तक वह यौगिक वाक्य नहीं होता जब तक वाक्य को अलग-अलग करने पर साफ़ अर्थ प्रगट नहीं होता। जैसे—मोहन और सोहन दोनों मित्र हैं।

अभ्यास

१—आकार की दृष्टि से वाक्य कितने प्रकार के होते हैं? उदाहरण सहित समझाओ।

As regard size, what are the different kinds of sentences? Give examples of each.

२—अधीन और गर्भित वाक्य किसे कहते हैं? उदाहरण देकर समझाओ।

Explain with examples what are meant by Subordinate and Parenthetical sentence.

३—निम्नलिखित वाक्यों में कौन किस प्रकार के वाक्य हैं? कारण सहित समझाओ।

Point out with reasons the different kinds of sentences in the following:-

अफगानिस्तान एक छोटा सा देश भारत वर्ष के उत्तर-पश्चिम की ओर अवस्थित है। वह है तो ब्राह्मण पर आचरण शूद्रों के ऐसा है। स्वास्थ्य ही धन है। जिसने देखा वही लुभाया। जिसकी लाठी उसकी भैंस। मोहन की टोपी माधो का सर।

४—नीचे लिखे शब्दों को लेकर एक-एक मिश्र वाक्य बनाओ।

Frame complex sentences using the following :—
जो, जहाँ, जब, जब तक।

क्रिया के अनुसार वाक्यभेद

क्रिया के अनुसार वाक्य के तीन भेद हैं—(१) कर्तृवाच्य, (२) कर्मवाच्य और (३) भाववाच्य।

(१) कर्तृवाच्य—जिस वाक्य में कर्त्ता, अपनी अवस्था में हो और कर्म अपनी अवस्था में तथा क्रिया-पद स्वतन्त्र न हो उसे कर्तृवाच्य (Active sentence) कहते हैं। जैसे—मोहन गीत गाता है। राम टहलता है।

नोट—सभी कर्तृवाच्य में कर्म का होना ज़रूरी नहीं है।

(२) कर्मवाच्य—जिस वाक्य में कर्त्ता करण के रूप में और कर्म कर्त्ता के रूप में प्रयुक्त हो तथा क्रिया कर्म के अनुसार हो उसे कर्मवाच्य (Passive sentence) कहते हैं। जैसे—मोहन से गीत गाया जाता है। मुझ से रोटी खायी जाती है इत्यादि।

नोट—कर्मवाच्य में कर्म का रहना आवश्यक है।

(३) भाववाच्य—जब अकर्मक क्रियापद-युत कर्तृवाच्य के कर्त्ता का रूप करण के समान हो जाय तो वहाँ भाववाच्य होता है। भाववाच्य में क्रिया स्वयं प्रधान रहती है। जैसे—राम से टहला भी नहीं जाता।

नोट—(१) जिस वाक्य में कर्म ही कर्त्ता की भाँति प्रयुक्त हो वहाँ कर्तृ-कर्मवाच्य होता है। जैसे—चलती नहीं कलम है। पानी बरस रहा है। तलवार चलने लगी। तबला ठनकने लगा इत्यादि।

(२) वाच्य के सम्बन्ध में विशेष ज्ञातव्य बातें वाच्य-परिवर्तनवाले परिच्छेद में विस्तार के साथ दी गयी हैं।

वाक्य के साधारण भेद

साधारण तरीके से सभी तरह के वाक्यों के निम्नलिखित आठ भेद होते हैं—

(१) विधिवाचक (Affirmative sentence)—जिससे किसी बात का विधान पाया जाय। जैसे—आकाश निर्मल हो गया। उपवन में पुष्प खिल रहे हैं इत्यादि।

(२) निषेधवाचक (Negative sentence)—जिससे किसी बात का न होना पाया जाय। जैसे—वह जातपांति कुछ नहीं मानता। कोई काम सफल नहीं हुआ इत्यादि।

(३) आज्ञावाचक (Imperative sentence)—जिस वाक्य से आज्ञा, उपदेश, निवेदन आदि का बोध हो। जैसे—सांझ सुबह टहला करो। गुरु की आज्ञा मानो आदि।

(४) प्रश्नवाचक (Interrogative sentence)—जिसमें प्रश्न किया गया हो। जैसे—तुम्हारी पुस्तक कहाँ है? आज कल तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है? इत्यादि।

(५) विस्मयादिबोधक (Exclamatory sentence)—जिससे आश्चर्य, कौतूहल, कौतुक आदि भाव प्रदर्शित हों। जैसे—अहा! कैसा शीतल जल है! क्या ही सुन्दर घोड़ा है!

(६) इच्छाबोधक (Optative sentence)—जिससे इच्छा प्रगट हो। जैसे—भगवान आपका भला करें। आप चिरायु हों।

(७) सन्देहसूचक—जिससे सन्देह हो या सम्भावना पायी जाय। जैसे—मुझे डर है कि कहीं अर्थ का अनर्थ न हो जाय। उस दिन कदाचित् आप यहाँ होते इत्यादि।

(८) संकेतार्थक—जिसमें संकेत या शर्त पायी जाय।

जैसे—अगर वह पढ़ता रहता तो आज उसकी यह गति नहीं हो पाती।

एक ही वाक्य के आठ रूप

(१) ज्ञान से बुद्धि निर्मल होती है। (विधिवाचक)

(२) जिसे ज्ञान नहीं उसकी बुद्धि निर्मल नहीं होती है। (निषेधवाचक)

(३) ज्ञानी बनो, बुद्धि निर्मल होगी। (आज्ञावाचक)

(४) क्या ज्ञान से बुद्धि निर्मल होती है। (प्रश्न वाचक)

(५) (क्या कहा—) ज्ञान से बुद्धि निर्मल होती है। (विस्मयादिबोधक)

(६) मैं ज्ञानी बनूँगा, बुद्धि निर्मल होगी। (इच्छाबोधक)

(७) हो सकता है कि ज्ञान से बुद्धि निर्मल हो। (सन्देहसूचक)

(८) यदि ज्ञान प्राप्त करोगे तो बुद्धि निर्मल होगी। (संकेतार्थक)

अभ्यास

१—कर्मवाच्य और भाववाच्य वाच्य के भेद बतलाते हुए दोनों के एक-एक उदाहरण दो।

Distinguish between कर्मवाच्य and भाववाच्य and *give an example of the each.*

२—नीचे लिखे वाक्य को बिना अर्थ बदले वाक्य के आठों साधारण वाक्य में लिखो।

'परिश्रम से विद्या होती है।'

तृतीय परिच्छेद

वाक्य-विश्लेषण (Analysis of sentences)

वाक्य-विश्लेषण—वाक्य के अंशों को अलग-अलग कर उनके पारस्परिक सम्बन्ध को प्रदर्शित करने की विधि को वाक्य-विश्लेषण या वाक्य-विग्रह कहते हैं।

सरल वाक्य का विश्लेषण—निम्नलिखित प्रकार से सरल वाक्य का विश्लेषण किया जाता है—

(१) पहले वाक्य के उस अंश को दरसाना होता है जिसे उद्देश्य कहते हैं।

(२) उसके बाद उन अंशों को रखना होता है जिनसे उद्देश्य-पद विस्तृत किया जाता है।

(३) फिर विधेय को दिखाना पड़ता है।

(४) यदि विधेय-पद पूर्ण अर्थ प्रकाश नहीं करता हो तो उसका पूरक अथवा वह अंश जिससे विधेय का पूर्ण अर्थ प्रकाशित हो, रखना पड़ता है।

(५) अगर विधेय सकर्मक हो तो उसका कर्म निर्देश करना पड़ता है।

(६) कर्म जिन अंशों के द्वारा बढ़ाया गया हो वे अंश कर्म के बाद रखने पड़ेंगे।

(७) अन्त में उन अंशों को दिखाना पड़ता है जो विधेय के विस्तार के रूप में व्यवहृत हुए हों।

सारांश यह है कि सरल वाक्य-विश्लेषण का क्रम इस प्रकार रहता है—(१) उद्देश्य, (२) उद्देश्य का विस्तार, (३) विधेय, (४) विधेय पूरक, (५) कर्म, (६) कर्म का विस्तार और (७) विधेय का विस्तार।

उदाहरण—

(१) सम्राट् अशोक ने भिन्न-भिन्न देशों में अपने धर्मप्रचारक भेजे।

(२) पागल कुत्ते ने राम के पुत्र सुधांशु को परसों काट लिया।

(३) बन्दर पेड़ की पत्तियाँ खाता है।

(४) गुण ही स्त्रियों के लिए सब से बढ़कर सौन्दर्य्य है।

(५) साहसी मनुष्य भय से नहीं घबड़ाता।

संख्या	उद्देश्य अंश		विधेय अंश				
	मुख्य उद्देश्य	उद्देश्य का विस्तार	विधेय	विधेय पूरक	कर्म		विधेय का विस्तार
					कर्म	विस्तार	
(१)	अशोक ने	सम्राट	भेजे	×	धर्म प्रचारक	भिन्न-भिन्न देशों में	×
(२)	कुत्ते ने	पागल	काट लिया	×	सुधांशु को	राम के पुत्र	परसों

संख्या	उद्देश्य अंश		विधेय अंश				
	मुख्य उद्देश्य	उद्देश्य का विस्तार	विधेय	विधेय पूरक	कर्म: कर्म	कर्म: विस्तार	विधेय का विस्तार
(३)	×	बन्दर	खाता है	×	पत्तियाँ	पेड़ की	×
(४)	गुण ही	×	है	सौन्दर्य	×	×	स्त्रियों के लिए सब से बढ़कर
(५)	मनुष्य	साहसी	घबड़ाता है	नहीं	×	×	भय से

जटिल वाक्य का विश्लेषण —

जटिल वाक्य का विश्लेषण करते समय सबसे पहले यह ध्यान में रखना होता है कि वाक्य में कौन अंग प्रधान और कौन अंग आनुषंगिक या अप्रधान है। फिर आनुषंगिक अंग को पद विशेष समझ कर, सरल वाक्य के विश्लेषण की नाईं समूचे वाक्य का विश्लेषण करना पड़ता है। इसके बाद आनुषङ्गिक अंग का भी विश्लेषण सरल वाक्य-विश्लेषण-विधि के अनुसार करना होता है।

उदाहरण—(१) मैं जानता हूँ कि वह यहाँ नहीं आयेगा।
(२) जो संयम से रहता है वह कभी नहीं बीमार पड़ता है।
(३) जब मैं आया तब वह चला गया।

विश्लेषण

वाक्य	वाक्य-भेद	समुच्चयबोधक	उद्देश्य अंश		विधेय अंश				
			मुख्य उद्देश्य	उद्देश्य का विस्तार	विधेय	विधेय पूरक	कर्म		विधेय का विस्तार
							कर्म	विस्तार	
(१) मैं जानता हूँ	प्रधान	कि	मैं	×	जानता हूँ	×	वह यहाँ नहीं आयगा	×	×
वह यहाँ नहीं आयेगा	आनुषंगिक (कर्मरूप में)		वह	×	आयेगा	नहीं	×	×	यहाँ
(२) वह कभी बीमार नहीं पड़ता है	प्रधान	×	वह	जो संयम से रहता है	पड़ता है	नहीं	×	×	कभी बीमार
जो संयम से रहता है	आनुषंगिक विशेषण रूप में		जो	×	रहता है	×	×	×	संयम से
(३) तब वह चला गया	प्रधान	×	वह	×	चला गया	×	×	×	तब, जब, मैं यहाँ आया
जब मैं यहाँ आया	आनुषंगिकक्रिया विशेषण रूप में		मैं	×	आया	×	×	×	यहाँ, जब

ऊपर किये गये वाक्य-विश्लेषण में पहले जटिल वाक्य में आनुषंगिक वाक्य कर्म-रूप में आया है; इसलिए समूचे वाक्य का विश्लेषण करते समय वह कर्म के रूप में बताया गया है। दूसरे वाक्य में विशेषण के रूप में आया है इसलिए उद्देश्य का रूप लिखा गया और तीसरे वाक्य में क्रियाविशेषण के रूप में व्यवहृत हुआ है इसलिए विधेय का विस्तार समझा गया है।

यौगिक या संयुक्त वाक्य का विश्लेषण

यौगिक या संयुक्त वाक्य के विश्लेषण करने में जिन सब वाक्यों से मिलकर यौगिक वाक्य बना है उनका पृथक्-पृथक् विश्लेषण करना चाहिये फिर जिन योजकों वा अव्ययों द्वारा वे मिले हैं उनको दरसाना चाहिये। यदि यौगिक वाक्य सरल वाक्यों के मेल से बना हो तो सरल वाक्य-विश्लेषण-विधि के अनुसार और यदि जटिल वाक्यों के मेल से बना हो तो जटिल-वाक्य-विश्लेषण-विधि के अनुसार विश्लेषण करना चाहिये।

अभ्यास

१—नीचे लिखे वाक्यों का वाक्य-विग्रह करो।

Analyse the following sentences.

(१) राम ने गोविन्द को कल किताब दी। (२) परिश्रमी लड़कों ने नाम के साथ कठिन परीक्षा पास कर ली। (३) सोहन का भाई मेरी गीता पढ़ता है। (४) बिना स्वास्थ्य सुधारे जीना कठिन है। (५) राम की बुद्धि मारी गयी है। (६) जिसे किसी ने नहीं किया, उसे मोहन ने कर दिखाया। (७) एक दिन मैंने देखा कि गंगा में एक विचित्र फूल बह रहा है।

(८) जब सब हारकर बैठ जायँगे तब मैं अपनी कला को प्रदर्शित करूँगा। (९) राम पटने चला गया पर मोहन घर पर ही है। (१०) उसने धैर्य धारण किया और सब दुःख भूल गया।

चतुर्थ परिच्छेद

पदनिर्देश (Parsing)

पदनिर्देश—व्याकरण सम्बन्धी विशेपताओं का कथन करते हुए वाक्यों के पदों का जब पारस्परिक सम्बन्ध बताया जाय, तब उसे पदनिर्देश कहते हैं। पदनिर्देश को पद-परिचय, पदच्छेद, पदान्वय, पद-व्याख्या, वाक्य-विवरण, पदनिर्णय, पदविन्यास आदि नामों से पुकारते हैं।

संज्ञा-पद—संज्ञा या विशेष्य का पदनिर्देश करने में भेद—जातिवाचक आदि—लिंग, वचन, पुरुष, कारक और जिस पद के साथ उसका सम्बंध हो उसे दरसाया जाता है। क्रियार्थक संज्ञा (Verbal noun) में लिङ्ग, वचन, पुरुष नहीं लिखा जाता है।

सर्वनाम-पद—सर्वनाम का पदनिर्देश करने में उसके भेद, लिंग, वचन, पुरुष, कारक और अन्य पदों के साथ उसका सम्बन्ध लिखना पड़ता है। सर्वनाम जिस संज्ञा के बदले आता है उसी संज्ञा के लिंग, वचन आदि के अनुसार उसके भी लिंग, वचन आदि होते हैं। हाँ, पुरुष और कारक में भेद हो सकता है।

विशेषण-पद—विशेषण में भेद और जिस विशेष्य का वह विशेषण है वह विशेष्य लिखना होता है।

क्रिया-पद—पूर्वकालिक या समापिका—सकर्मक, द्विकर्मक या अकर्मक, कर्त्तृवाच्य, कर्मवाच्य या भाववाच्य—काल और उसके भेद—लिंग, वचन और पुरुष—किस कर्त्ता की क्रिया है और अगर सकर्मक हो तो उसका कर्म।

अव्यय—अव्यय में उसके भेद और अगर किसी पद के साथ उसका सम्बन्ध हो तो वह पद दरसाना पड़ता है।

नोट—(१) जब विशेषण पद स्वतन्त्र रूप से विशेष्य की भाँति व्यवहृत होता है तो उसमें विशेष्य की भाँति लिंग, वचन, पुरुष और कारकादि होते हैं। जैसे—विद्वानों की सभा हो रही है।

(२) कुछ गुणवाचक विशेष्य (संज्ञा) कभी विशेष्य और कभी विशेषण के रूप में आते हैं। जैसे—'स्वर्ण युग' में 'स्वर्ण' विशेषण और 'युग' विशेष्य है।

(३) कभी-कभी जातिवाचक संज्ञा भी विशेषण के रूप में आती है। जैसे—'क्षत्रिय' कुल में जन्म लेकर कायर क्यों बनते हो। यहाँ 'क्षत्रिय' विशेषण है।

(४) सर्वनाम भी कभी-कभी विशेषण के रूप में व्यवहृत होता है। जैसे—यह पुष्प सहसा मुरझा गया है। यहाँ 'यह' विशेषण है।

(५) कभी-कभी क्रियापद विशेष्य-रूप में आता है। जैसे—'देखना' धातु का 'ना' लोपकर उसमें 'ता है' जोड़ देने से 'देखता है' बनता है। यहाँ 'देखता है' विशेष्य के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

(६) पदनिर्देश करते समय गद्य का एक-एक पद लिया जाता है और पद्य का गद्य में रूपान्तर कर उसका पदनिर्देश किया जाता है। कोई-कोई वैयाकरण कारक के चिह्न (विभक्ति) का

अलग पदनिर्देश करते हैं। उसे अव्यय का रूप देते हैं पर विभक्ति सहित शब्द का ही पदनिर्देश करना ठीक है। क्योंकि पदनिर्देश में शब्द का परिचय नहीं बल्कि पद का परिचय बताया जाता है।

(७) सम्बोधन-पद और विधिक्रिया में मध्यम पुरुष होता है।

उदाहरण—मोहन ने गंगा के तट पर जाकर देखा कि एक नौका गंगा में जा रही है। उसपर एक सुन्दर बालक बैठा है जिसके गले में पुष्प की माला है।

मोहन ने—संज्ञा, व्यक्तिवाचक, पुंलिंग, एक वचन, अन्य-पुरुष, कर्त्ता कारक जिसकी क्रिया 'देखा है' है।

गंगा के—संज्ञा, व्यक्तिवाचक, स्त्रीलिंग, एक वचन, अन्य-पुरुष, सम्बन्ध कारक, इसका सम्बन्धी 'तट पर' है।

तट पर—संज्ञा, जातिवाचक, पुंल्लिंग, एक वचन, अन्यपुरुष, अधिकरण कारक।

जाकर—क्रिया, पूर्वकालिक।

देखा—क्रिया, सकर्मक, कर्त्तृप्रधान, सामान्य भूत, पुंल्लिंग, एकवचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता 'मोहन ने' और कर्म 'एक नौका गंगा के तट पर जा रही है' आनुषंगिक वाक्य है।

कि—संयोजक अव्यय 'मोहन ने गंगा के तट पर जाकर देखा' और 'एक नौका गंगा में जा रही है' को मिलाता है।

एक—संख्यावाचक विशेषण। इसका विशेष्य 'नौका' है।

नौका—संज्ञा, जातिवाचक, स्त्रीलिंग, एकवचन, अन्य पुरुष, कर्त्ता कारक, इसकी क्रिया है 'जा रही है'।

गंगा में—अधिकरण कारक।

जा रही है—क्रिया, अकर्मक, कर्त्तृप्रधान, तात्कालिक वर्त-

मान, स्त्रीलिंग, एक वचन, अन्य पुरुष। इसका कर्त्ता 'नौका' है।

उसपर—सर्वनाम, नौका के बदले में आया है, निश्चयवाचक, स्त्रीलिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, अधिकरण कारक।

सुन्दर—विशेषण। इसका विशेष्य 'बालक' है।

बालक—संज्ञा, जातिवाचक, पुंल्लिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, कर्त्ता कारक। इसकी क्रिया है 'बैठा है'।

बैठा है—क्रिया, अकर्मक, कर्त्तृप्रधान, आसन्न भूत, पुंल्लिंग, एक वचन, अन्य पुरुष। इसका कर्त्ता 'बालक' है।

जिसके—सर्वनाम, बालक के बदले में आया है, सम्बन्धवाचक, पुंल्लिंग, एक वचन, सम्बन्ध कारक जिसका सम्बन्धी 'गले में' है।

गले में—संज्ञा, जातिवाचक, पुंल्लिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, अधिकरण कारक।

पुष्प की—संज्ञा, जातिवाचक, पुंल्लिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, सम्बन्ध कारक इसका सम्बन्धी 'माला' है।

माला—संज्ञा, जातिवाचक, स्त्रीलिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, कर्त्ता कारक जिसकी क्रिया 'है' है।

है—क्रिया, अकर्मक, अपूर्ण अर्थ प्रकाशक क्रिया जिसका विधेय पूरक 'माला' है। सामान्य वर्तमान, स्त्रीलिंग, एक वचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता भी 'माला' ही है।

अभ्यास

१—चिह्नित पदों का पदनिर्देश करो।

Parse the underlined words used in the following sentences:—(क) विद्वानों की सभा हो रही है। (ख) सन्तोष से सुख मिलता है। (ग) पीड़ितों की पीड़ा हरो

(घ) वह भागा जा रहा है। (ङ) सब कोई एक न एक दिन अवश्य मरेंगे। (च) मरता क्या न करता।

२—नीचे लिखे वाक्यों का पदनिर्देश करो।

Parse the following:—

(क) गया गया गया।

(ख) जीवन एक संग्राम है।

(ग) जिन दिन देखे वे कुसुम, गयी सु बीति बहार।
　　अब अलि रही गुलाब में, अपत कटीली डार॥

पञ्चम परिच्छेद

वाक्यरचना के नियम

(Syntax)

वाक्यरचना भाषा का मुख्य अंग माना गया है। जिसे शुद्ध भाषा लिखने का अभ्यास करना हो उसे वाक्य सम्बन्धी नियमों पर ध्यान देना ज़रूरी है। परन्तु बिना व्याकरण का पूरा ज्ञान प्राप्त किये वाक्यरचना सम्बन्धी नियमों को समझना कठिन है। अतः वाक्यरचना का अभ्यास करने के लिए व्याकरण के नियमों की पूरी जानकारी प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है। सारांश यह है कि भाषा को परिमार्जित करने के लिए वाक्य-रचना और वाक्यरचना को परिमार्जित रूप से लिखने के लिए व्याकरण का जानना आवश्यक हो जाता है; क्योंकि व्याकरण के नियमों के अनुसार सिद्धपद-स्थापन-प्रणाली को ही वाक्य-रचना कहते हैं।

वाक्य के दो विभाग होते हैं—एक पद्य-विभाग, दूसरा गद्यविभाग। छन्दोवद्ध वाक्य को पद्य कहते हैं; इसलिए पद्यमय वाक्य लिखने के लिए छन्दशास्त्र का ज्ञान ज़रूरी है। तुक, पिङ्गल आदि के नियमों पर विशेष ध्यान देना पड़ता है, परन्तु गद्यमय वाक्य लिखने के लिए व्याकरण के नियम ही पर्याप्त हैं क्योंकि

जिस वाक्य में कारक, क्रियादि का नियमपूर्वक स्थापन हो उसे गद्य कहते हैं।

ऊपर कहा जा चुका है कि व्याकरण के नियमों द्वारा या भाषा की रीति के अनुसार सिद्ध पदों की स्थापन-विधि को ही वाक्यरचना कहते हैं। यहाँ सिद्ध पदों की स्थापना करते समय यह देखना पड़ता है कि पदों के साथ पदों का सम्बन्ध रहे और साथ ही स्थापन-प्रणाली का क्रम भी भंग न हो। तात्पर्य्य यह है कि वाक्यरचना में पदों के सम्बन्ध और क्रम पर विशेष ध्यान देना होता है जिन्हें पदमेल और पदक्रम कहते हैं।

यहाँ पर एक बात ध्यान देने योग्य है। यह युग हिन्दी-भाषा के गद्य के विकास का युग है। अबतक इसका गद्य-भाग प्रौढ़ नहीं हुआ है। इसलिए इसमें अभी परिवर्तन होना स्वाभाविक ही है। यही कारण है कि आज से दस वर्ष पहले की लेखन-प्रणाली से आज की लेखन-प्रणाली हम भिन्न पा रहे हैं और सम्भव है कि आज से दस वर्ष के बाद इसमें भी परिवर्तन हो जाय। यह परिवर्तन कुछ बुरा नहीं है परिवर्तन ही भाषा का जीवन है। जिस भाषा में परिवर्तन का प्रवाह रुक जाता है वह भाषा मृत भाषा कहलाती है। कहने का मतलब यह है कि भाषा में रूपान्तर होते रहना उसकी उन्नति या विकास का चिह्न है।

इस प्रकार की परिवर्तनशील भाषाओं में वाक्यरचना के समय मेल या पदक्रम पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता क्योंकि ऐसा करने से भाषा का प्रवाह रुक जाता है जो उसके विकास का बाधक होता है। परन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि पदक्रम पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जाय और व्याकरण तथा वाक्यरचना के नियमों को ताक पर रखकर जो जैसा चाहे उलटा-

भ्रष्ट होने लगे वहाँ देना चाहिये और जहाँ लालित्य में कोई बाधा नहीं पड़े वहाँ नहीं देना चाहिये। हाँ, स्थानान्तर हो जाने से अगर एक से अधिक विशेषण प्रयुक्त हों तो संयोजक अव्यय जोड़ना आवश्यक हो जाता है। जैसे—

(क) 'बली' भीम ने दुःशासन को गदा के प्रहार से मार डाला।

(ख) भक्तवत्सल, दीनपालक, नरश्रेष्ठ (और) बली राम ने रावण को मारा।

(ग) गुलाब का फूल बड़ा ही सुन्दर 'और' मन मोहक होता है।

(११) क्रियाविशेषण या क्रियाविशेषण के रूप में व्यवहृत वाक्यांश बहुधा क्रिया के पहले आता है। जैसे—राम चुपचाप रास्ता नाप रहा है।

(१२) पूर्वकालिक क्रिया बहुधा समापिका क्रिया के पहले आती है जब कि दोनों का कर्त्ता एक ही रहे। और जिस क्रिया के जो कर्म, करण आदि पद होते हैं वे उससे पहले आते हैं। जैसे—वह कुछ फल खाकर सिनेमा देखने के लिए चला गया।

(१३) सर्वनाम पदों में विशेषण प्रायः पीछे ही आते हैं। जैसे—वह बड़ा चतुर है।

नोट—शब्द पर ज़ोर देने के लिए उपर्युक्त नियमों में फेर फार हो जाया करता है। जैसे—

(क) क्रियाविशेषण कर्त्ता से भी पहले—एक एक कर वह सब आम खा गया।

(ख) विशेषण का स्थानान्तर—राम बड़ा सुशील है।

(ग) पूर्वकालिक क्रिया का स्थानान्तर—देख कर भी उसने बात टाल दी।

(१४) प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय उस पद के पहले आता है जिस पद के विषय में प्रश्न किया जाता है। जैसे—यह किसकी टोपी है ?

स्थानान्तर—(क) यदि पूरा वाक्य ही प्रश्न हो तो प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय वाक्य में पहले ही आता है। जैसे—क्या आप कल कलकत्ते जानेवाले हैं ?

(ख) वाक्य में जोर देने के लिए प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया के बीच में भी आ सकता है। जैसे—वह पढ़ने से आ कैसे सकेगा ?

(ग) कभी-कभी वाक्य में प्रश्नवाचक सर्वनाम या अव्यय नहीं होता, केवल प्रश्नवाचक का चिह्न ही अंत में रहता है। जैसे—सचमुच वह पढ़ेगा ? (सचमुच क्या वह पढ़ेगा ?)

(घ) प्रश्नवाचक अव्यय 'क्या' प्रायः वाक्य के आरम्भ में ही आता है। कभी-कभी बीच या अंत में भी आ जाता है। जैसे—क्या वह पुस्तक खो गयी ? वह पुस्तक खो गयी क्या ? वह पुस्तक क्या खो गयी ?

(ङ) जब 'न' प्रश्नवाचक अव्यय के समान प्रयुक्त होता है तो वह वाक्य के अंत में आता है। जैसे—आप स्कूल जायँगे न ? मोहन कलकत्ते जायगा न ? इत्यादि।

(१५) तो, भी, ही, भर, तक और मात्र—ये शब्द किसी शब्द में जोर पैदा करने के लिए ही वाक्य में व्यवहृत होते हैं और उन्हीं शब्दों के पीछे आते हैं जिनपर ज़ोर देने के लिए ये व्यवहृत होते हैं। इनके स्थान परिवर्तन से वाक्य के अर्थ में भी परिवर्तन हो जाता है। जैसे—मैं भी वहाँ जाने को तैयार हूँ। मैं

वहाँ भी जाने को तैयार हूँ। मैं तो ज़रूर सिनेमा देखूँगा। मैं सिनेमा तो ज़रूर देखूँगा।

स्थानान्तर—उपर्युक्त शब्दों में 'मात्र' को छोड़कर शेष शब्द मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया के बीच में भी आते हैं। 'भी' तथा 'तो' को छोड़कर शेष शब्द संज्ञा और विभक्ति के बीच में भी आ सकते हैं। 'ही' शब्द कर्त्तृवाचक कृदन्त तथा सामान्य-भविष्यत्-काल प्रत्यय के पहले भी आ सकता है। जैसे—अब तो वह कुछ खाता भी है। पटने से कलकत्ते तक की दूरी ३७५ मील है। मोहन ही ने तो ऐसी अफ़वाह उड़ायी थी। चाहे जो कुछ हो जाय वह विलायत जायहीगा। अब उसे देखने ही वाला कौन है? इत्यादि।

(१६) सम्बन्धवाचक क्रियाविशेषण जहाँ तहाँ, जब तब, जैसे तैसे आदि प्रायः वाक्य के आरम्भ में आते हैं। जैसे—जहाँ दिल चाहे तहाँ जाकर रहो। जब जी आवे तब यहाँ आ जाया करो। जैसे बने तैसे समझौता कर लेना उचित है।

लोग 'तहाँ' के बदले 'वहीं' या 'वहाँ' और 'तब' के बदले 'तो' का भी व्यवहार करने लगे हैं। जैसे—जहाँ राम पढ़ेगा वहीं (वहाँ) मैं भी पढ़ूँगा। जब वह जायगा तो तुम भी जाना।

नोट—'तब' के बदले 'तो' का प्रयोग खटकता है।

(१७) निषेधवाचक अव्यय (न नहीं, मत) प्रायः क्रिया के पहले आते हैं। जैसे—वह कभी न आवेगा। मैंने 'रङ्गभूमि' अब तक नहीं पढ़ी है। तुम मत जाओ। ('मत' का प्रयोग विधि क्रिया रहने पर ही होता है।)

स्थानान्तर—(क) 'नहीं' और 'मत' क्रिया के पीछे भी

आते हैं। जैसे—तुम वहाँ जाना मत। तुम तो वहाँ गये ही नहीं, वहाँ की बात क्या खाक जानोगे ?

(ख) यदि क्रिया संयुक्त हो तो ये निषेध-वाचक अव्यय मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया के बीच में भी आते हैं। जैसे—मैं इस बात का समर्थन कर नहीं सकता। तुम शीघ्र चले मत जाना इत्यादि।

(१७) समुच्चयबोधक अव्यय जिन शब्दों या वाक्यों को जोड़ता है उनके बीच में आते हैं। जैसे—राम और श्याम सहोदर भाई हैं। मैं काशी गया और वहाँ विश्वनाथ के दर्शन किये।

नोट—(क) यदि संयोजक समुच्चयबोधक अव्यय कई शब्दों या वाक्यों को जोड़ता हो तो वह अन्तिम शब्द या वाक्य के पूर्व आता है। जैसे—मैं फुलवारी गया, वहाँ जाकर सुगन्धित फूलों को चुना और उनकी एक सुन्दर माला बनायी। इस पौदे के पत्ते, पुष्प और फल सभी सुहावने हैं।

(ख) संकेतवाचक समुच्चयबोधक यदि, तो; यद्यपि, तथापि; प्रायः वाक्य के प्रारम्भ में ही आते हैं। जैसे—यदि तुम यह पुस्तक आद्योपान्त पढ़ जाओ तो बहुत से नये-नये शब्द जान जाओगे। यद्यपि बात ठीक थी तथापि उस समय बोलना उचित नहीं था।

(१८) वाक्य में जब कोई शब्द दो बार आता है तब 'वीप्सा' कहलाता है जो सम्पूर्णता, एक कालीनता, निकटता, केवलता आदि अर्थ का द्योतक है। जैसे—

घर घर डोलत दीन ह्वै, जन जन जाँचत जाय।

'बिहारी'

नोट—जहाँ एक ही शब्द दो बार लिखना होता है वहाँ लोग एक शब्द लिखकर उसके आगे '२' लिख देते हैं पर यह

प्रयोग अच्छा नहीं है। कभी-कभी यह भ्रम में डालनेवाला हो जाता है।

मेल Concord

पिछले प्रकरण में कहा जा चुका है कि वाक्यरचना के समय पदों के क्रम और सम्बन्ध पर विशेष ध्यान दिया जाता है। पदों का क्रम जिस ढङ्ग से बैठाया जाता है उसके सम्बन्ध में भी पिछले प्रकरण में थोड़ा बहुत प्रकाश डाला जा चुका है। अब इस प्रकरण में पदों के सम्बन्ध के विषय में, जिसे मेल Concord कहते हैं, मोटी-मोटी बातें बतला दी जायँगी।

प्रायः देखा जाता है कि हिन्दी के वाक्यों में कर्त्ता या कर्म-पद के साथ क्रिया-पद का, संज्ञा-पद के साथ सर्वनाम-पद का और सम्बन्ध के साथ सम्बन्धी-पद का और विशेष्य के साथ विशेषण का सम्बन्ध वा मेल रहता है। कुछ और शब्द भी आपस में सम्बन्ध रखते हैं जिन्हें 'नित्य सम्बन्धी' कहते हैं।

१—कर्त्ता, कर्म और क्रिया

(१) यदि वाक्य में कर्त्ता का कोई चिह्न प्रगट न रहे तो उसकी क्रिया के लिङ्ग, वचन और पुरुष कर्त्ता के लिङ्ग, वचन और पुरुष के अनुसार होते हैं चाहे कर्म किसी भी रूप में क्यों न रहे। जैसे—मोहन टहलता है। स्त्रियाँ स्नान करती हैं। मैं रोटी खाता हूँ इत्यादि।

(२) यदि वाक्य में एक ही लिंग, वचन और पुरुष के अनेक चिह्न-रहित कर्त्ता 'और' या इसी अर्थ में प्रयुक्त किसी अन्य योजक शब्द से मिले रहें तो क्रिया उसी लिंग के बहुवचन में होगी। मगर यदि उनके समूह से एक वचन का बोध हो तो

क्रिया भी एक वचन में होगी। जैसे—शकुन्तला, प्रियम्वदा और अनुसूया पुष्पवाटिका में पौदों को सींच रही थीं। राम, मोहन और हरगोविन्द आ रहे हैं। यह बात सुनकर उन्हें दुःख और क्षोभ हुआ।

(३) यदि वाक्य में दोनों लिंगों और वचनों के अनेक चिह्न-रहित कर्त्ता 'और' या इसी अर्थ में प्रयुक्त किसी अन्य शब्द से संयुक्त हों तो क्रिया बहुवचन होगी और उसका लिङ्ग अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होगा। जैसे—एक गाय, दो घोड़े और एक बकरी मैदान में चर रही हैं।

नोट—(क) यदि वाक्य में दोनों लिङ्गों के एकवचन के चिह्न-रहित अनेक कर्त्ता 'और' या इसी अर्थ में व्यवहृत योग से मिले रहें तो क्रिया प्रायः बहुवचन और पुंलिङ्ग होगी। जैसे—बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं।

(ख) तीसरे नियम के अनुसार बने वाक्य में यदि अन्तिम कर्त्ता एकवचन में आवे तो क्रिया भी प्रायः एक वचन में व्यवहृत हुआ करती है। जैसे—ईसा की जीवनी में उनके हिसाब का खाता तथा डायरी नहीं मिलेगी।

परन्तु लोग प्रायः इस प्रकार के वाक्य लिखने में अन्तिम कर्त्ता अक्सर बहुवचन में लिखते हैं।

(४) यदि वाक्य में कई चिह्न-रहित कर्त्ता हों और उनके बीच में विभाजक शब्द आवे तो उनकी क्रिया के लिंग और वचन अन्तिम कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार होंगे। जैसे—मेरी गाय या उसके बैल तालाब में पानी पीते हैं। निर्मल-कुमार या उसकी बहन जा रही है इत्यादि।

(५) यदि वाक्य में अनेक चिह्न-रहित कर्त्ताओं और उनकी क्रिया के बीच कोई समूहवाचक शब्द रहे तो क्रिया के लिंग और वचन समूहवाचक शब्द के अनुकूल होंगे। जैसे—युवक, वृद्ध, स्त्री पुरुष, लड़का लड़की सब के सब आनन्द से उन्मत्त हो उठे।

(६) यदि वाक्य में अनेक चिह्न-रहित कर्त्ता हों और उनसे यदि एक वचन का बोध हो तो क्रिया एक वचन में और बहुवचन का बोध हो तो बहुवचन में होगी—चाहे कर्त्ताओं और क्रिया के बीच समूह-सूचक कोई शब्द रहे या न रहे। परन्तु यह याद रखना चाहिये कि यह नियम केवल अप्राणिवाचक कर्त्ताओं के लिए है। प्राणिवाचक के लिए नहीं। जैसे—आज उसे चार रुपये तेरह आने तीन पैसे मिले। इस काम को करने में कुल दो महीना और एक बरस लगा। विद्यालय के लिए दो हज़ार रुपया दान-स्वरूप मिला इत्यादि।

(७) जब अनेक संज्ञाएँ चिह्न-रहित कर्त्ता कारक में आकर किसी एक ही प्राणी वा पदार्थ को सूचित करती हैं तब क्रिया एक वचन में आती है। जैसे—वह राजनीतिज्ञ और योद्धा सन् १८९८ ई० में मर गया।

नोट—उपर्युक्त नियम पुस्तकों के संयुक्त नामों में भी लागू होता है। जैसे—'धर्म और राजनीति' किसका लिखा हुआ है।

(८) प्रायः वाक्य में पहले मध्यम पुरुष, उसके बाद अन्य पुरुष और अन्त में उत्तम पुरुष रहता है। जैसे—तुम, वह और मैं जाऊँगा।

(९) यदि वाक्य में चिह्न-रहित कर्त्ता तीनों पुरुष में आवें तो क्रिया के लिंग और वचन उत्तम पुरुष के लिंग और वचन

के अनुसार होंगे; यदि मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष या अन्य पुरुष और उत्तम पुरुष में आवें तो भी उत्तम पुरुष के ही अनुसार होंगे और यदि केवल अन्य पुरुष और मध्यम पुरुष में आवें तो मध्यम पुरुष के अनुसार होंगे। जैसे—तुम, वह और मैं जाऊँगा। तुम और मैं जाऊँगा। वह और हम जायँगे। तुम और वह जाओगे।

(१०) आदर का भाव प्रदर्शित करने के लिए चिह्न-रहित कर्त्ता अगर एक वचन में भी हो तो उसकी क्रिया बहुवचन में होगी। जैसे—वह चले गये। मालूम नहीं, रामेश्वर बाबू अब तक क्यों नहीं आये हैं ?

(११) ईश्वर के लिए एक वचन की क्रिया का प्रयोग ही अच्छा मालूम पड़ता है। जैसे—मैं अपनी निर्दोषता कैसे सिद्ध करूँ—ईश्वर ही इसका साक्षी है। ईश्वर, तू है पिता हमारा !

(१२) जहाँ-जहाँ वाक्य में क्रिया कर्त्ता के अनुसार होती है वहाँ-वहाँ मुख्य कर्त्ता के ही अनुसार होती है—विधेय रूप में आये हुए अप्रधान कर्त्ता के अनुसार नहीं। जैसे—'राम' सूख कर 'लाठी' हो गया। 'स्वर्णलता' डर से 'पानी' हो गयी।

(१३) यदि वाक्य में एक ही कर्त्ता की दो या अधिक समापिका क्रियाएँ भिन्न-भिन्न कालों में या कोई अकर्मक और कोई सकर्मक हों तो कर्त्ता का चिह्न केवल पहली क्रिया के अनुसार आता है। जैसे—हरि ने दोपहर का खाना खाया और सो रहा।

(१४) किसी वाक्य में प्रयुक्त दो या दो से अधिक क्रियाओं के समान कर्त्ता को कई बार नहीं लिखकर केवल एक बार लिखना चाहिये। जैसे—वह बराबर यहाँ आता जाता है।

(१५) कर्त्ता का चिह्न पूर्वकालिक क्रिया के अनुसार नहीं

आता। किसी वाक्य में पूर्वकालिक क्रिया का वही कर्त्ता होगा जो समापिका क्रिया का होगा। जैसे—वह खाकर सो रहा।

(१६) यदि एक वा अधिक चिह्न-रहित कर्त्ताओं का कोई समानाधिकरण शब्द हो तो क्रिया उसीके अनुसार होती है। जैसे—स्त्री और पुत्र कोई साथ नहीं जाता। कंचन और कामिनी दोनों ही लोगों को पागल बनाकर छोड़ती हैं।

(१७) यदि वाक्य में कर्त्ता का 'ने' चिह्न और कर्म का 'को' चिह्न प्रगट रहे तो क्रिया सदा एक वचन, पुंल्लिंग और अन्य पुरुष में होगी। जैसे—कृष्ण ने वंशी को बजाया। मोहन ने अपनी बहन को बुलाया।

(१८) यदि वाक्य में कर्त्ता का 'ने' चिह्न प्रगट रहे और कर्म रहे पर उसका 'को' चिह्न प्रगट न रहे तो क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होंगे। जैसे—सीता ने राम के गले में जयमाल डाल दी। मैंने रोटी खायी। उसने बड़ी अच्छी चीज़ देखी इत्यादि।

(१९) यदि वाक्य में कर्त्ता का 'ने' चिह्न रहे और कर्म न रहे या लुप्तावस्था में रहे तो क्रिया सदा एक वचन, पुंल्लिंग और अन्यपुरुष में आती है। जैसे—सीता ने कहा। लोगों ने देखा इत्यादि।

(२०) क्रियार्थक संज्ञा की क्रिया भी सदा एक वचन, पुंल्लिंग और अन्य पुरुष में आती है। जैसे—उसका जाना सफल हुआ। सुबह को टहलना लाभदायक है।

(२१) वाक्य में कर्त्ता वा कर्म के, जिसके अनुसार क्रिया में लिंग, वचन आदि का प्रयोग किया जाता है। लिंग में सन्देह हो

ो क्रिया पुंल्लिंग में व्यवहृत होती है। जैसे—शास्त्रों में लिखा है। तुम्हारा सुनता कौन है? इत्यादि।

(२२) कुछ संज्ञाएँ केवल बहुवचन में प्रयुक्त हुआ करती हैं। जैसे—उसके होश उड़ गये। मुफ़्त में प्राण छूट गये। आँखों से आँसू निकल पड़े। तुम्हारे दर्शन भी दुर्लभ हो रहे हैं। शत्रुओं के दाँत खट्टे हो गये। क्रोध से उसके ओठ फड़कने लगे। होश, प्राण, दर्शन, आँसू, ओठ, दाँत आदि शब्द सदा बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं।

कर्मकारक और क्रिया के मेल के अधिकांश नियम कर्त्ता और क्रिया के मेल के सम्बन्ध में लिखे गये नियमों के ही समान हैं। संक्षेप में वे नियम यहाँ दिये जाते हैं।

(२३) कर्म के अनुसार होनेवाली क्रियावाले वाक्य में यदि एक ही लिंग और एक वचन के अनेक प्राणिवाचक चिह्न-रहित कर्मकारक आवें तो क्रिया उसी लिंग के बहुवचन में आती है। जैसे—उसने बकरी और गाय मोल ली। मोहन ने अपना भतीजा और बेटा भेजे।

नोट—चिह्न-रहित कर्म कारक में उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष नहीं आते।

(२४) उपर्युक्त नियम के अनुसार आये हुए कर्मों में यदि एकता का बोध हो तो क्रिया एक वचन में आवेगी। जैसे—मोहन ने एक भतीजा और एक बेटा भेजा। उसने एक गाय और एक बकरी मोल ली।

(२५) यदि वाक्य में एक ही लिंग और वचन के अनेक

चिह्न-रहित अप्राणिवाचक कर्म आवें तो क्रिया एक वचन में आवेगी। जैसे—उसने सूई और कंघी खरीदी। राम ने फूल और फल तोड़ा।

(२६) यदि वाक्य में भिन्न-भिन्न लिंग के अनेक चिह्न-रहित कर्म एक वचन में रहें तो क्रिया पुंलिंग और बहुवचन में आवेगी। जैसे—मैंने बैल और गाय मोल लिये। मोहन ने सर्कस में बन्दर और बाघ देखे।

(२७) यदि वाक्य में भिन्न-भिन्न लिंगों और वचनों के एक से अधिक चिह्न-रहित कर्म रहें तो क्रिया के लिंग और वचन अन्तिम कर्म के अनुसार होंगे। जैसे—मैंने सूई, कंघी, दर्पण और पुस्तकें मोल लीं।

(नोट—अंतिम कर्म प्रायः बहुवचन में आता है)

(२८) यदि वाक्य में कई चिह्न-रहित कर्म आवें और वे विभाजक अव्यय द्वारा जुटे रहें तो क्रिया अन्तिम कर्म के अनुसार होगी। जैसे—तुमने मेरी टोपी या डंडा ज़रूर लिया है।

(२९) यदि वाक्य में अनेक चिह्न-रहित कर्म से किसी एक वस्तु का बोध हो तो क्रिया एक वचन में आवेगी। जैसे—मोहन ने एक अच्छा मित्र और बन्धु पाया है।

(३०) यदि वाक्य में व्यवहृत कई चिह्न-रहित कर्म का कोई समानाधिकरण शब्द रहे तो क्रिया समानाधिकरण शब्द के अनुसार होगी। जैसे—उसने धन, जन, कुल, परिवार आदि सब कुछ त्याग दिया।

(३१) चिह्न-रहित दो कर्म में क्रिया मुख्य कर्म के अनुसार होती है। जैसे—मीरकासिम ने अपनी राजधानी मुंगेर बनायी।

संज्ञा और सर्वनाम का मेल

(१) वाक्य में किसी सर्वनाम के लिंग और वचन उसी संज्ञा के लिंग और वचन के अनुसार होते हैं जिसके बदले में वह आता है, पर हाँ, कारकों में भेद हो जाता है। जैसे—स्त्रियाँ कहती हैं कि हम गंगा-स्नान करने जायँगी। हरिगोपाल कहता है कि मैं पत्र सम्पादनकला सीखूँगा, क्योंकि मेरा झुकाव उस ओर अधिक है।

(२) यदि वाक्य में कई संज्ञाओं के बदले एक ही सर्वनाम पद हो तो उसके लिंग और वचन संज्ञा-पद-समूह के लिंग और वचन के अनुसार होंगे। जैसे—शीतल और भागवत खेल रहे हैं परन्तु वे शीघ्र ही खाने को आवेंगे।

(३) 'तूँ' का प्रयोग अनादर और प्यार के अर्थ में किसी संज्ञा के बदले होता है। देवताओं के लिए भी लोग इसका प्रयोग करते हैं। जैसे—मोहन, तूँ आज पढ़ने नहीं गया? मन्थरे! तूँ ही मेरी हितकारिणी हो! हा विधाता, तूँ ने यह क्या किया! (तूँ की जगह तुम का भी प्रयोग होता है।)

(४) किसी संस्था या सभा के प्रतिनिधि, सम्पादक, ग्रन्थकार और बड़े-बड़े अधिकारी 'मैं' के बदले 'हम' का प्रयोग कर सकते हैं। जैसे—हम पिछले प्रकरणों में यह बात लिख चुके हैं। हम हिन्दू-सभा के प्रतिनिधि की हैसियत से इस प्रस्ताव का विरोध करते हैं।

(५) अधिक आदर का भाव प्रदर्शित करने के लिए 'आप' शब्द के बदले पुरुषों के लिए 'कृपानिधान', 'हुजूर', 'महाशय', 'श्रीमान्' आदि और स्त्रियों के लिए 'श्रीमती', 'देवी' आदि

शब्दों का प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी व्यंग के भाव में भी ये शब्द प्रयुक्त होते हैं। जैसे—श्रीमान् की आज्ञा शिरोधार्य है। देवी जी कब जा रही हैं। हुजूर को सलाम। कृपानिधान के ही कारण मुझे यह दुःख भोगना पड़ा है (व्यंग भाव) इत्यादि।

(६) बड़ों के सामने अपनी हीनता और दीनता दिखाने के लिए अथवा शिष्टाचार के नियमों के अनुसार उत्तम पुरुष सर्वनाम के बदले पुरुषों के लिए—दास, बन्दा, सेवक, अनुचर आदि और स्त्रियों के लिए—अनुचरी, दासी, सेविका आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। जैसे—इस दास को याद रखियेगा। नाथ! इस दासी को मत भूलियेगा।

विशेषण और विशेष्य

(१) विशेषण के लिंग और वचन आदि विशेष्य के लिंग और वचन आदि के अनुसार होते हैं। चाहे वह विशेष्य के पहले रहे या पीछे। यहाँ पर यह ध्यान में रखना चाहिये कि आकारांत विशेषण में ही विशेष्य के लिंग, वचन और कारक के कारण विकार उत्पन्न होता है अन्यथा नहीं। जैसे—काली गाय चरती है। यह गाय काली है। वह अद्भुत जीव है। वह बालक बड़ा सुन्दर है इत्यादि।

नोट—सुन्दर, सुशील आदि कुछ ऐसे अकारान्त विशेषण हैं जिनमें विशेष्य के लिंग के कारण विकार उत्पन्न हो सकता है। लोग इन्हें दोनों तरह से (विकृत और अविकृत) प्रयोग में लाते हैं। जैसे—सुन्दर बालक—सुन्दरी (सुन्दर) बालिका। सुशील बालक—सुशीला (सुशील) बालिका।

(क) प्रायः ऐसा भी होता है कि सुन्दर को सुन्दरी और सुशील को सुशीला कर देने से ये विशेषण से विशेष्य हो जाते

हैं। जैसे—सुन्दरी स्नान कर रही है। सुशीला धीरे-धीरे जा रही है। यहाँ सुन्दरी और सुशीला का अर्थ हुआ—सुन्दर स्त्री और सुशील स्त्री।

(ख) प्रत्यय से बने बहुत से अकारान्त विशेषणों में भी विशेष्य के कारण विकार उत्पन्न होते हैं। जैसे—मनोहर-मनोहारिणी, भाग्यवान्-भाग्यवती इत्यादि।

(२) चिह्न-रहित कर्मकारक का विकारी विशेषण अगर विधेय के रूप में व्यवहृत हो तो उसके लिंग और वचन कर्म के लिंग, और वचन के अनुसार होंगे पर यदि कर्म का चिह्न प्रगट रहे तो विशेषण ज्यों का त्यों रह जाता है अर्थात् विकल्प से बदलता है। जैसे—उसने अपने सिर की टोपी सीधी की। उसने अपने सिर की टोपी को सीधा (सीधी) किया इत्यादि।

(३) यदि एक ही विकारी विशेषण के अनेक विशेष्य हों, तो वह पहले विशेष्य के लिंग, वचन और कारक के अनुसार बदलता है। जैसे—सड़क पर छोटी-छोटी लड़कियाँ और लड़के खेलते हैं।

(४) यदि अनेक विकारी विशेषणों का एक ही विशेष्य हो तो वे सभी विशेष्य के लिंग और वचन के अनुसार बदलते हैं। जैसे—चमकीले और सुहावने दाँत।

(५) समय, दूरी, परिमाण, धन, दिशा आदि का बोध करनेवाली संज्ञाओं के पहले जब संख्यावाचक विशेषण रहे और संज्ञाओं से समुदाय का बोध न हो तो वे विकृत कारकों में भी प्रायः एक वचन के रूप में आती हैं। जैसे—चार मील की दूरी। पाँच हज़ार रुपये में इत्यादि।

नोट—चार महीने में, चार महीनों में, चारों महीने में और चारों महीनों में—इन चारों वाक्यांशों के अर्थ में थोड़ा भेद है। पहले में साधारण गिन्ती है, दूसरे में जोर दिया गया है और तीसरे तथा चौथे में समुदाय का अर्थ है।

(६) यदि क्रिया का साधारण रूप किसी संज्ञा के आगे विधेय-विशेषण होकर आवे और उससे सम्प्रदान या क्रिया की पूर्त्ति का अर्थ प्रदर्शित हो तो उसके लिंग और वचन उसी संज्ञा के लिंग और वचन के अनुसार होंगे जिसके साथ वह आया है; परन्तु यदि उससे उस संज्ञा के सम्बन्धी का बोध हो तो उसका रूप ज्यों का त्यों रह जायगा। जैसे—घंटी बजानी होगी। रोटी खानी पड़ेगी। परीक्षा देनी होगी। व्यर्थ का कसम खाना छोड़ दो।

यहाँ पर 'रोटी खानी पड़ेगी' आदि वाक्यों में क्रिया सम्प्रदान या क्रिया की पूर्त्ति का अर्थ प्रदर्शित करती है परन्तु 'कसम खाना' में कसम सम्बन्ध कारक के ऐसा व्यवहृत हुआ है जिसका सम्बन्धी 'खाना' है अर्थात् 'कसम का खाना'। इसलिए पहले तीनों वाक्यों में विधेय-विशेषण क्रिया का रूप संज्ञा के रूप के अनुसार बदल गया है और अन्तिम वाक्य में ज्यों का त्यों रह गया है।

इस छठे नियम के सम्बन्ध में हिन्दी-लेखकों में बड़ा मतभेद है परन्तु अधिकांश लेखक इसी नियम को मानते हैं। अस्तु।

सम्बंध और सम्बंधी

(१) सम्बन्ध के चिह्न में वही लिंग और वचन होंगे जो सम्बन्धी के होंगे। जैसे—राम की गाय, मोहन की लड़की, उसके घोड़े इत्यादि।

(२) जिस प्रकार आकारान्त विशेषण में विशेष्य के अनुसार विकार उत्पन्न होता है उसी प्रकार सम्बन्ध कारक के चिह्न में सम्बन्धी के अनुसार विकार उत्पन्न होता है। जैसे—काली गाय; राम की गाय; अच्छी लड़की; मोहन की लड़की इत्यादि।

(३) यदि एक ही सम्बन्ध के कई एक सम्बन्धी हों तो सम्बन्ध के चिह्न में पहले सम्बन्धी के अनुसार विकार उत्पन्न होगा। जैसे—राम की गाय, घोड़े और बकरियाँ चरती हैं।

नित्य सम्बंधी शब्द

बहुत से अव्यय, थोड़े से सर्वनाम और कुछ ऐसे शब्द हैं जिनमें बराबर एक सा सम्बन्ध रहता है। ऐसे शब्दों को नित्य सम्बन्धी शब्द कहते हैं। जैसे—जब-तब, इसमें जब के साथ तब का बराबर सम्बन्ध रहता है अर्थात् जब वाक्य में 'जब' का प्रयोग किया जायगा तब वहाँ 'तब' का भी प्रयोग होगा। जैसे—जब मैं वहाँ गया तब वह खा रहा था।

कुछ नित्य सम्बंधी शब्द

(१) जब—तब। 'तब के स्थान पर लोग 'तो' भी लिखते हैं पर ऐसा लिखना खटकता है।

(२) यद्यपि—तथापि। 'तथापि' की जगह 'किन्तु', 'परन्तु' आदि लिखना ठीक नहीं है। 'तो भी' लिखा जा सकता है। पद्य में 'यद्यपि' को 'यदपि' और तथापि को तदपि लिखते हैं। जैसे—यद्यपि वहाँ हैजे की बीमारी है तथापि (तो भी) मेरा वहाँ जाना अनिवार्य्य है।

(३) यदि—तो। 'तो' की जगह 'तब' लिखना ठीक नहीं है। 'यदि' की जगह 'जो' लिखा जा सकता है। जैसे—यदि आज

मोहन रहता तो यह बात होने ही नहीं पाती। जो मैं यह जान पाता कि तुम नहीं आसकोगे तो मैं स्वयं वहाँ पहुँच जाता।

(४) जो—सो। लोग 'सो' की जगह 'वह' 'वही' आदि लिखने लगे हैं। जैसे—जो खोजेगा वह पावेगा। जो देखेगा सो हँसेगा इत्यादि।

(५) जहाँ—तहाँ। 'तहाँ' के बदले में 'वहाँ' का भी प्रयोग होता है। जैसे—जहाँ छमा तहँ आप—जहाँ छमा है वहाँ ईश्वर है।

नोट—कभी-कभी नित्य सम्बन्धी शब्द गुप्त भी रहते हैं। जैसे—आप आइयेगा तो देखा जायगा। इस वाक्य में 'यदि' शब्द छिपा हुआ है। उसी प्रकार से—(जब) आप आ गये तब क्या होता है इत्यादि।

अध्याहार

अध्याहार—कभी-कभी वाक्य में संक्षेप अथवा गौरव लाने के लिए कुछ ऐसे शब्द छोड़ दिये जाते हैं जो वाक्य का अर्थ लगाते समय सहज में ही समझ में आ जाते हैं। इस प्रयोग को अध्याहार कहते हैं। जैसे—हमारी (   ) सुनता कौन है? इस वाक्य में हमारी के बाद 'बात' शब्द गुप्त है।

अध्याहार दो तरह के होते हैं—पूर्ण और अपूर्ण।

पूर्ण अध्याहार—पूर्ण अध्याहार में छोड़ा हुआ शब्द पहले कभी नहीं आता। जैसे—उसने मेरी (   ) एक भी नहीं सुनी।

अपूर्ण अध्याहार—अपूर्ण अध्याहार में छोड़ा हुआ शब्द एक बार पहले आ चुकता है। जैसे—मुझे कलम की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी पेंसिल की (   )।

पूर्ण अध्याहार का प्रयोग

(१) देखना, कहना और सुनना क्रियाओं के सामान्य वर्तमान और आसन्न भूतकाल में कभी-कभी कर्त्ता लुप्त रहता है। जैसे—कहते हैं कि स्वीडेन में कभी-कभी आधीरात में सूर्य दिखाई पड़ते हैं। सुनते हैं कि संसार में फिर लड़ाई छिड़नेवाली है। कहा भी है कि जहाँ न जाय रवि वहाँ जाय कवि। देखते हैं कि अब लैम्प में तेल नहीं है इत्यादि।

(२) विधि क्रिया में कर्त्ता अक्सर लुप्त रहता है। जैसे—( ) पधारिये। ( ) सुनिये तो सही।

(३) जहाँ प्रसंग से बात समझ में आ जाय वहाँ कर्त्ता और सम्बन्ध कारक की आवश्यकता नहीं रह जाती है। जैसे—अकबर बड़ा ही प्रभावशाली सम्राट् था। ( ) हिन्दू मुसलमान दोनों को एक नज़र से देखता था। ( ) राजधानी दिल्ली थी।

(४) सम्बन्धवाचक, क्रियाविशेषण और संकेतसूचक समुच्चयबोधक अव्ययों के साथ अगर होना, हो सकना, बनना, बन सकना आदि क्रियाएं हों तो उनका उद्देश्य अक्सर लुप्त रहता है। जैसे—

जैसे ( ) बने समझा बुझा कर धैर्य्य सब को दीजिए।

जहाँ तक ( ) हो मुझे जल्द खबर देंगे। अयब्रय वप

(५) जानना क्रिया के सम्भाव्य भविष्यत्काल का कर्त्ता अगर अन्यपुरुष हो तो वह प्रायः लुप्त रहता है। जैसे—उसके हृदय में ( ) न जाने क्या-क्या भाव उठ रहे होंगे।

(६) छोटे-छोटे प्रश्नवाचक या अन्य वाक्यों में जब कर्त्ता का अनुमान क्रिया के रूप से लग जाय तो कर्त्ता को लोप कर सकते हैं। जैसे—क्या घर जाओगे? हाँ, जाना ही ठीक है।

(७) जिन सकर्मक क्रियाओं के अर्थ में व्यापकता हो उनका कर्म लुप्त रहता है। जैसे—मोहन ( ) पढ़ लेता है पर ( ) लिख नहीं सकता।

(८) विशेषण अथवा सम्बन्धकारक के बाद बात, हाल और सङ्गति आदि अर्थवाले विशेष्य अथवा सम्बन्धी का लोप हो जाता है। जैसे—अगर मेरी और आपकी ( ) अच्छी निभी तो कुछ दिन चैन से कट जायँगे। जहाँ आप विद्यमान ही हैं वहाँ की ( ) क्या कहनी है ?

(९) कहावतों में, निषेधवाचक विधेय में तथा उद्गार में 'होना' क्रिया का वर्तमानकालिक रूप प्रायः लुप्त रहा करता है। जैसे—मैं वहाँ जा नहीं सकता ( )। दूर के ढोल सुहावने ( )। महाराज की जय ( )।

(१०) कभी कभी जटिल वाक्य में 'कि' शब्द लुप्त रहता है। जैसे—पता नहीं ( ) परीक्षाफल कब तक निकलेगा।

अपूर्ण अध्याहार का प्रयोग

(१) एक वाक्य में कर्त्ता का उल्लेख कर दूसरे वाक्य में उसका लोप कर सकते हैं। जैसे—महेन्द्र इतना असावधान लड़का है कि ( ) रोज़ एक न एक चीज़ खो ही देता है।

(२) यदि एक वाक्य में चिह्न-सहित कर्त्ता आवे और दूसरे में चिह्न-रहित तो पिछले कर्त्ता की आवश्यकता नहीं रहती। जैसे—गुणानन्द ने पढ़ना छोड़ दिया और ( ) घर जाकर खेती करने लगे।

(३) जब अनेक कर्त्ताओं की एक ही सहायक क्रिया रहे तो उसे बार-बार नहीं लिख कर अन्तिम क्रिया के साथ लिखते

हैं। जैसे—संयमपूर्वक रहने से मन प्रसन्न रहता, शरीर की वृद्धि होती और बीमारी का शिकार नहीं बनना पड़ता है।

(४) समता प्रदर्शित करनेवाले वाक्यों में उपमावाले वाक्यों के उद्देश्य के प्रायः सभी शब्द लोप कर दिये जाते हैं। जैसे—उसका शरीर बड़ा ही भयङ्कर है मानो राक्षस।

(५) प्रश्नवाचक वाक्य के उत्तर में प्रायः वही शब्द रह जाता है जिसके विषय में प्रश्न किया जाता है। जैसे—मेरी पुस्तक कहाँ है? आलमारी में। क्या आप खायँगे? हाँ, खाऊँगा।

जिस प्रकार कभी-कभी वाक्य में शब्दों का लोप हो जाता है उसी प्रकार प्रत्ययों का भी लोप हो जाता है। जैसे—मोहन खा-पीकर निश्चिन्त हो गया। कोई देखने और सुननेवाला हो तब तो इत्यादि।

अध्याहार के प्रयोग से वाक्य संक्षेप तो हो ही जाता है साथ ही भाषा का सौष्ठव भी बढ़ जाता है; इसलिए अच्छे-अच्छे लेखक इसके प्रयोग पर विशेष ध्यान देते हैं।

अभ्यास

१—नीचे लिखे वाक्यों को शुद्ध करो।

Correct the following :—

हम, तुम और वह जायगा। छोटे लड़के लड़कियाँ खेलते हैं। उसने नयी रीतियों को चलायीं। उसकी बात पर मोहन हँस दिया। दङ्गे में बालक, युवा, नर, नारी, सब पकड़ी गयीं।

(Matriculation 1920)

२—नीचे के शब्दों को इस प्रकार बैठाओ कि एक पूर्ण वाक्य बन जाय।

Arrange the following words so as to make a complete sentence.

(क) राज्य किया, ने, सम्राट् अशोक, तक, वर्ष, चालीस।

(ख) महाकवि, ने, रामायण, किया, संसार का, तुलसीदास, की, रचनाकर, उपकार, बड़ा।

(ग) कहते हैं, टापू, जिसके, पानी, चारोंओर, रहे, उसे।

(घ) है, लण्डन, इङ्गलैण्ड, राजधानी की।

(ङ) पहाड़, से, हिमालय, नदी, गङ्गा, निकलकर, बङ्गाल की, गिरती है, में, खाड़ी।

(३) नीचे लिखे वाक्य-समूह में परस्पर क्या भेद है।

What is the difference among the following sentences—(१) मैं भी वहाँ जाने को तैयार हूँ। (२) मैं वहाँ भी जाने को तैयार हूँ। (३) मैं वहाँ जाने को भी तैयार हूँ।

षष्ठ परिच्छेद

विराम-विचार (Punctuation)

पद, वाक्यांश अथवा वाक्य बोलते समय बीच-बीच में कुछ देर के लिए ठहरना आवश्यक हो जाता है। इस ठहराव को विराम कहते हैं। पद, वाक्यांश अथवा वाक्य लिखते समय जहाँ ठहराव की आवश्यकता देखी जाती है वहाँ कुछ चिह्न लगाया जाता है। ऐसे चिह्न विराम-चिह्न कहलाते हैं। विराम-चिह्नों को बिना लगाये वाक्य के अर्थ स्पष्ट-रूप से समझ में नहीं आते। कभी-कभी तो बिना विराम-चिह्नों को लगाये हुए वाक्यों को समझने में ऐसा गड़बड़झाला उपस्थित हो जाता है कि अर्थ का अनर्थ हो जाता है। इसलिए वाक्यरचना के अभ्यास के साथ-साथ विराम-चिह्नों को उपयुक्त स्थानों पर लगाने का भी अभ्यास करना ज़रूरी है। आजकल साधारणतः हिन्दी में नीचे लिखे विराम-चिह्नों का प्रयोग होता है।

अल्पविराम या कोमा=(,)
अर्द्धविराम या सेमीकोलोन=(;)
पूर्णविराम या पाई=(।)
प्रश्नबोधक चिह्न=(?)
विस्मयादिबोधक=(!)

उद्धरण=(' '), (" ")
कोलोन और डैश= :—
विभाजन=(-)

नोट—सम्बोधन के चिह्न के लिए कहीं-कहीं अल्पविराम (,) और कहीं-कहीं विस्मयादिबोधक (!) का प्रयोग करते हैं। अँगरेज़ी में ठहराव का एक चिह्न कोलोन (:) कहा जाता है। हिन्दी में अकेले कोलोन का प्रयोग नहीं होता। कोलोन के साथ डैश (—) का भी प्रयोग होता है।

अल्पविराम (Comma)

वाक्य पढ़ते समय जहाँ-जहाँ थोड़ी-थोड़ी देर ठहरने की ज़रूरत पड़ती है वहाँ-वहाँ अल्पविराम (Comma) लगाते हैं। प्रायः निम्नलिखित अवसरों पर अल्पविराम लगाने की आवश्यकता देखी जाती है—

(१) जब किसी वाक्य में कई पद, वाक्यांश या खंडवाक्य एक ही रूप में व्यवहृत हों तो अन्तिम पद आदि को छोड़कर शेष के आगे अल्पविराम लगाते हैं और अन्तिम पद, वाक्यांश आदि के पहले 'और', 'या' आदि समुच्चय रखते हैं। मगर जब अन्तिम पद आदि के आगे 'इत्यादि', 'आदि' शब्द रहे तो उसके पहले समुच्चय की ज़रूरत नहीं रहती। जैसे—पृथ्वी, बुध, शनि आदि उपग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। विद्या पढ़ने से अज्ञान दूर होता है, धन मिलता है और सभी जगह आदर होता है।

(२) वाक्य के अन्तर्गत जब कोई पद, वाक्यांश या खंडवाक्य आकर वाक्य के अन्वय को अलग कर दे तो ऐसे पद, वाक्यांश या खंडवाक्य के दोनों ओर अल्पविराम लगता है। ऐसी

जगहों में कभी-कभी डैश (—) का भी प्रयोग होता है। जैसे—मेरे एक मित्र ने, स्वप्न में भी मुझे ऐसी आशा नहीं थी, मेरे साथ बड़ा विश्वास घात किया है। आज मैंने गंगा तट पर—जब मैं टहल रहा था—एक अजीब चीज़ देखी।

(३) अर्थ में बाधा उपस्थित करने के अभिप्राय से भी अल्प-विराम लाते हैं। जैसे—राम, चाहे कैसा ही विश्वासघाती क्यों न हो, आखिर मेरा मित्र ही है।

(४) सम्बोधन-पद के आगे भी अल्पविराम का प्रयोग किया जाता है पर जब पद में विशेष दृढ़ता लानी हो तो अल्पविराम के बदले विस्मयादि-बोधक चिह्न भी लगाते हैं। जैसे—मोहन, आज टहलने चलोगे या नहीं? अरे दुष्ट! तेरा मैंने क्या बिगाड़ा था?

(५) वाक्य में जब नित्य सम्बन्धी के जोड़े का अन्तिम शब्द लुप्त रहे तो वहाँ भी अल्पविराम चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे—अगर यह बात मुझे पहले मालूम रहती, मैं कभी यहाँ नहीं आता।

(६) कोई-कोई समुच्चयसूचक शब्द 'कि' के आगे अल्प-विराम लगाते हैं। जैसे उसने देखा कि, बाग में गुलाब के फूल खिल रहे थे। परन्तु यह प्रयोग ठीक नहीं है। हाँ, जब 'कि' के बाद किसी की उक्ति अवतरण चिह्नों के बीच रहे या 'कि' लुप्त रहे तो कोमा लगाना आवश्यक हो जाता है। जैसे—मैं जानता हूँ, वह बड़ा शैतान है, मोहन ने कहा कि, "मैं किसी भी हालत में उस पर विश्वास नहीं कर सकता।"

(७) अगर वाक्य के आरम्भ में आनेवाले पद, वाक्यांश या वाक्य-खण्ड पूर्व वर्णित विषय के साथ सम्बन्ध रखता हो

तो उसके आगे अल्पविराम लाते हैं। जैसे—जोहो, यह प्रयोग उत्तम है। हाँ, इसका समर्थन मैं भी कर सकता हूँ।

(८) क्योंकि, परन्तु, किन्तु, इसलिए आदि के आगे भी अल्पविराम लाते हैं। जैसे—मैं वहाँ नहीं गया, इसलिए सब काम मिट्टी हो गया।

अर्द्धविराम (Semi-colon)

जहाँ अल्पविराम की अपेक्षा कुछ अधिक काल तक ठहरने की ज़रूरत पड़े और जहाँ एक वाक्य का दूसरे वाक्य के साथ दूर का सम्बन्ध दरसाना हो, वहाँ अर्द्धविराम (;) का प्रयोग किया जाता है। बहुत से लेखक अर्द्धविराम का प्रयोग नहीं करते हैं और इसकी जगह अल्पविराम और पूर्णविराम से ही काम चला लेते हैं, इसलिए हिन्दी के विराम-विचार में इसको विशेष महत्त्व नहीं दिया गया है।

अर्द्धविराम का प्रयोग—प्रतिदिन पाठशाला जाया करो, पाठ याद किया करो; संयम से रहो; इसी में भलाई है।

पूर्णविराम (Full-stop)

जहाँ एक वाक्य समाप्त हो वहाँ पूर्णविराम या पाई (।) का प्रयोग किया जाता है। पूर्ण वाक्य के अन्तर्गत अल्पविराम, अर्द्धविराम आदि चिह्न भी आते हैं। जैसे—महारानी विक्टोरिया ने, अपने पचास वर्ष के राजत्वकाल में; अपनी प्रजा को प्रसन्न रखने की भरपूर कोशिश की। प्रजा को दुःख न हो; राज्य में कहीं शान्ति-भंग न हो; इसका बराबर ध्यान रक्खा।

प्रश्नबोधक चिह्न (Note of Interrogation)

प्रश्नसूचक वाक्य के अन्त में पूर्णविराम की जगह प्रश्नबोधक

चिह्न (?) का प्रयोग किया जाता है। जैसे—क्या सचमुच तुम नहीं खाओगे ?

विस्मयादिबोधक (Note of Admiration)

विस्मय, हर्ष, विषाद, करुणा, आश्चर्य, भय आदि मनोवृत्तियों को प्रगट करने के लिए पद, वाक्यांश या वाक्य के अन्त में विस्मयादिबोधक (!) चिह्न लगाया जाता है। जैसे—ओह ! कैसी दर्दनाक हालत है ! देखो तो, किस बहादुरी से वह गङ्गा पार हो गया ! इत्यादि।

उद्धरण चिह्न (Inverted Commas)

जहाँ किसी दूसरे वाक्य या उक्ति को ज्यों का त्यों—उद्धृत करना होता है वहाँ उद्धरण (" ") चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जब किसी की उक्ति के अन्तर्गत किसी और दूसरे की उक्ति को उद्धृत करने की आवश्यकता पड़ जाय तो (' ') इस प्रकार का चिह्न लगाते हैं। जैसे—इतिहास में लिखा है, "नेपोलियन बड़ा वीर था। जब वह अपनी सेना से एक बार कड़ककर कहता था, 'तैयार हो जाओ' तो वायुमंडल गूँज उठता था।"

कोलोन डैश (Colon-dash)

(निर्देशक)

जहाँ पर किसी विषय पर विशेष प्रकाश डालने के लिए उदाहरण या व्याख्या करने की जरूरत पड़ती है वहाँ कोलोन डैश (:—) का प्रयोग किया जाता है। वार्तालाप सम्बन्धी लेख में भी कहनेवाले के आगे इस चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे—राजा दशरथ के चार पुत्र थे :—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न।

शशि—कहाँ तक जाना होगा।

तारा—मोहन के डेरे तक ।

नोट—कोलोन डैश के बदले केवल डैश (—) का भी प्रयोग कर सकते हैं। कोई-कोई केवल कोलोन (:) का भी प्रयोग करते हैं, पर हिन्दी में ऐसा प्रयोग कम देखा जाता है।

विभाजन (Hyphen)

जहाँ दो या दो से अधिक शब्दों को संयुक्त कर एक पद के रूप में लिखना हो वहाँ विभाजन (-) चिह्न लाते हैं। जैसे—धन-जन सभी का ह्रास हो रहा है। मैं उसे भली-भाँति पहचानता हूँ।

इन चिह्नों के अतिरिक्त हिन्दी में और भी बहुत से चि... प्रयुक्त होते हैं। जैसे—कोष्ठक ( ) आदि।

अभ्यास

१—नीचे लिखे गद्य में यथास्थान विरामादि चिह्नों ... लगाओ।

Punctuate the following:—

सुनोगी क्या हुआ आह स्मृति मात्र से हृदय में आग ज... उठी उसकी जीवित ज्वालाएं अपने पञ्जों को विकराल रूप... बढ़ाये आ रही हैं ग्लानि धिक्कार और क्रोध की मिली हुई... दारुण चोटों से इतना निर्बल हो रहा हूँ कि तड़पने की इच्... रखकर भी एक बार तड़प नहीं सकता क्या बताऊं लज्... कहते नहीं बनता मगर चाहे जिस तरह हो कहना ही पड़े... दूसरा कोई उपाय नहीं है।

('चाँद' से चिह्न रहित कर उद्धृत

सप्तम परिच्छेद

वाक्य-रचना का अभ्यास

परिवर्तन (Conversion)

वाक्य-रचना करते समय पहले बताये गये नियमों पर ध्यान रखते हुए इस बात की पूरी कोशिश करते रहना चाहिये कि वाक्य-रचना के नियमों को निबाहते हुए भी वाक्य मधुर और आकर्षक रहे। वाक्य को मधुर और आकर्षक बनाने के लिए पद, वाक्यांश और खण्डवाक्य के प्रयोग में पूरा अभ्यास रहने की आवश्यकता है। यों तो साधारणतः वाक्य कसा हुआ और गठीला होना ही चाहिये; पर कहीं-कहीं प्रायः देखा जाता है कि अभिप्राय को स्पष्ट करने के लिए, वाक्य में सरलता लाने के लिए, उसे शिथिल करना भी ज़रूरी हो जाता है। सारांश यह है कि आवश्यकता देखकर वाक्य को ढ़ला या कस देना चाहिये। इसके लिए पद, वाक्यांश और खण्डवाक्य में परस्पर परिवर्तन करना पड़ता है एवं वाक्य को कभी विस्तृत, कभी संकुचित, कभी पृथक् और कभी संयुक्त करना पड़ता है।

पद, वाक्यांश और खण्डवाक्य
(Words, Phrases and Clauses)

पद, वाक्यांश और खण्डवाक्य को आपस में परिवर्तन

करना समास, कृदन्त और तद्धितान्त पर अवलम्बित रहता है। परिवर्तन करते समय इस बात पर बराबर ध्यान रहे कि अर्थ में किसी तरह की बाधा न पड़े।

(क) पद का वाक्यांश और वाक्यांश का पद

सामासिक पद, कृदन्त और तद्धितान्त पद को वाक्यांश में और वाक्यांश को सामासिक पद, कृदन्त और तद्धितान्त में परिवर्तित कर सकते हैं।

पद का वाक्यांश

वैष्णव=विष्णु के उपासक।
लब्धप्रतिष्ठ=प्रतिष्ठा प्राप्त किये हुए।
आपादमस्तक=पैर से सिर तक।
राजनीतिज्ञ=राजनीति जानने वाले।
दार्शनिक=दर्शनशास्त्र जाननेवाले।

वाक्यांश का पद

निन्दा करने योग्य=निन्द्य।
विज्ञान जाननेवाले=वैज्ञानिक।
तेज़ चलनेवाला=द्रुतगामी।

(ख) पद का खंडवाक्य और खंडवाक्य का पद

पद का खंडवाक्य

शैव—जो शिव का उपासक है।
आजानुबाहु—जंघे तक जिसकी भुजा फैली है।
धनवान—जिसके पास धन है।
विधवा—जिस स्त्री को पति नहीं है।
दयालु—जो दया से द्रवित होता है।
महाशय—जिसका आशय महान है।

खंडवाक्य का पद

जो दुःख देता है—दुःखद।
जो विदेश का है—विदेशी।
जिसके पास विद्या है—विद्वान।
जो दूसरे का उपकार नहीं मानता—कृतघ्न।

(ग) वाक्यांश का खंडवाक्य और खंडवाक्य का वाक्यांश

वाक्यांश का खंडवाक्य

मेरे वहाँ जाते ही—जब मैं वहाँ जाता हूँ।
उसके आने पर—जब वह आयगा या आया।
शक्ति से परे—जो शक्ति से बाहर है।
लक्ष्मी के लाड़िले—जो लक्ष्मी के लाड़िले हैं।

खंडवाक्य का वाक्यांश

जब वर्षाऋतु समाप्त होगा—वर्षाऋतु के समाप्त हो जाने पर।
जो अभिमान करता है—अभिमान करनेवाला।
जिसे बुद्धि और बल है—बुद्धि-बल वाला।

मिश्रित उदाहरण

पद	वाक्यांश	खंडवाक्य
घमंडी	घमंड करनेवाला	जो घमंड करता है।
गणितज्ञ	गणित जाननेवाला	जो गणित जानता है।
दर्शक	देखनेवाला	जो देखता है।
प्रशंसनीय	प्रशंसा के योग्य	जो प्रशंसा के योग्य है।

अभ्यास

(१) नीचे लिखे पदों को वाक्यांश और खंडवाक्य दोनों में परिणत करो।

Turn the following words into phrases and clauses.

कृतज्ञ, अनिर्वचनीय, नास्तिक, जितेन्द्रिय, शास्त्रीय, वैयाकरण, स्वदेशी।

(२) नीचे लिखे वाक्यांशों या खंडवाक्यों का एक-एक पद बनाओ।

Turn the following phrases and clauses into words.

जो न्याय अच्छा जानता है। लोक के बाहर। जो स्वभाव से विरुद्ध हो। गृहकर्म से विमुख। जिसकी प्रशंसा सभी करते हैं। जिसका शत्रु ही उत्पन्न नहीं हुआ हो। जब तक जीवन रहेगा। आदर के सहित। पैर से सिर तक।

वाक्य-संकोचन और सम्प्रसारण

(The contraction and expansion of sentences)

अर्थ में विना किसी प्रकार का भेद उत्पन्न किये अनेक पदों से बने वाक्य के भाव को थोड़े ही पदों के द्वारा प्रदर्शित करने की विधि को वाक्य-संकोचन-विधि कहते हैं। ठीक इसके विपरीत थोड़े से पदों के बने वाक्य के भाव को और भी स्पष्ट करने के लिए उसे अनेक पदों में प्रकाशित करने की विधि को वाक्य-सम्प्रसारण-विधि कहते हैं। वाक्यरचना करते समय यह बात सदा ध्यान में रहे कि वाक्य सरल हो, सुगमता से समझ में आ जाय और व्यर्थ पद वाक्य में व्यवहृत न हों। वाक्य को

गठीला और रोचक बनाने के लिए ही वाक्य-संकोचन की आवश्यकता पड़ती है और स्पष्ट भाव दरसाने के लिए वाक्य-सम्प्रसारण की। इसलिए जब वाक्य में फाजिल पदों का व्यवहार किया गया हो तो उन पदों को हटाकर केवल उपयुक्त पदों की स्थापना के लिए वाक्य-संकोचन-विधि का जानना आवश्यक है। साथ ही ऐसे वाक्य को जिससे भाव स्पष्टतः नहीं झलकता हो, अगर आवश्यक हो तो दो-एक पद और बढ़ाकर भी, अर्थ स्पष्ट करने के निमित्त वाक्य-सम्प्रसारण-विधि का भी जानना ज़रूरी है। दोनों विधियों के प्रयोग के समय बराबर यह ध्यान में रखना चाहिये कि वाक्य के अर्थ में विभिन्नता न होने पावे अन्यथा सब गुड़ गोबर हो जायगा।

(क) वाक्य-संकोचन-विधि

यों तो अर्थ में बिना बाधा डाले किसी वाक्य के संकुचित करने के भिन्न-भिन्न तरीके अख्तियार किये जा सकते हैं पर यहाँ पर मुख्य दो तरीके दरसाये जाते हैं।

(१) वाक्य में व्यवहृत कई समापिका क्रियाओं को असमापिका या पूर्वकालिक क्रिया में बदलकर वाक्य संकुचित किया जा सकता है। जैसे—मास्टर साहब आये और फिर चले गये—मास्टर साहब आकर फिर चले गये।

मैं फुलवाड़ी गया और गुलाब के फूल तोड़े—मैं ने फुलवाड़ी जाकर गुलाब के फूल तोड़े।

(२) आनुषंगिक वाक्य, वाक्यांश या कई पदों के बदले एक सामासिक, प्रत्ययान्त या अल्पपद का प्रयोग करने से वाक्य संकुचित किया जाता है। जैसे—

जैसा मैं हूँ वैसा वह है—मेरे जैसा वह भी है।
जैसा काम किया वैसा फल मिला—जैसी करनी वैसा फल।
जिसे भूख लगी है उसे भोजन दो—भूखे को भोजन दो।
विष्णु भगवान् के चार भुजा हैं—विष्णु भगवान् चतुर्भुजी हैं।
उसने दशों इन्द्रियों को वश में कर लिया है—वह जितेन्द्रिय है।
उसकी आखें मृगा की आखों के समान हैं—वह मृगनैनी है।

(ख) वाक्य-सम्प्रसारण-विधि

वाक्य-संकोचन-विधि के विपरीत नियमों के द्वारा ही वाक्य का सम्प्रसारण कर सकते हैं। यहाँ पर यह ध्यान में रखना चाहिये कि वाक्य का विस्तार करते समय अनावश्यक पदों का प्रयोग नहीं होना चाहिये। विशेषकर यह देखना चाहिये कि किसी एक वाक्य में दो पूर्वकालिक क्रियाओं का व्यवहार भरसक नहीं होना चाहिये। इससे वाक्य सुनने में उलट मालूम पड़ता है। जहाँ इस प्रकार का प्रयोग हो वहाँ वाक्य को खंड-खंड कर देना ही ठीक है। जैसे—'मोहन राम की बात सुनकर क्रोधित होकर बोला'—की जगह 'मोहन ने राम की बात सुनी और क्रोधित होकर बोला' ही लिखना अधिक अच्छा मालूम पड़ता है। फिर एक ही वाक्य में एक ही संज्ञा का बार-बार प्रयोग भी अच्छा नहीं जँचता है, इसलिए एक संज्ञा को छोड़कर शेष के लिए सर्वनामों का प्रयोग करना चाहिये। जैसे—ज्यों ही मोहन ने मोहन की पुस्तक आलमारी से निकालकर पढ़ना शुरू किया त्यों ही मोहन को किसी ने बुला लिया'—वाक्य में एक 'मोहन' को छोड़कर शेष 'मोहन' के बदले सर्वनामों का प्रयोग करने से वाक्य में लालित्य आ जायगा। अर्थात् ज्यों ही मोहन ने अपनी आलमारी से पुस्तक निकालकर पढ़ना शुरू किया त्यों ही किसी

ने उसे बुला लिया। अस्तु। वाक्य सम्प्रसारण के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

(१) चैतन्य वैष्णव थे—चैतन्य विष्णु के उपासक थे।

(२) पढ़ना लाभप्रद है—पढ़ने से लाभ होता है।

(३) गरीब को धन दो—जो गरीब है उसे धन दो।

(४) वहाँ का दृश्य बड़ा हृदय विदारक था—वहाँ का दृश्य हृदय को विदीर्ण करनेवाला था।

अभ्यास

(१) नीचे लिखे वाक्यों का विस्तार करो।

Expand the following sentences.

आकाश अनन्त है। रामचन्द्र शैव थे। यह कार्य अनिवार्य है। यह बात सुनकर मुझे अनिर्वचनीय आनन्द मिला। यह शरीर क्षण-भंगुर है। संसार परिवर्तनशील है। सागर अथाह है।

पढ़े लिखे को सभी प्यार करते हैं। नास्तिक पाप-पुण्य नहीं मानता।

(२) नीचे लिखे वाक्यों को संकुचित करो।

Contract the following sentences.

पृथ्वी पर मिलनेवाला सुख कुछ ही देर ठहरता है। दसों दिशाओं को जीतनेवाला रावण शिव का उपासक था। वह विष्णु के उपासकों का संहार करनेवाला था। जिस व्यक्ति का चरित्र अच्छा है वह आदर के योग्य है। जिस जमीन में बीज लगता ही नहीं उसमें बीज बोना व्यर्थ है। जहाँ बालुओं की राशि है वहाँ ऊँट बड़ा लाभ पहुँचानेवाला होता है।

वाक्यों का संयोजन और विभाजन

(The Combination and Resulation of sentences)

वाक्यों का संयोजन करते समय पहले बताये हुए वाक्य-संकोचन-विधि पर ध्यान देना आवश्यक है, क्योंकि दोनों की विधियाँ करीब-करीब समान ही हैं। वाक्य संकोचन और वाक्य संयोजन में केवल इतना ही भेद है कि वाक्य-संकोचन में एक विस्तृत वाक्य को संकुचित करना होता है और वाक्य-संयोजन में वाक्यसमूह को मिलाना होता है।

नियम—अर्थ में बिना किसी प्रकार की विभिन्नता उत्पन्न किये ही समापिका क्रिया को पूर्वकालिक क्रिया में बदल देने से वाक्यों के उभयनिष्ट या मिलते-जुलते शब्दों को एक ही बार प्रयुक्त कर देने से, अव्यय के प्रयोग से, वाक्यों के शब्दों को आवश्यकता अनुसार उलट-फेर करने से तथा वाक्यों को पद, वाक्यांश या आनुषंगिक वाक्य बना देने से वाक्यसमूह को मिलाया जाता है। उदाहरण—

(क) समापिका क्रिया को असमापिका बनाने से तथा मिलते-जुलते को एक ही बार प्रयुक्त करने से—

वा० सं०—राम ने रावण को मारा। राम ने सीता को रावण के पाश से मुक्त किया।

संयोजित वा०—राम ने रावण को मारकर सीता को उसके पाश से मुक्त किया।

वा० सं०—सम्राट् अकबर ने उनचास वर्ष तक राज्य किया। सम्राट् अकबर ने प्रजा का पालन भलीभाँति किया।

संयोजित वा०—सम्राट् अकबर ने उनचास वर्ष तक राज्य कर प्रजा का पालन भलीभाँति किया।

(ख) अव्यय के प्रयोग से

वा० सं०—मैं स्टेशन पर गया। गाड़ी आ गयी।

सं० वा०—ज्यों ही मैं स्टेशन पर गया गाड़ी आ गयी।

वा० सं०—वह धनी है। वह अभिमानी नहीं है। उसका स्वभाव बड़ा सरल है।

सं० वा०—यद्यपि वह धनी है तथापि अभिमानी नहीं वरन् सरल स्वभाव का है।

(ग) उलट फेर से—वाक्यों को पद, वाक्यांश आदि बनाकर—

वा० सं०—श्रीनारायण मेरे भाई हैं। वे भागलपुर कालेज में पढ़ते हैं। इस साल बी० ए० में हैं। मुझ से बड़े हैं। घर रतैठा है। रतैठा मुंगेर जिले में है।

सं० वा०—मुंगेर जिलान्तर्गत रतैठा गाँव के मेरे बड़े भाई श्रीनारायण भागलपुर कालेज में बी० ए० में पढ़ते हैं।

वा० सं०—सम्राट् अशोक मगध के राजा थे। उनकी राजधानी पाटलिपुत्र थी। पाटलिपुत्र गङ्गा और सोन के संगम पर बसा हुआ था। अब भी उस प्राचीन नगरी का भग्नावशेष कुम्हरार नामक स्थान में पाया जाता है। कुम्हरार गुलजारबाग स्टेशन के निकट है।

सं० वा०—गङ्गा और सोन के संगम पर बसी हुई पाटलिपुत्र नगरी मगध देश के राजा सम्राट् अशोक की राजधानी थी

जिसका भग्नावशेष गुलजारबाग स्टेशन के निकट कुम्हरार नामक स्थान में पाया जाता है।

वा० सं०—कामता इंगलैण्ड चले गये। वे कैसरे हिन्द नामक जहाज पर गए हैं। कदाचित् समाजशास्त्र पढ़ेंगे।

सं० वा०—कामता कदाचित् समाजशास्त्र पढ़ने के लिए कैसरे हिन्द जहाज पर इंगलैण्ड गये हैं।

वाक्य-विभाजन

वाक्य-संयोजन के विपरीत नियमों के अनुसार मिलित वाक्य को अनेक वाक्यों में बदला जा सकता है—

मिलित वाक्य—	विभक्त वाक्य—
आकाश में बादल के छा जाते ही मोर उन्मत्त होकर नाच उठे।	आकाश में बादल छा गया। मोर उन्मत्त होकर नाच उठे।
वधिक की वीणा का शब्द सुनते ही मृगा सुध-बुध खोकर चारों ओर उस स्वर-लहरी की खोज में दौड़ने लगा।	मृगा ने वधिक की वीणा का स्वर सुना। सुध-बुध खो दिया। चारों ओर उसी स्वर-लहरी की खोज में दौड़ने लगा।
रात्रि हो जाने पर आकाश में तारे टिमटिमाने लगे।	रात्रि हुई। आकाश में तारे टिमटिमाने लगे।
ज्यों ही वह बाग में जाकर चुपचाप फूल तोड़ने लगा माली ने उसे देख लिया।	वह बाग में गया। जाकर चुपचाप फूल तोड़ने लगा। माली ने उसे देख लिया।

अभ्यास

(१) नीचे लिखे प्रत्येक वाक्य को टुकड़े-टुकड़े कर कई सरल वाक्यों में परिणत करो।

Break up the following into simple sentences

साहसी गगनदेव एक तीन हाथ लम्बे और चार हाथ ऊँचे सिंह और बलवान बाघ को मारकर नगर में लाया। उनके चारों लड़कों में से किसी का ब्याह नहीं हुआ है। सूर्य डूबने पर मैं घर लौट आया। काम समाप्त होने पर यहाँ रहकर मैं समय खराब करना नहीं चाहता।

(२) निम्नलिखित वाक्यों को मिलाकर एक-एक वाक्य बनाओ।

Combine the following sets of sentences into single sentences.

(१) सूर्य्योदय हुआ। तालाब में कमल खिल गये। (२) धर्म रहता है। जय होती है। (३) वह गरीब है। वह सुखी है। वह सन्तोषी है। (४) सूर्य अस्त हुए। अन्धकार फैल गया (५) सत्यनारायण बाबू बी० ए० पास हैं। स्थानीय स्कूल के मास्टर हैं। वे आज-कल घर गये हैं।

वाक्यों का परिवर्तन

(Interchanges of the sentences)

वाक्य स्वरूप की दृष्टि से तीन प्रकार के होते हैं—सरल, जटिल और यौगिक। इन तीनों तरह के वाक्य एक दूसरे में परिवर्तित हो सकते हैं। वाक्यों को परिवर्तन करने में वाक्य-संयोजन और वाक्य-विभाजन की पग-पग पर आवश्यकता पड़ती है। इसलिए पूर्ववर्णित वाक्य-संयोजन और वाक्य-विभाजन के अभ्यास को सदा ख्याल में रखना

चाहिये। वाक्यों का परिवर्तन करने में अभ्यस्त हो जाने से वाक्य-रचना में प्रौढ़ता आती है।

(क) सरल से जटिल

सरल वाक्य में प्रयुक्त विधेय-पूरक, विधेय-विशेषण, विधेय के विस्तार तथा उद्देश्य-वर्द्धक विशेषण के रूप में व्यवहृत हुए पद या पद-समूह को वाक्य के रूप में बदलकर जो-वह, यदि-तो, जब-तब, आदि अव्ययों द्वारा मिला देने से जटिल या मिश्र वाक्य बन जाता है। पद-विन्यास के नियमानुसार कभी-कभी नित्यसम्बन्धी शब्द लुप्त भी रहा करते हैं।

सरल—फ्रान्स का राजा नेपोलियन बड़ा वीर था।

जटिल—नेपोलियन, जो फ्रान्स का राजा था, बड़ा वीर था।

सरल—गर्मी में मैं प्रतिदिन गङ्गा-स्नान करता हूँ।

जटिल—जब गर्मी आती है तब मैं प्रतिदिन गङ्गा-स्नान करता हूँ।

सरल—तुम्हारा दाव पेंच सब मैं जानता हूँ।

जटिल—जो तुम्हारे दाव पेंच हैं, सभी को मैं जानता हूँ।

सरल—दयालु पुरुष दूसरों के दुःख से दुःखी होते हैं।

जटिल—जो पुरुष दयालु होते हैं वे दूसरों के दुःख से दुःखी होते हैं।

(ख) जटिल से सरल

जटिल वाक्य में आये हुए आनुषंगिक या सहायक वाक्य को वाक्यांश या पदसमूह के रूप में परिवर्तित कर नित्य सम्बंधी या अन्य योजक शब्दों को हटा देने से सरल वाक्य होता है। ऐसा करते समय यह स्मरण रखना चाहिये कि काल और अ[र्थ] में बाधा न पड़े।

जटिल—जो केवल दैव का भरोसा करता है वह कायर है।

सरल—केवल दैव पर भरोसा करनेवाला कायर है।

जटिल—जब तक मातृका बी० ए० पास नहीं करलेगा तब तक ब्याह नहीं करेगा।

सरल—मातृका बिना बी० ए० पास किये ब्याह नहीं करेगा।

जटिल—जिन्हें विद्या है वे सब जगह आदर पाते हैं।

सरल—विद्वान् सब जगह आदर पाते हैं।

जटिल—उमर, जो अरब का तीसरा खलीफ़ा था, बड़ा सरल और दयालु था।

सरल—अरब का तीसरा खलीफ़ा उमर बड़ा सरल और दयालु था।

जटिल—अगर आप चाहते हैं कि सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करें तो विद्याध्ययन कीजिये।

सरल—सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने की इच्छा से विद्याध्ययन कीजिये।

जटिल—जो मर गया है उसे मारकर क्या बहादुरी दिखाते हो?

सरल—मरे हुए को मारकर क्या बहादुरी दिखाते हो?

(ग) सरल से यौगिक

सरल वाक्य के किसी वाक्यांश को एक सरल वाक्य में अथवा असमापिका या पूर्वकालिक क्रिया को समापिका क्रिया में बदलकर और, एवं, किन्तु, परन्तु, इसलिए आदि योजकों के प्रयोग से यौगिक वाक्य बनाया जाता है।

सरल—वह भूख से छटपटा रहा है।

यौगिक—वह भूखा है, इसलिये छटपटा रहा है।

सरल—सुशील होने के कारण मोहन को सभी प्यार करते हैं।

यौगिक—मोहन सुशील है, इसलिए उसे सभी प्यार करते हैं।

सरल—मैं खाकर सो रहा।

यौगिक—मैं ने खाया और सो रहा।

सरल—आवश्यकता पड़ने पर ही मैं तुम्हारे पास आया हूँ।

यौगिक—मुझे आवश्यकता पड़ी है, इसी हेतु तुम्हारे पास आया हूँ।

(घ) यौगिक से सरल

यौगिक वाक्य में किसी स्वतन्त्र वाक्य को वाक्यांश में अथवा किसी समापिकाक्रिया को पूर्वकालिक क्रिया में परिवर्तित कर यौगिक वाक्य से सरल वाक्य बनाया जाता है। यौगिक वाक्य के अव्यय या योजकपदों को सरल वाक्य में लुप्त कर दिया जाता है।

यौगिक—उसने मुझे दूर ही से देख लिया और चुपचाप गायब हो गया।

सरल—वह मुझे दूर ही से देखकर चुपचाप गायब हो गया।

यौगिक—वह गंगा-स्नान कर आया और रामायण का पाठ करने लगा।

सरल—गंगा-स्नान कर आने पर वह रामायण का पाठ करने लगा।

यौगिक—संध्या हुई और तारे आकाश में टिमटिमाने लगे।

सरल—संध्या होने पर तारे आकाश में टिमटिमाने लगे।

यौगिक—वह मन लगाकर नहीं पढ़ता था, इसलिए फेल हो गया।

सरल—मन लगाकर न पढ़ने के कारण वह फेल हो गया।

(ङ) जटिल से यौगिक

जटिल वाक्य के अंगवाक्य (आनुषंगिक) वाक्य को एक स्वतन्त्र वाक्य बना देने और उनके नित्य-सम्बंधी दोनों शब्दों का लोपकर नहीं, तो, किन्तु, अन्यथा आदि संयोजक विभाजक अव्ययों का प्रयोग करने से यौगिक वाक्य होता है।

जटिल—अगर भला चाहते हो तो इस काम में हाथ मत डालो।

यौगिक—तुम अपना भला चाहते हो इसलिए इस काम में हाथ मत डालो।

जटिल—राम जो कुछ कहता है वह कर दिखाता है।

सरल—राम कहता है और कर दिखता है।

(च) यौगिक से जटिल

यौगिक वाक्य में स्वतन्त्र वाक्यों में से एक को छोड़कर शेष को आनुषंगिक वाक्य बना देने से जटिल वाक्य बन जाता है। ऐसी दशा में यौगिक वाक्य में व्यवहृत संयोजक या विभाजक अव्ययों को नित्य-सम्बंधी अव्ययों में बदल देना पड़ता है।

यौगिक—वह पढ़ा लिखा तो उतना नहीं है पर उसे दुनिया की हवा लग चुकी है।

जटिल—यद्यपि वह उतना पढ़ा लिखा नहीं है तथापि उसे दुनिया की हवा लग चुकी है।

यौगिक—मन लगाकर पढ़ो, अवश्य पास करोगे।

जटिल—अगर मन लगाकर पढ़ो तो अवश्य पास करोगे।

यौगिक—चन्द्रोदय हुआ और सारा संसार प्रकाशमय हो गया।

जटिल—ज्यों ही चन्द्रोदय हुआ सारा संसार प्रकाशमय हो गया।

यौगिक—मन तो मलिन है, अतः गंगास्नान करने से क्या होगा।

जटिल—अगर मन मलिन है तो गंगास्नान करने से क्या होगा ?

अभ्यास

(१) निम्नलिखित सरल वाक्यों को जटिल वाक्यों में परिणत करो—Turn each of the following simple sentences into complex ones :—(१) उद्योगी पुरुष सफलमनोरथ होते हैं। (२) उसने अपराध स्वीकार किया। (३) चंचल बालक प्रायः पढ़ने में बड़ा तेज होते हैं। (४) मेहनती लड़के इमतिहान में पास कर जाते हैं।

(२) नीचे के जटिल वाक्यों का सरल वाक्य बनाओ। Turn each of the following complex sentences into simple ones. (१) जब विपद आ पड़ता है तब धीरज धरना चाहिये। (२) जो बालक स्वास्थ्य पर ध्यान नहीं देते वे बराबर रोगग्रस्त रहते हैं। (३) जो समझदार है, वह ऐसा घृणित काम नहीं करेगा। (४) मैंने उसे जैसा कहा वैसा ही उसने किया। (५) राम ने कहा कि मैं कलकत्ते जाऊँगा।

(३) नीचे के सरल वाक्यों को संयुक्त वाक्यों में बदलो। Turn the following simple sentences into compound ones. (१) वह मेरी पुस्तक लेकर चुपचाप चल दिया । (२) मोहन ने घर जाकर पिता को प्रणाम किया। (३) सूर्य्योदय होते ही लोग अपने-अपने कामों में लगे। (४) तुम यत्न करने पर ही कृतकार्य होगे।

(४) नीचे के संयुक्त वाक्यों का सरल वाक्य बनाओ। Turn the following compound sentences into simple ones. (१) गंगा नदी हिमालय पहाड़ से निकलती है और बंगाल की खाड़ी में गिरती है। (२) मेरी बात नहीं मानोगे तो काम नहीं चलेगा।

(५) नीचे लिखे जटिल वाक्यों को संयुक्त वाक्यों में परिणत करो। Turn the following complex sentences into compound ones. (१) जो पुस्तक मैंने खरीदी वह लाभप्रद है। (२) यह सब कोई जानते हैं कि वह बड़ा चालाक है। (३) मैंने जो पेड़ लगाये थे वे अब फलने लगे। (४) यद्यपि वह धनी है पर अभिमानी नहीं है।

(६) नीचे लिखे संयुक्त वाक्यों का जटिल वाक्य बनाओ। Turn the following compound sentences into complex ones. (१) वह बड़ा अभिमानी है इसीलिए किसी से बोलना अपनी इज्ज़त के खिलाफ़ समझता है। (२) वह बहुत दुर्बल है इसलिए एक पग भी नहीं चल सकता है। (३) वह पढ़ने में तेज है इसीलिए शिक्षक उसे बड़ा मानते हैं। (४) ज्योंही वह यहाँ आया मुझे दुःख देना शुरू किया।

वाच्य-परिवर्तन

पिछले किसी प्रकरण में बताया जा चुका है कि वाच्य के अनुसार वाक्य तीन तरह के होते हैं—कर्त्तृवाच्य, कर्म-वाच्य और भाववाच्य। इन तीनों के लक्षण भी दिये जा चुके हैं। यद्यपि इनके लक्षण के विषय में मतभेद है तथापि हमें पूर्व वर्णित लक्षण ही अधिक उपयुक्त जँचते हैं। प्रायः व्याकरण में, देखा जाता है कि, निम्नलिखित भाँति से तीनों के लक्षण दिये जाते हैं—

कर्त्तृवाच्य—जहाँ क्रिया के लिंग और वचन कर्त्ता के लिंग और वचन के अनुसार हों। जैसे—मैं पढ़ता हूँ। वह सोता है।

कर्मवाच्य—जहाँ क्रिया के लिंग और वचन कर्म के लिंग और वचन के अनुसार हों। जैसे—मुझ से रोटी खायी गयी।

भाववाच्य—जहाँ क्रिया के लिंग और वचन कर्त्ता और कर्म किसी के भी लिंग और वचन के अनुसार न हों बल्कि क्रिया सदा एक वचन, पुलिंग और अन्य पुरुष में हो। जैसे—मुझ से सोया गया।

उपर्युक्त लक्षणों को मान लेने से बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न हो जाती है। उदाहरण के लिए अगर कर्मवाच्य में कर्म के लिंग और वचन के अनुसार क्रिया के लिंग और वचन का होना मान लें तो 'मैं ने रोटी खायी' 'उसने पुस्तक पढ़ी' आदि वाक्य भी कर्मवाच्य के अन्तर्गत आ जायँगे और उपर्युक्त लक्षणकारों ने ऐसे वाक्यों को कर्मवाच्य के ही अन्तर्गत माना है। फिर ऐसे वाक्यों को जिनकी क्रियाएँ, सदा एक वचन, पुंल्लिंग और अन्यपुरुष में हों, भाववाच्य मान ली जायँ तो, 'रानी ने कहा', 'राम ने रोटी को खाया' आदि वाक्यों को भी भाववाच्य ही मानना पड़ेगा। और कई व्याकरणों

में ऐसा माना भी गया है, इसलिए किसी पूर्व प्रकरण में बताये गये लक्षण भी यद्यपि उतने दुरुस्त तो नहीं कहे जा सकते तथापि जब तक ऐसा गड़बड़झाला विद्यमान है और जब तक हमारे वैयाकरणों के बीच कोई सन्तोषप्रद निर्णय नहीं हो रहा है तब तक वे ही लक्षण मानना उपयुक्त है, क्योंकि उपर्युक्त लक्षणों से ये लक्षण अधिक स्पष्ट अवश्य हैं। जो हो, इस प्रकरण में केवल इतना ही दिखाना है कि वाच्यों में परिवर्तन कैसे होता है।

सकर्मक धातु से बने हुए कर्त्तृवाच्य से कर्मवाच्य और अकर्मक धातु से बने हुए कर्त्तृवाच्य से भाववाच्य बनाये जाते हैं। फिर कर्मवाच्य और भाववाच्य को कर्त्तृवाच्य में रूपान्तर कर सकते हैं।

कर्त्तृवाच्य से कर्मवाच्य

सकर्मक कर्त्तृवाच्य में कर्त्ता को करण के रूप में बदलकर क्रिया के मुख्य धातु को सामान्य भूत बनाकर उसके आगे 'जाना' धातु के रूप को कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार, उसी काल में, जोड़ देने से कर्मवाच्य होता है। जैसे—

कर्त्तृवाच्य	कर्मवाच्य
रामने पुस्तक पढ़ी।	राम से पुस्तक पढ़ी गयी।
मोहन ने रोटी खाई।	मोहन से रोटी खायी गयी।
सम्राट् अशोक ने चालीस वर्ष तक राज्य किया।	सम्राट् अशोक से चालीस वर्ष तक राज्य किया गया।
उसने मिठाई चुराई।	उससे मिठाई चुराई गयी।
मैंने उसे पकड़ा।	वह मुझ से पकड़ा गया।

रहा है। वह नींद में है। वह सुप्तावस्था में है। वह खर्राटे ले रहा है। उसे नींद ने धर दबाया है। वह निद्रा के वशीभूत हो गया है।

वह यहाँ से भाग गया

वह यहाँ से गायब हो गया। वह यहाँ से नौ-दो ग्यारह हो गया। वह यहाँ से चम्पत हो गया। वह यहाँ से रफूचक्कर हो गया। वह यहाँ से सिर पर लात रखकर भागा।

वह मर गया

उसने पञ्चत्व प्राप्त किया। उसके प्राण पखेरू उड़ गये। उसने सदा के लिए महानिन्द्रा की गोद में विश्राम ले लिया। उसने अन्तिम साँस ले ली। वह यहाँ से सदा के लिए चल बसा। उसने संसार से अन्तिम विदाई ले ली। वह भवबंधन से छूट गया। उसकी प्राणवायु निकल गयी। उसका देहान्त हो गया। वह काल कवलित हुआ। उसकी मृत्यु हो गयी। उसे मौत ने धर दबाया। उसने अपनी मानव-लीला संवरण की। उसका जीवन-प्रदीप बुझ गया। उसके जीवन रूपी मसिपात्र की स्याही का अंत हो गया। उसने इस असार संसार को छोड़ दिया। उसे गंगा लाभ हुआ। उसके जीवन का अंत हो गया। वह परलोक सिधारा। वह स्वर्गलोक को सिधारा। वह स्वर्ग सिधारा। उसका स्वर्गवास हो गया। वह इस जीवन से हाथ धो बैठा। वह अमर-धाम को सिधारा। वह अन्तकाल कर गया। वह मृत्यु के मुँह में विलीन हो गया। उसे काल ने धर दबाया। वह कज़ा कर गया इत्यादि।

वर्षा होने लगी

पानी पड़ने लगा। वृष्टि होने लगी। बूंदें टपकने लगीं। मेघ बरसने लगा इत्यादि।

सूर्योदय हुआ

भगवान अंशुमाली उदयाचल पर्वत पर शोभित हुए। भगवान भास्कर भासमान हुए। कमल-नायक की प्रखर किरणें उदयाचल पर भासित हुईं। अरुणोदय हुआ। अंशुमाली का शुभागमन हुआ इत्यादि।

अभ्यास

१—नीचे लिखे वाक्यों के अर्थ को अनेक प्रकार के वाक्यों में लिखो।

Illustrate the different ways the meanings of the following sentences.

भोर हुआ। संध्या हुई। उसकी इज्जत चली गयी। आकाश में बादल घिर आये। रात हुई। चन्द्रोदय हुआ।

अष्टम परिच्छेद

रिक्त स्थानों की पूर्ति

(Filling up of ellipses.)

वाक्य-रचना के अभ्यास के लिए वाक्य में कुछ शब्दों या पद-समूहों या वाक्यांशों को छोड़ देते हैं और उन्हें, प्रकरण के प्रयोगों और वाक्य रचना के नियमों पर ध्यान रखते हुए वाक्य का पूरा अर्थ प्रकाशित करने के लिए पूरा करना पड़ता है। इसीको रिक्त स्थानों की पूर्ति करना कहते हैं।

रिक्त स्थानों की पूर्ति वाक्य के अर्थ पर दृष्टि रखते हुए कल्पना-द्वारा की जाती है। कोई विशेष नियम इसके लिए नहीं है। हाँ, इतना ध्यान में रखना चाहिये कि रिक्त स्थानों की पूर्ति से वाक्य अर्थबोधक के साथ-साथ सुपाठ्य और ललित होना चाहिये।

उदाहरण—

रात……। चारो दिशाओं में……छा गया। आकाश में…… टिमटिमाने लगे। कुछ देर के बाद……उदय हुए।……दूर हुआ। चन्द्रमा की……सारी……में।……सरोवर में…… खिलउठीं। पूर्ति—

रात हुई। चारों दिशाओं में अन्धकार छा गया। आकाश

में तारे टिमटिमाने लगे। कुछ देर के बाद चन्द्रदेव उदय हुए। अन्धकार दूर हुआ। चन्द्रमा की शुभ्र ज्योत्स्ना सारी दुनिया में छा गयी। सरोवर में कुमुदिनी खिल उठी।

हमारे देश के......में समाचार पत्र पढ़ने की......का अभाव है। एम० ए०, बी० ए०......करने पर भी हमारे......दुनिया के......से......रहते हैं।......हैं कि अमेरिका......इंगलैण्ड में......देशों में मजदूर तक......पढ़ते हैं।

पूर्ति

हमारे देश के नवयुवकों में समाचार पत्र पढ़ने की रुचि का अभाव है। एम० ए०, बी० ए० पास करने पर भी हमारे नवयुवक दुनिया के समाचारों से अनभिज्ञ रहते हैं। सुनते हैं कि अमेरिका और इंग्लैण्ड आदि उन्नत देशों में मजदूर तक भी अख़बार पढ़ते हैं।

वाक्य का कोई पद, वा पदसमूह अथवा अंश अगर दिया हुआ रहे तो वाक्य पूरा करना :—

'हिन्दी'—'हिन्दी' हमारी मातृभाषा है।

लखनऊ से—हिन्दी की सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'माधुरी' 'लखनऊ से' प्रकाशित होती है।

'ईश्वर की लीला'—ऐसा कौन व्यक्ति है जो 'ईश्वर की लीला' की विचित्रता को जान सकता है।

'मूलमन्त्र'—विद्या पढ़ना उन्नति का 'मूलमंत्र' है

'प्रेम'—

बिना 'प्रेम' रीझै नहीं,
'तुलसी' नन्दकिशोर।"

अभ्यास

१—रिक्तस्थानों की पूर्ति करो।
Fill up the blanks:—

पंचमी—दिन श्री रामचन्द्र समुद्र के—जाने का विचार करने—। फिर वानरों—सहायता—नल और नील ने समुद्र में में पुल बांधा। यह सेतु दस योजन चौड़ा सौ योजन—था। उस पर—तीन—दिन—वानरी सेना पार—।

(Matriculation 1920)

२—रिक्तस्थानों की पूर्ति करो।
Fill up the blanks in the following:—

अजी क्या बक-बक कर—हो। मुझे इन धूर्तों—अच्छी खबर है। उड़ाते—गुब्बारे—कहते— कि मेरे गुरु—उड़ रहे हैं—हाथ से पटरी चलाते हैं—बतलाते में कि भूत—चला रहा है। अस्तीन से रुपया निकालते हैं और चिल्लाते हैं कि जिन—गया है। अफसरों के—से—आते हैं तो—ते हैं—मैं वहाँ नहीं—था। —रूप में रामजी पहुँचे—चमाइन। सब बात—कर लड़का होने के समय कितने—थे और किस मुंह के घर में—हुआ सो सब बातलाते हैं।

(Intermediate 1913. C. U)

नवम परिच्छेद

(१) रोजमर्रा (दैनिक बोल-चाल की रीति)

(Common use)

जिन लोगों की मातृ-भाषा हिन्दी है वे ही दैनिक बोल-चाल में वाक्य-रचना कर सकते हैं। इस प्रकार की रचना के ढंग को रोजमर्रा कहते हैं। बोलने अथवा लिखने में रोजमर्रे का विचार आवश्यक समझा जाता है। इसका व्यवहार करने से भाषा में सरलता आती है। परन्तु इसके प्रयोग का कोई खास नियम नहीं है। अच्छे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लेखकों के लेखों को ध्यान पूर्वक पढ़कर और उन लेखों में व्यवहृत रोजमर्रे के शब्दों के प्रयोग का ढंग मालूम किया जा सकता है। बहुत से लोग नये-नये रोजमर्रे के शब्दों को गढ़कर उन्हें वाक्य में व्यवहार करने की अनधिकार चेष्टा करते हैं। ऐसे लोगों को यह ख्याल रखना चाहिये कि रोजमर्रा के शब्द गढ़े नहीं जाते हैं। बोलचाल में रोजमर्रे के जो शब्द जिस ढंग से प्रयुक्त होते आ रहे हैं वे उसी ढंग से प्रयुक्त होंगे। उलट-फेर करने से वाक्य की रचना-शैली भद्दी हो जायगी। यहाँ पर रोजमर्रे के कुछ शब्द और उनके प्रयोग दिये जाते हैं—

'सुवह शाम'—मैं 'सुवह शाम' दोनों वक्त टहला करता हूँ। यहाँ पर 'सुवह शाम' रोजमर्रे का शब्द है। इसके वदले सुवह संध्या, या भोर शाम आदि लिखना उचित नहीं है।

हर रोज—'वह हर रोज यहाँ आया करता है।' हर रोज की जगह 'हर दिन' नहीं होगा। हाँ, 'दिन' के पहले 'प्रति' लिखा जाता है। जैसे 'प्रति दिन'।

रोज-रोज—तुम्हारी रोज-रोज की यह हरकत मुझे पसन्द नहीं। रोज-रोज की जगह 'दिन-दिन' नहीं होता।

वातचीत, वहस-मुवाहसे, कोस-कोस पर, पाँच-पाँच दिन में, दो-चार दिन में, सात-आठ कोस पर, दिन व दिन, आये दिन आदि शब्द रोजमर्रे के शब्द हैं।

सात-आठ या आठ-सात, पाँच-सात दो-चार, एक-आध, आठ-छः आदि शब्द रोजमर्रे के हैं। इन शब्दों की जगह आठ-नौ छ, सात नौ, चार दो, आध एक, चार सात आदि शब्द प्रयुक्त नहीं हो सकते क्योंकि ये रोजमर्रे के शब्द नहीं हैं।

यहाँ पर यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि वाक्यों में एक ही ढंग के शब्दों या पदों का व्यवहार होना चाहिये। अगर साधारण भापा के शब्दों का प्रयोग करने की इच्छा हो तो आदि से अंत तक उसी ढंग के शब्दों का ही व्यवहार उचित है और अगर वड़े-वड़े उच्च भापा के पदों का प्रयोग करना हो तो अथ से इति तक उसी ढंग के पदों का व्यवहार होना चाहिये। दो ढंग की भापा की मिलावट अखरने लगती है। जैसे—मैंने उसका हस्त पकड़ा की जगह 'मैंने उसका हाथ पकड़ा' लिखना ही ठीक है। 'आवश्यकता' रफा नहीं वल्कि की पूरी की जाती है। हाँ, 'जरूरत रफा की जाती है इत्यादि।

(२) वाग्धारा या मुहाविरे का प्रयोग

(The use of Idiom)

'मुहाविरा' को कोई-कोई 'मुहावरा' भी लिखते हैं। परिभाषा—ऐसे पद या वाक्यांश जो अपना सामान्य अर्थ छोड़कर कुछ और ही विलक्षण अर्थ जतावे उसे वाग्धारा या मुहाविरा कहते हैं। मुहाविरे का प्रयोग करने से वाक्य की रौनक बढ़ जाती है और वह वजनदार भी हो जाता है। जहाँ तक हो सके वाक्य में मुहाविरे का प्रयोग करना ही उचित है। हाँ, जब तक इसके प्रयोग का ढंग न मालूम हो तब तक इसके बेढंगे प्रयोग से वाक्य का अर्थ ही बदल जाता है। कभी-कभी तो अर्थ का अनर्थ भी हो जाने की सम्भावना रहती है। इसलिए मुहाविरे के अर्थ को अच्छी तरह समझकर ही उसका प्रयोग करना युक्तिसंगत होता है। यहाँ पर कुछ मुहाविरे के अर्थ और प्रयोग बताये जाते हैं।

प्रायः शरीर के अधिकांश अंगों के आगे भिन्न-भिन्न क्रियाओं को जोड़ देने से भिन्न-भिन्न अर्थ के मुहाविरेदार शब्द बन जाते हैं।

सिर का मुहाविरा

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
सिर खुजलाना	टालमटोल करना	सिर खुजलाने से काम नहीं चलेगा।
सिर पकड़ना	निरुपाय होना	वह लाचारी वश सिर पकड़ कर बैठ रहा।
सिर पड़ना	नाम लगना	कुल दोष मेरे ही सिर पड़ा।

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
सिर चिराना	हठात् कुछ ले लेना	किसी पर सिर चिराना ठीक नहीं।
सिर काटना / सिर उतारना	मारना	सिर काटना सहज नहीं है। अधिक बोलोगे तो सिर उतार लूंगा।
सिर मूड़ना	माथा मूड़ना, ठगना	आज किसका सिर मूड़ा जाय।
सिर लेना	भार लेना	इसके पढ़ाने की जिम्मेवारी आप अपने सिर ले लें तो बड़ी कृपा हो।
सिर हिलाना	अस्वीकार करना	आखिर उसने सिर हिला ही दिया।
सिर देना	बलिदान होना	धर्म के लिए हकीकत ने अपना सिर दे दिया।
सिर पटकना	सौंप देना	उसने सब काम मेरे सिर पटक दिया।
	झख मारना	वह सिर पटकते रह गया।
सिर मढ़ना	सौंप देना	उसने सब काम मेरे सिर मढ़ दिया।
सिर धुनना	लाचारी के अर्थ में	'सिर धुनि-धुनि पछताहि'।
सिर चढ़ाना	आदत बिगाड़ना	तुम्हींने इस लड़के को सिर चढ़ाकर बिगाड़ दिया है।

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
सिर पार उतरना	बहाने के अर्थ में	मोहन मेरे सिर पार उतर गया।
सिर ठोकना	पीटना	चोरों ने उसका सिर ठोक दिया।
माथा ठनकना	ताड़जाना	सुनते ही उसका माथा ठनक गया।
माथा खाना	तंग करना	ओह ! तुम मेरा माथा खा गये।
सिर माथे	स्वीकृति के अर्थ में	आपकी आज्ञा सिरमाथे।
केश—		
केश पकना	बूढ़ा होना	अब तो उसके केश भी पक चले।
केश करना	(अन्त्येष्टि क्रिया के अर्थ में)	उसका केश कर दिया गया। (ग्रामीण प्रयोग)
केश(बाल)फाड़ना	माँग संवारना	आजकल के लड़के केश (बाल) फाड़ने में ही मस्त रहते हैं।
बाल—		
(हथेली पर) बाल जमाना	असम्भव के अर्थ में	अगर यह काम तुम कर लो तो मैं हथेली पर बाल जमा दूँ।
बाल-बाल बचना	निरापद होना	वह आज बाल-बाल बच गया।

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
बाल बाँका करना	बिगाड़ने के अर्थ में	'बाल न बाँका करि सकै'
आँख—		
आँख मारना / आँख मटकाना	इशारा करना	मोहन उसकी ओर आँख मारता है। वाह ! बन्दर किस खूबी से आँख मटका रहा है
आँख मूँदना	विचार के अर्थ में / अवहेलना करना / मृत्यु के अर्थ में	वह आँख मूँदकर विचार में तल्लीन हो गया। उसने मेरी ओर से आँख मूँद ली। उसने सदा के लिए आखें मूँद लीं।
आँख खुलना	समझ आना	कलकत्ते जाने से उसकी आँखें खुल गयीं।
आँख दिखाना	डराना	तुम किसे आँख दिखा रहे हो?
आँख लगना	सोना, प्रेम होना, प्रतीक्षा करना	आधी रात को मेरी आँख लग गयी। शकुन्तला की आँखें दुष्यन्त से लग गयी थीं। बहुत दिनों से आँखें लगी हुई थीं। आज मुराद पूरी हुई।

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
चार आँखें होना	सामने होना	जब आँखें चार होती हैं मोहब्बत आ ही जाती है।
आँख बदलना	रङ्गत बदलना	मैं देखता हूँ कि उसकी आँखें बदल गयी हैं।
आँख में चर्बी छा जाना	घमण्ड करना	धन के मद से आँख में चर्बी छा गयी है।
आँख नीली-पीली करना	क्रोध में आना	उसने आँखें नीली-पीली कर कहा।
आँख उठाकर देखना	कृपा-दृष्टि करना	एक बार भी तो मेरी ओर आँख उठाकर देखिये, बस मैं तो निहाल हो जाऊँगा।
आँख से खून उतरना	अत्यधिक क्रोध के अर्थ में	क्रोध के मारे उसकी आँख से खून उतर आया।
आँखें फेरना	रङ्ग बदलना	कैसी आँखें फेर लीं मतलब निकल जाने के बाद।
आँख की पुतली होना	प्यारी चीज़	कृष्ण यशोदा की आँख की पुतली के समान थे।
आँखें ठंढा करना आँखें जुड़ाना	सुख प्राप्त करना	बहुत दिनों के बाद ब्रह्मदेव ने अपने पुत्र को देखकर अपनी आँख

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
कान—		
कान देना	ध्यान देना	कान देकर सुनो !
कान फटना	(ऊँची आवाज़ सुनकर)	उसकी बोली सुनते-सुनते मेरे कान फट गये।
कान में रखना	याद रखना	गुरु के उपदेश को कान में रख लो।
दाँत—		
दाँत खट्टे करना	पराजित करना	शिवाजी ने शत्रुओं के दाँत खट्टे कर दिये।
दाँत पीसना	क्रोध करना	वह दाँत पीसकर रह गया।
दाँत दिखाना दाँत निपोड़ना	लाचारी दिखाना	करूँ तो क्या करूँ, उसने तो अपने दाँत दिखा दिये। वाह ! कैसे दाँत निपोड़ दिये।
दाँत तोड़ना	चोट पहुँचाना	दाँत तोड़कर मुँह में घुसेड़ दूँगा।
दाँत में उँगली देना	चकित होना	यह तमाशा देख दाँत में उँगली देना पड़ा।
दाँत मारना	कौर मारना	वह दाँत मार-मार कर खा रहा है

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
मुँह—		
मुँह फिरना	स्वाद उतरना घमण्ड होना	मीठा खाते-खाते मुँह फिर गया। आजकल उसका मुँह फिरा रहता है।
मुँह की खाना	कड़ा उत्तर पाना	बच्चू को मुँह की खानी ही पड़ी।
मुँह चलाना	बकबक करना	अधिक मुँह चलाना ठीक नहीं है।
मुँह फटना	लोभी होना	उसका मुँह फटा हुआ है।
मुँहफट्ट होना	बकवादी होना	यह तो बड़ा मुँहफट्ट हो गया।
मुँह ही मुँह देना	जवाब पर जवाब	बड़ों को मुँह ही मुँह देना ठीक नहीं है।
मुँह फक होना	घबड़ाना	डर से उसका मुँह फक हो गया।
मुँह पीला होना	"	डर से उसका मुँह पीला हो गया।
मुँह काला होना	कलङ्क लगना	तुम्हारी करनी से ही तुम्हारा मुँह काला हुआ है।
मुँह में पानी भरना	प्रबल इच्छा होना	अंगूर देखकर सियार के मुँह में पानी भर आया।
मुँह माँगी मौत मिलना	इच्छा पूरी होना	मुँह माँगी मौत किसे मिलती है।

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
मुँह बनाना	चेष्टा विशेष के अर्थ में	कैसा मुँह बना लिया है।
मुँह बिगाड़ना	उलटा जवाब देना	राम ने उसका मुँह बिगाड़ दिया है
मुँह फुलाना	चिढ़ जाना	मेरी बात पर उसने अपना मुँह फुला दिया
मुँह देखना	पक्षपात के अर्थ में	यहाँ तो मुँह देखकर ही सब काम होता है।
मुँह चुराना	बोलने से डरना	राम बड़ा मुँह चुराता है।
मुँह धोना	व्यंग के अर्थ में (नहीं देना)	मुँह धोकर आइये, तब यह चीज़ मिलेगी।
गाल—		
गाल बजाना	बक-बक करना	यहाँ गाल बजाने से काम नहीं चलेगा।
गाल फुलाना	रूठ रहना	किस लिए आपने गाल फुला दिया।
हाथ—		
हाथ उठाना	मारना, समर्थन के अर्थ में	स्त्रियों पर हाथ उठाना ठीक नहीं। उसने हाथ उठाकर अपनी स्वीकृति प्रगट की।
हाथ डालना	प्रारंभ करना	बिना सोचे विचारे किसी काम में हाथ

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
		डालना उचित नहीं।
हाथ धो बैठना	खो देना	वह अपनी पुस्तक से हाथ धो बैठा।
हाथ खींच लेना	सम्बंध तोड़ लेना	आज से मैंने उस काम से हाथ खींच लिया।
हाथ मलना	पछताना	बूढ़ा हाथ मलने लगा।
हाथ आना	मिलना	कुछ हाथ आया अथवा नहीं।
हाथ धोकर पीछे पड़ना	जीजान से पीछे पड़ना	वह तुम्हारे पीछे हाथ धोकर पड़ा है।
हथियाना	लेना	तुम मेरी सभी चीज हथियाने में बाज नहीं आते।
हाथ पर हाथ धरे बैठना	कुछ नहीं करना	मैं देखता हूँ कि आप आज कल हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं।
हाथ होना	कृपा होना सहायता के अर्थ में	इसके ऊपर बड़े-बड़े का हाथ है। मालूम होता है इस काम में आप का हाथ जरूर है।
हाथ कटाना	नाकाबू होना	राम अपना हाथ कटा बैठा।
हाँथाबाँही करना	लड़ना	राम उससे हाँथाबाँही करने लगा।

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
हाथ ऊपर होना	आगे रहना	सब काम में उसका हाथ ऊपर रहता है।
हाथ देखना	हस्तरेखा विचार के अर्थ में	ज्योतिषी लड़के का हाथ देखता है।
हाथ मारना	शर्त करना	मैं हाथ मारे कहता हूँ।
उँगली—		
उँगली उठाना	इशारा करना	कृष्ण ने राम की ओर उँगली उठायी।
उँगली दिखाना	डराने के अर्थ में	उँगली दिखाने से कोई डर नहीं जायगा।
ओठ—		
ओठ सटना	बोली बंद होना	तुम्हारा ओठ क्यों न सट जाता।
ओठ चबाना	क्रोधित होने के अर्थ में	क्रोध के मारे वह ओठ चबाने लगा।
ओठ सूखना	प्यास लगना	मेरा ओठ सूख गया।

इसी प्रकार प्रायः शरीर के अधिकांश अंगों के मुहाविरेदार शब्द बन सकते हैं। हम विस्तार-भय से अधिक शब्द देने में असमर्थ हैं। अब कुछ अन्य शब्दों के बने मुहाविरेदार शब्दों को देना भी आवश्यक है।

संख्यावाचक शब्दों के मुहाविरेदार शब्द

नौ दो-ग्यारह	गायब होना	वह झट नौ दो ग्यारह हो गया।

मुहाविरा	अर्थ	प्रयोग
छः पाँच	सरलता या भोलापन दिखाने के अर्थ में जानना क्रिया के साथ प्रयुक्त होता है	सच कहता हूँ मैं छः पाँच कुछ नहीं जानता।
तीन-तेरह	तितिर बितिर होना	सारी सेना तीन-तेरह हो गयी।
चार दिन	कुछ दिन	चार दिन के लिए आये हो जो कुछ करना है कर लो।
आठ-आठ आँसू	रोने के अर्थ में	वे आठ-आठ आँसू रोये।
सोलहो आना बावन तोला पावरत्ती	बिल्कुल	यह बात सोलहो आना ठीक है। तुम्हारा कहना बावन तोला पावरत्ती उतरता है।
निन्यानवे के फेर में पड़ना	संकट में पड़ना	आजकल वह निन्यानवे के फेर में पड़ा है (ग्रामीण प्र०)

अन्य शब्दों के मुहाविरेदार शब्द और वाक्यांशादि

पानी—

पानी का बुलबुला=क्षणभंगुर। पानी के मोल=बड़ा सस्ता।

पानी चढ़ना=रङ्ग आना। पानी-पानी होना=शर्मिन्दा होना।
पानी पी पी कर=लगातार। पानी भरना=नीचता प्रदर्शित करना
पानी में आग लगाना=असम्भव बात करना।
पानी भरी खाल=क्षणिक जीवन।
पानी जाना=इज़्ज़त जाना।

—पानी गये न ऊबरे,
मुक्ता मानिक चून—रहीम।

पानी बुझाना=गर्म वस्तु में पानी डालना।
पानी पी कर जात पूछना=काम कर पीछे सोचना।
चुल्लू भर पानी में डूबना=शर्म के अर्थ में।

खाक—

खाक छानना=दर-दर फिरना। खाक में मिलना=नष्ट होना।
खाक उड़ना=बरबाद होना। खाक चाटना=तबाह होना।
खाक डालना=छिपाना।

खून—

खून बहाना=मार काट करना।
खून बिगड़ना=खून का रोग होना। खून सूखना=डरना।
खून उबलना=क्रोध आना। खून का प्यासा=जान का गाहक।

अन्य मुहाबिरेदार शब्द, पद-समूह या वाक्यांश आदि

संज्ञा

उछलकूद, कथोपकथन, कूपमंडूक, कोहराम, गोलमाल, गुलगपाड़, घनचक्कर, चमक-दमक, चिन्तासागर, छलप्रपंच, छल-

थल, छीनझपट, जाहिरजहान, नीचऊँच, नोकझोंक, पापपुण्य, मारपीट, मस्तानीचाल, मुक्तकंठ, मेलाठेला, मेलजोल, मनोहमन, समासमाज, सर्वसाधारण, सर्वाधिकार, सुखदुख, हस्तामलक, हाथपाँव, हिताहित, हिस्साबखरा इत्यादि।

सर्वनाम

अपने में, हम सब, कोई और, कई एक, जो न सो इत्यादि।

विशेषण

अजरअमर, अनगिनत, अनर्गल, अनपढ़, अनसूंघा, अनिर्वचनीय, अर्थलोलुप, असाधारण, अभूतपूर्व अपरिमित, किंकर्तव्यविमूढ़, कृतकार्य, खुल्लमखुल्ला, घनघोर, घटाटोप, चितचोर, डवांडोल, न्यूनाधिक, पकापकाया, बनाबनाया, भग्नहृदय, भूतपूर्व, भोलाभाला, मनमाना, मूसलाधार, लालबुझक्कड़, लोमहर्षण, श्रृंखलाबद्ध, सर्वसम्मत, सायंकालीन, हस्तान्तरित, हरादरा इत्यादि।

क्रिया

उ—गुलछर्रे उड़ाना, उथलपड़ना, हाथ उठाना।

क—पुण्यकमाना, दाँत कटकटाना, छप्पर फड़फड़ाना, नदी का कलकल करना, कुड़कुड़ाना, चूहा कूदना। ख—खर्राटे लेना, गुल खिलना, दाँत खट्टा होना, पत्ते खड़खड़ाना, खिलखिला कर हँसना। ग—गड़गड़ाना, गिड़गिड़ाना, गुर्राना, गुंजार करना, घ—घुरना, घिनघिनाना।

च—चहचहाना, चासनी चढ़ाना, चढ़बैठना, चबाचबाकर बात करना, अक्ल चरने जाना। छ—छनछनाना, छलमला आना, छटपटाना, छानना। ज—जमना—(दूकान जमना, हाथजमाना,

कहने के अभिप्राय से, अथवा किसी को उपालम्भ देने, किसी से व्यंग करने वा चेतावनी देने के लिए ऐसे मुहाविरेदार वाक्य वा उक्तियों का प्रयोग किया करते हैं जो स्वतन्त्र अर्थ रखती हों। ऐसे वाक्य या उक्तियाँ 'कहावत' कहलाती हैं। इसे प्रमादवाक्य या जनश्रुति भी कहते हैं।

कहावतों के प्रयोग से बोली अधिक युक्त, प्रमाणित और जोरदार तथा भाषा स्पष्ट और जानदार हो जाती है। किसी बात को स्पष्ट कर समझाने के लिए कहावतों का प्रयोग अधिक प्रभावोत्पादक होता है। भाषा में सजीवता लाने के लिए 'कहावत' बड़ी ही उपयोगी सिद्ध हुई है। वक्ता भी जब भाषण करने लगता है तो बीच-बीच में रोचकता और स्पष्टता लाने के लिए कहावतों का प्रयोग करता है। सारांश यह है कि कहावत रचना का एक मुख्य अंग है। तभी तो अलंकारशास्त्र में इसे भी भाषा का एक अलंकार समझा गया है जो 'लोकोक्ति' अलंकार के नाम से प्रसिद्ध है।

मुहाविरे में वाक्य स्वतन्त्र अर्थ नहीं रखता पर कहावतें स्वतन्त्र अर्थ रखती हैं। जब पृथक्-पृथक् कहावतों का प्रयोग करते हैं तो सापेक्ष वाक्य समूह का निचोड़ कहावत में रहता है। जैसे—

गणेश बड़ा सन्तोषी है, वह द्रव्य के लिए हाय-हाय नहीं करता। थोड़ी-बहुत खेतीबारी है, जो जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त है। मजे से दिन कट जाते हैं। किसी का मुँह नहीं जोहना पड़ता। "न ऊधो का लेना है न माधो को देना है।"

इसी प्रकार सैकड़ों कहावतें हिन्दी में प्रयुक्त होती हैं। कुछ कहावतें नीचे दी जाती हैं—

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता। आगे नाथ न पीछे पगहा। आँखों के अन्धे गाँठ के पूरे। आँखों के अन्धे नाम नयनसुख। आम का आम गुठली का दाम। एक पंथ दो काज। ऊँची दूकान, फीकी पकवान। ऊँट किस करवट बैठे। ओछे की प्रीत बालू की भीत। अन्धेर नगरी चौपट राजा। काला अक्षर भैंस बराबर। दिया तले अँधेरा। चोर की डाढ़ी में तिनका। ग्वालिन अपने दही को खट्टा नहीं कहती। गुड़ खाय गुलगुले से परहेज। छट्ठी का दूध जबान पर आ गया। छोटा मुँह बड़ी बात। डूबते को तिनके का सहारा। ढाक के तीन पात। दाल भात में मूसलचन्द। मान न मान मैं तेरा मेहमान। पाँचो अंगुली घी में। सीधी अंगुली से घी नहीं निकलता, नौ की लकड़ी नब्बे खर्च। पूछे न आछे मैं दुलहिन की चाची। पैसे की हाँड़ी गयी कुत्ते की जात पहचानी गयी। मोहर की लूट कोयले पर छाप। हँसुआ के ब्याह में खुरपी का गीत। हाथी के खाये कैथ हो गये इत्यादि।

कुछ संस्कृत और उर्दू की कहावतें भी हिन्दी में व्यवहृत [illegible]। जैसे—

कहने के अभिप्राय से, अथवा किसी को उपालम्भ देने, किसी से व्यंग करने या चेतावनी देने के लिए ऐसे मुहाविरेदार वाक्य या उक्तियों का प्रयोग किया करते हैं जो स्वतन्त्र अर्थ रखती हों। ऐसे वाक्य या उक्तियाँ 'कहावत' कहलाती हैं। इसे प्रमादवाक्य या जनश्रुति भी कहते हैं।

कहावतों के प्रयोग से बोली अधिक युक्त, प्रमाणित और जोरदार तथा भाषा स्पष्ट और जानदार हो जाती है। किसी बात को स्पष्ट कर समझाने के लिए कहावतों का प्रयोग अधिक प्रभावोत्पादक होता है। भाषा में सजीवता लाने के लिए 'कहावत' बड़ी ही उपयोगी सिद्ध हुई है। वक्ता भी जब भाषण करने लगता है तो बीच-बीच में रोचकता और स्पष्टता लाने के लिए कहावतों का प्रयोग करता है। सारांश यह है कि कहावत रचना का एक मुख्य अंग है। तभी तो अलंकारशास्त्र में इसे भी भाषा का एक अलंकार समझा गया है जो 'लोकोक्ति' अलंकार के नाम से प्रसिद्ध है।

मुहाविरे में वाक्य स्वतन्त्र अर्थ नहीं रखता पर कहावतें स्वतः अर्थ रखती हैं। जब पृथक्-पृथक् कहावतों का प्रयोग करते हैं तो सापेक्ष वाक्य समूह का निचोड़ कहावत में रहता है। जैसे—

गणेश बड़ा सन्तोषी है, वह द्रव्य के लिए हाय-हाय नहीं करता। थोड़ी-बहुत खेतीबारी है, जो जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त है। मजे से दिन कट जाते हैं। किसी का मुँह नहीं जोहना पड़ता। "न ऊधो का लेना है न माधो को देना है।"

इसी प्रकार सैकड़ों कहावतें हिन्दी में प्रयुक्त होती हैं। कुछ कहावतें नीचे दी जाती हैं—

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता। आगे नाथ न पीछे पगहा। आँखों के अन्धे गाँठ के पूरे। आँखों के अन्धे नाम नयनसुख। आम का आम गुठली का दाम। एक पंथ दो काज। ऊँची दूकान, फीकी पकवान। ऊँट किस करवट बैठे। ओछे की प्रीत बालू की भीत। अन्धेर नगरी चौपट राजा। काला अक्षर भैंस बराबर। दिया तले अँधेरा। चोर की डाढ़ी में तिनका। ग्वालिन अपने दही को खट्टा नहीं कहती। गुड़ खाय गुलगुले से परहेज। छट्ठी का दूध जबान पर आ गया। छोटा मुँह बड़ी बात। डूबते को तिनके का सहारा। ढाक के तीन पात। दाल भात में मूसलचन्द। मान न मान मैं तेरा मेहमान। पाँचो अंगुली घी में। सीधी अंगुली से घी नहीं निकलता, नौ की लकड़ी नब्बे खर्च। पूछे न आछे मैं दुलहिन की चाची। पैसे की हाँड़ी गयी कुत्ते की जात पहचानी गयी। मोहर की लूट कोयले पर छाप। हँसुआ के ब्याह में खुरपी का गीत। हाथी के खाये कैथ हो गये इत्यादि।

कुछ संस्कृत और उर्दू की कहावतें भी हिन्दी में व्यवहृत होती हैं। जैसे—

सं०—एरंडोपि द्रुमायते। दैवोपि दुर्बल घातकः।

उर्दू—मरे को मारे शा मुदा। जान न पहचान बड़ी बीबी सलाम। मियाँ की दौड़ मसजिद तक। चला था नमाज बख्शवाने रोजा गले पड़ा।

नीति विषयक अथवा युक्तिसंगत पद्य या पद्यांश भी कहावत के रूप में गद्य के साथ प्रयुक्त होते हैं। कथन की पुष्टि के लिए अथवा भाव को प्रभावान्वित करने के लिए ही ऐसा किया जाता है। जैसे—

भाई ! मैं तो तङ्ग आ गया। जब देखो तब दूसरों का मुँह जोहना पड़ता है। ज़रा भी इधर किया कि आफ़त मची। कैफ़ियत तलब करते-करते नाकों दम आ गया। नौकरी बड़ी बुरी बला है। कहा भी है—

"पराधीन सपनहुँ सुख नाहीं।"

इसी प्रकार—रहिमन पानी राखियो, बिन पानी सब सून।
पानी गये न ऊबरे, मुक्ता मानिक चून॥
ढोल गवाँर शूद्र पशु नारी।
ये सब ताड़न के अधिकारी॥
तिरिया तैल हमीर हठ,
चढ़ै न दूजी बार।
अन्धेर नगरी, चौपट राजा।
सुर्ख रू होते हैं इन्सां ठोकरें खाने के बाद।
रंग लाती है हिना पत्थर पर घिस जाने के बाद॥
जाति पाँति पूछे नहीं कोई। हरि के भजे सो हरि के होई॥
चार दिना की चाँदनी, फिर अन्धेरी रात।

खेती के सम्बन्ध की घाघ कवि की बनायी कहावतें दिहातों में बहुतायत से प्रचलित हैं।

(४) अनुच्छेद (Paragraph)

जिस प्रकार पदों के नियमबद्ध सङ्गठन को, जिसमें एक पूरा विचार प्रकट करने की शक्ति हो, वाक्य कहते हैं उसी प्रकार ऐसे वाक्य-समूह को जिसमें एक ही भाव प्रदर्शित हो अनुच्छेद कहते हैं अर्थात् सापेक्ष-वाक्य समूह अनुच्छेद कहलाते हैं। एक अनुच्छेद समाप्त होने पर दूसरी पंक्ति से नये भाव को

लेकर दूसरा अनुच्छेद लिखना प्रारम्भ किया जाता है। अनुच्छेद-रचना के समय इस बात पर बराबर ध्यान रहना चाहिये कि वाक्यों का इस प्रकार का सङ्गठन हो कि विचारों का तारतम्य नष्ट न होने पावे और जो कुछ कहना चाहें उसका क्रमिक विकास होता जाय। जो भाव प्रगट किया जाय, वह जब तक स्पष्ट नहीं होगा तब तक वाक्यों का क्रमबद्ध सिलसिला जारी रहेगा। भाव स्पष्ट होने से सिलसिला तोड़कर दूसरा अनुच्छेद लिखना प्रारम्भ होगा। अनुच्छेद के वाक्यों में आकांक्षा, योग्यता और क्रम रहता है।

परस्पर के वार्तालाप को कथनोपकथन कहते हैं। इसमें प्रत्येक की उक्ति अलग-अलग कर एक-एक अनुच्छेद में रखना पड़ता है।

अभ्यास

१—नीचे लिखी क्रियाओं के भूतकालिक रूपों से एक-एक वाक्य बनाओ।

Frame sentences using the following verbs in the past tense :

हाथ मारना, हाथ लगाना, मुँह लगाना, बात बनाना, मुँह आना, बात फेरना, आँख दिखाना। (I. A. Ex.)

२—नीचे लिखे शब्दों को व्यवहार करते हुए एक-एक वाक्य बनाओ।

Form sentences using the following words:

कथोपकथन, नोंकझोंक, दारमदार मूसलाधार, कूपमंडूक, सिर पर लात, मोह में पड़कर, बाजार गर्म है।

३—नोचे लिखीकहावतों की व्याख्या करो।

Explain the following:

(a) मोहरों की लूट और कोयलों पर छाप, (b) पेट में चूहा कूदना, (c) अपना डफला अपना बजान (d) मियाँ की दौड़ मसजिद तक, (e) चोर की दाढ़ी में तिनका, (f) जङ्गल में मंगल (g) भख लोटना।

(I. A. I. sc. 1919)

४—नीचे की कहावतों का प्रयोग दिखाओ।

Give in your own words the significance of the following proverbs:

ग्वालिन अपनी दही को खट्टा नहीं कहती। घर पर फूस नहीं और नाम धनपत। रस्सी जल गयी पर बल नहीं गया। सत्तर चूहे खाके बिल्ली चली हज को।

(Matriculation, 1916, C. U.)

५—निम्नलिखित की व्याख्या करो।

Translate or explain the following Passage:

(a) आये तो हरि भजन को ओटन लगे कपास।

(b) अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता।

(c) एक खून का खूनी लाख खून का गाजी।

(d) गुड़ खाय गुलगुलों से परहेज।

(e) जैसा देस तैसा भेस। (I. A. 1916, C. U.)

दशम परिच्छेद

अर्थ-प्रकाश (Paraphrase)

गद्य या पद्य के वाक्यों को स्पष्ट करने के लिए अनेक विधियों का प्रयोग किया जाता है, जिन्हें वाच्यार्थ या सरलार्थ, सारार्थ या भावार्थ, तात्पर्य और व्याख्यादि कहते हैं। अगर पद्य-वाक्य रहे तो अन्वय कर अर्थ करने में सुगमता होती है।

अन्वय (Prose-order)—पद्यों की पद-स्थापन-प्रणाली गद्यों की पद-स्थापन-प्रणाली के समान नियमबद्ध नहीं रहती है। पद्य वाक्यों को गद्य के पद-क्रम के नियमानुसार गद्य में रखने को ही अन्वय कहते हैं। अगर अन्वय में गद्य के पद-क्रम को नियमबद्ध करने के लिए एकाध शब्द ऊपर से भी जोड़ने की ज़रूरत हो तो जोड़ सकते हैं। गद्य का अन्वय नहीं होता।

वाच्यार्थ या सरलार्थ (clear meaning)—वाक्य के कठिन पदों, पदसमूहों, वाक्यांशों और मुहाविरों को सरल वाच्यार्थ में बदलकर, सुबोध वाक्य में उसे परिवर्तित कर दिया जाता है जिसे वाक्य का सरलार्थ या वाच्यार्थ कहते हैं।

भावार्थ या सारार्थ (Substance)—वाच्यार्थ अथवा पर्य्यायवाची शब्दों के द्वारा किये हुए अर्थ को छोड़कर केवल भाव

लेकर स्वतन्त्र वाक्यों में जो अर्थ किया जाता है। उसे भावार्थ या सारार्थ कहते हैं।

तात्पर्य्य (Purport)—कहनेवाले की इच्छा को तात्पर्य्य कहते हैं। तात्पर्य्य लिखने के समय विषयान्तर की बातें अलग कर दी जाती हैं। केवल वक्ता के कहने का अभिप्राय व्यक्त किया जाता है। सारार्थ और तात्पर्य्य में बहुत थोड़ा अन्तर है।

व्याख्या (Explanation)—पूर्वापर प्रसंग की सारी बातों का उल्लेख तथा वाक्यों के अन्तर्गत रहस्य-पूर्ण बातों का उद्घाटन करते हुए गद्य वा पद्य-वाक्यों के विस्तार पूर्वक अर्थ करने को व्याख्या या टीका कहते हैं। योग्यता के अनुसार व्याख्या अनेक ढंग की हो सकती है।

यहाँ पर एक पद्य उद्धृत कर ऊपर की परिभाषाओं के उदाहरण दिये जाते हैं—

धोवत सुन्दरि बदन, करन अतिही छवि छाजत।
वारिधि-नाते शशि-कलंक, जनु कमल मिटावत॥
(सत्य हरिश्चन्द्र)

(१) अन्वय (Prose-order)—सुन्दरि करन बदन धोवत (जो) अतिही छवि छाजत। जनु कमल वारिधि-नाते शशि कलंक मिटावत।

(२) वाच्यार्थ (Clear meaning)—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कवि कहते हैं—(गंगाजी में स्नान करते समय) सुन्दर स्त्रियाँ हाथों से मुँह को धोती हैं जो बहुत ही सुन्दर मालूम पड़ता है। मानो कमल समुद्र के सम्बंध से चन्द्रमा की कालिमा मिटा रहा है।

(३) भावार्थ (Substance)—स्नान करते समय सुन्दर

स्त्रियाँ सुन्दर हाथों से अपने सुन्दर मुख के मैल को छुड़ा रही हैं।

(४) तात्पर्य (Purport)—स्नान करते समय स्त्रियाँ हाथ से अपना मुँह साफ कर रही हैं।

(५) व्याख्या (Explanation)—यह पद्य हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक और कवि भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द्र लिखित 'सत्य हरिश्चन्द्र' नामक नाटक का है। सत्य के पीछे अपने राज-पाट, धन-धान्य सब कुछ विश्वामित्र को दान देकर सत्यवादी हरिश्चन्द्र भारत के अमरतीर्थ काशी पहुँचे हुए हैं। यहाँ पुण्य-सलिला भागीरथी की मनोमुग्धकारी शोभा को देखकर उनका हृदय आनन्द से उमड़ आता है। उसी आनन्द की तरंग में वे गंगाजी की अपूर्व छवि का वर्णन करते हैं। शोभा का वर्णन करते-करते किनारे पर स्त्रियों को स्नान करते हुए देखकर वे कहते हैं अथवा यों कहिये कि कवि उनसे कहलवाते हैं—स्नान करती हुई सुन्दरियाँ अपने हाथ से मुँह को धो रही हैं जो बड़ा ही शोभायुक्त मालूम पड़ता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कमल समुद्र के सम्बंध के कारण चन्द्रमा के कलंक को मिटा रहा है। यहाँ चूँकि हाथ कमल के समान कोमल और सुन्दर है, इसलिए उसे कमल और चन्द्र के समान सुन्दर मुख को चन्द्र मानकर कवि उत्प्रेक्षा करता है कि कमल चन्द्र के कलंक को मिटा रहा है। 'समुद्र के नाते' कहने का तात्पर्य्य यह है कि कमल और चन्द्र दोनों की उत्पत्ति सागर (क्षीर सागर) से है, इसलिए दोनों में समुद्र के नाते भाई-भाई का सम्बंध हुआ। एक भाई का दूसरे का कलंक दूर करना स्वाभाविक ही है। पद्य उत्प्रेक्षा अलंकार से भूषित है।

अभ्यास

(१) नीचे लिखे की व्याख्या करो।
Explain the following:

(क) कारज धीरे होत हैं काहे होत अधीर।
समय पाय तरुवर फरै, केतिक सींचहिं नीर॥
(M. E. 1920)

(ख) कोटि यतन कोऊ करौ, परै न प्रकृतिहिं बीच।
नल बल जल ऊँचौ चढ़ै, अंत नीच को नीच॥

(ग) गुनी गुनी सब ही कहै, निगुनी गुनी न होत।
सुन्यौ कहूँ तरु अर्क ते, अर्क समान उदोत॥
(B. A. Ex. 1918)

(२) नीचे लिखे अनुच्छेद की व्याख्या करो।
Explain the following :

अहा! स्थिरता किसी को भी नहीं है। जो सूर्य उदय होते ही पद्मिनीवल्लभ लौकिक और वैदिक दोनों कर्मों का प्रवर्त्तक था। जो दो पहर तक अपना प्रचंण्ड प्रताप क्षण-क्षण बढ़ाता गया, जो गगनाङ्गन का दीपक और काल-सर्प का शिखामनि था, वह इस समय परकटे गिद्ध की भाँति देखो समुद्र में गिरा चाहता है। (सत्य हरिश्चन्द्र)

(३) नीचे का भावार्थ लिखो।
Give the Substance of the following :

(क) जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सुबीत बहार।
अब अलि रही गुलाब में, अपत कटीली डार॥

(ख) यहि आशा अटक्यो रह्यो, अलि गुलाल के मूल।
अइहैं बहुरि बसन्त ऋतु, इन डारन ये फूल॥
(विहारी)

ग्यारहवाँ परिच्छेद

पत्र-रचना

पत्र-लेखन रचना का एक मुख्य अंग माना जाता है। लेख, कहानी, पुस्तकादि लिखनेवालों की संख्या तो थोड़ी ही होती है। सभी नहीं लिख सकते, परन्तु पत्र लिखने का काम तो प्रायः सभी को करना पड़ता है। बड़े-बड़े लेखकों से लेकर अक्षर-ज्ञान प्राप्त किये हुए व्यक्तियों तक को पत्र लिखने की आवश्यकता पड़ती है। जो मूर्ख हैं वे भी पढ़े-लिखे लोगों से पत्र लिखवा कर अपना काम चला लेते हैं। इसलिए पत्र लिखने की साधारण योग्यता प्राप्त करना बहुत ज़रूरी है। साधारणतः पत्रों के तीन भेद हैं—(१) प्रार्थना-पत्र, (२) आज्ञा-पत्र और (३) कार्य्य-सम्बंधी पत्र।

(१) प्रार्थनापत्र—किसी बड़े अफसर को लिखा जाता है।

(२) आज्ञा-पत्र—अपने अधीन के कर्मचारियों के प्रार्थना-पत्र के उत्तर में लिखा जानेवाला पत्र आज्ञा-पत्र कहलाता है।

(३) कार्यपत्र—सम्बंधी के कुशल-सम्बंधी या व्यापार के सम्बंध के पत्र को कार्य्यपत्र कहते हैं। इस विभाग में निमन्त्रण आदि सम्बन्ध-पत्र भी सम्मिलित हैं।

सभी प्रकार के पत्रों में मुख्य दो बातों पर ध्यान देना उचित है। एक पत्र-सम्बंधी सभ्यता अर्थात् शिष्टाचार पर और दूसरे पत्र में लिखे जानेवाले मुख्य विषय पर।

पत्र के शिष्टाचार या विनय पर ध्यान देने के लिए यह देखना चाहिये कि जिन्हें पत्र लिखा जा रहा है वे बड़े हैं, पूज्य हैं, सम श्रेणी के हैं या छोटे हैं। जिस श्रेणी के व्यक्ति हों उसी श्रेणी के प्रचलित शिष्टाचार के नियम के अनुसार प्रशस्ति या सरनामा लिखना चाहिये। हिन्दी में प्रचलित प्रणाली के दो भेद हैं; एक प्राचीन और दूसरी नवीन प्रणाली।

पुराने ढंग के लोग विशेष कर कम पढ़े-लिखे व्यक्ति, पंडित, व्यापारी और जमींदार आदि अब भी पुरानी प्रणाली का ही अनुसरण करते हैं और नये विचार के शिक्षित लोग नवीन प्रथा के अनुसार पत्र लिखते हैं। नवीन प्रणाली में व्यर्थ की आडम्बर-पूर्ण बातें नहीं लिखकर संक्षेप में ही मुख्य-मुख्य बातें लिख दी जाती हैं। आज-कल इसी प्रणाली का अधिक प्रचार हो रहा है।

पुरानी परिपाटी की प्रशस्तियाँ कई ढंग की होती हैं। पहले किसी देवता या ईश्वर को नमः लिखा जाता है। फिर पत्र प्रारम्भ करते समय बड़ों को—सिद्ध श्री सर्वोपमा विराजमान सकल गुण उजागर श्री………शुभस्थाने………योग्य लिखी से………का नमस्कार, प्रणाम आदि। नाम के पहले सम्मान के लिए 'विद्यावारिधि', 'परमप्रतापान्वित' आदि बड़े-बड़े विशेषण भी कभी-कभी जोड़ दिये जाते हैं। नाम के साथ नियम के अनुसार बार-बार 'श्री' लिखने की भी परिपाटी है, इस प्रकार प्रशस्ति लिखकर 'अत्रकुशलम् तत्रास्तु', 'हर दो तरफ की कुशल चाहिये', 'आप की कृपा से' 'श्री गंगा माई के अनुग्रह

...' 'आनन्दकंद भगवान कृष्णचन्द्र की कृपा से' यहाँ कुशल ...……आप की कुशल चाहते हैं……इत्यादि लिखकर आगे समाचार यह है' अथवा 'बाद सूरत जो' या 'समाचार एक बाँचना जी', आदि लिखकर पत्र में लिखनेवाली आवश्यक बातें लिखी जाती हैं और अंत में 'पत्र शीघ्र लिखिये' 'या' पत्रोत्तर अवश्य दीजिये' आदि तथा शुभमस्तु, इतिशुभम् और तिथि लिखते हैं।

'श्री' लिखने का नियम—महाराज को १०८, गुरु और पिता को ६, बड़ों को ५, शत्रु को ४, मित्र और समश्रेणीवालों को ३, सेवक को २ और स्त्री को १।

छोटों और बराबरवालों को 'सिद्ध श्री' के बदले 'स्वस्ति श्री' तथा प्रणामवाची शब्द के बदले आशीर्वाद, आशीष, 'राम-राम' आदि लिखे जाते हैं।

नवीन-प्रणाली के अनुसार पत्र लिखने में शिष्टाचार के उपर्युक्त लिखे लौह-विधान को शिथिल कर दिया गया है। इस परिपाटी के अनुसार देवता या ईश्वर के प्रणाम के पीछे पत्र लिखने के कागज पर दाईं ओर कोने पर वह स्थान लिखते हैं जहाँ से पत्र लिखते हैं और ठीक उसके नीचे तिथि या तारीख। उसके बाद बड़े-छोटे के अनुसार प्रशस्ति लिखी जाती है। सम्बन्धियों, इष्टमित्रों या आत्मीय व्यक्तियों के पत्र में प्रशस्ति के नीचे प्रणाम, नमस्कार या आशीर्वाद आदि लिखा जाता है पर व्यावहारिक पत्र में यह नहीं लिखा जाता है। फिर कुशलादि जताने के पश्चात् जिस कार्य के लिए पत्र लिखा जाय उसको व्यक्त करना पड़ता है और अन्त में अपना हस्ताक्षर कर पत्र के पृष्ठ भाग पर पत्र पानेवाले का पता लिखा जाता है।

पत्र लिखने में प्रशस्ति या समाप्ति के शब्द

१—बड़ों और गुरुजनों के लिए—

(क) पूज्यपाद, पूज्यवर, मान्यवर, पूज्य चरणेषु, श्रद्धास्पद आदि।

(ख) आज्ञानुवर्त्ती, आज्ञाकारी, सेवक, कृपैषी, कृपाकांक्षी प्रणत, स्नेह-भाजन, कृपाभिलाषी आदि।

२—बराबरवालों के लिए—

(क) प्रियवर, बन्धुवर, मित्रवर, प्रियवर पाठक जी, प्रियवर ठाकुर जी आदि।

(ख) भवदीय, आपका स्नेही आदि।

३—छोटों के लिए—

(क) प्रिय, चिरञ्जीव, आयुष्मान् आदि।

(ख) तुम्हारा, तुम्हारा शुभचिन्तक, हितैषी आदि।

४—मित्र के लिए—

(क) सुहृदवर, मेरे अभिन्न, मित्रवर आदि।

(ख) भवदीय, आपका अभिन्न हृदय-मित्र आदि।

५—पति के लिए—

(क) आर्यपुत्र, प्राणेश्वर, प्राणाधार, प्राणपति आदि।

(ख) आपकी दासी, सेविका, किंकरी आदि।

६—स्त्री के लिए—

(क) प्रियतमे, प्रिये, प्राणेश्वरी आदि।

(ख) तुम्हारा हितैषी।

७—व्यावहारिक पत्र में (क) महाशय।

(ख) आप का।

यदि पत्र का उत्तर देना हो तो 'आपका पत्र मिला। पढ़कर प्रसन्नता हुई।' 'पत्र पढ़ते ही हृदय आह्लाद से गद्-गद् हो उठा' आदि और अगर पत्र में कोई आश्चर्य की बात हो तो, 'पत्र पढ़ते ही दंग रह गया' आदि लिखते हैं। अगर चिन्ता या दुःख की बात पत्र में रहे तो, 'पत्र को पढ़ कर बड़ा दुःख हुआ', 'हृदय चिन्ता से व्याकुल हो उठा' इत्यादि लिखना चाहिये।

पत्र का पता लिखते समय खूब सावधानी से काम लेना चाहिये। यों तो सारा पत्र स्पष्ट और सुन्दर अक्षरों में लिखना चाहिये परन्तु पता लिखने में विशेष सावधानी रखनी चाहिये। पत्र लिखकर उसे लिफाफे में बंदकर लिफाफे के ऊपर पता लिखना चाहिये। अगर पोस्टकार्ड हो तो उसके पीछे पता लिखने-वाली जगह में पता लिखते हैं।

मुख्य विषय—प्रशस्ति आदि को विचारपूर्वक लिखकर पत्र के विषय पर विचार करना होता है कि पत्र किस अभिप्राय से लिखा जा रहा है, जितनी बातें पत्र में लिखनी हों, अगर सम्भव हो तो, उनका संकेत कागज पर लिख लेना चाहिये। तब हर एक संकेत के भाव को स्पष्ट और सरल वाक्यों में लिखते जाना चाहिये। एक बात पूरी हो जाने पर दूसरी बात शुरू की जानी चाहिये। अन्यथा क्रम टूट जाने से पत्र भद्दा हो जाता है। इसलिए संकेत को पहले लिख लेना जरूरी है। पत्र की भाषा सरल और सुपाठ्य होना आवश्यक है, भाषा आडम्बर-पूर्ण नहीं होनी चाहिये। पत्र लिखते समय ऐसा मालूम पड़े कि जिसे पत्र लिख रहे हैं वह सामने खड़ा है और पत्र लिखनेवाला उससे बातें कर रहा है। ऐसा समझ लेने से पत्र की भाषा में बना-वटीपन नहीं आने पाता है।

पत्र के द्वारा अच्छे-अच्छे उपदेश, निबंध और कहानी भी लिखे जाते हैं। इस ढंग के पत्र को लिखने में बड़ी बुद्धिमत्ता की आवश्यकता होती है। इधर 'चाँद' नामक मासिक पत्र का एक विशेषांक 'पत्रांक' के नाम से प्रकाशित हुआ है, उस अंक में यही खूबी है कि अच्छे-अच्छे लेख कविताएँ और गल्प पत्रों में ही लिखे गये हैं। अस्तु।

पुरानी-प्रथा के पत्र का नमूना

श्री रामः

सिद्धि श्री सर्वोपमा विराजमान, सकल गुण आगर नाम उजागर शुभस्थान संग्रामपुर पूज्य मामा जी को योग्य लिखी खड्गपुर से देवनारायण, शिवनारानण और रामनारायण का कोटि-कोटि प्रणाम बँचना जी। आगे यहाँ श्रीगंगा माता की कृपा से कुशल आनन्द है। आप लोगों का कुशल श्री गंगा माता बनाये रखें जिसे सुनकर चित्त प्रसन्न हो। अपरंच समाचार जो आपने कहा था कि रोपा होने के बाद मैं खड्गपुर जाऊँगा। सो रोपा तो हो गया है, अब कब तक आवेंगे। अगर आवें तो थोड़ा गुड़ और पका केला लेते आवें। विशेष समाचार उत्तम है। अधिक क्या लिखूँ। इति शुभ मिती भाद्र शुक्ला सप्तमी सं० १९८३ विक्रमी।

नये ढङ्ग के पत्र का नमूना

ओ३म्

खजाञ्ची रोड, पटना
ता०.................

अभिन्न श्री,

बहुत दिन हो गये, आपका कोई समाचार नहीं मिला है।

मैं दो पत्र दे चुका पर एक का उत्तर भी नहीं मिला है। मालूम नहीं इसका क्या कारण है। समाचार न मिलने के कारण हृदय चिन्तित रहा करता है। एक तो आज कल मेरा मन योंही उदास रहा करता है। आत्मीय जनों और मित्रों के अभाव से हृदय एकान्तता का कटु अनुभव कर बराबर दुःखी रहा करता है। ऐसी हालत में समय-समय पर आप जैसे अभिन्न मित्रों का पत्र भी नहीं मिलते रहने से चिन्ता और भी बढ़ जाती है। आशा है, आप प्रसन्न होंगे। दत्तचित्त होकर परीक्षा की तैयारी करते होंगे। विशेष क्या लिखूँ। पत्र अवश्य देंगे।

आपका अभिन्न हृदय
सुरेश्वर

टिकट

श्रीयुत श्रीनारायण पाठक
प्रेम छात्र निवास मुंदी चक,
भागलपुर

चतुर्थ खंड

प्रथम परिच्छेद

भाषा की शैली (Style)

इन दिनों हिन्दी के गद्य-भाग में कई तरह की लिखने की शैलियाँ प्रचलित हैं। कुछ लोगों का मत है कि हिन्दी की गद्य-रचना में संस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग भले ही हो परन्तु अरबी, फारसी, अंगरेज़ी आदि भाषाओं के प्रचलित शब्दों का भी व्यवहार न किया जाय। इस मत के पोषक रेलगाड़ी जैसे प्रचलित शब्द को 'धूम्रशकट' जहाज़ को 'जलयान' पसिञ्जरट्रेन को यात्रीवाहक धूम्रशकट, दवात को मसिपात्र आदि लिखते हैं। कुछ लोग इसके विपरीत संस्कृत के तत्सम शब्दों का तो कम से कम प्रयोग करने की कोशिश करते हैं; परन्तु अंगरेज़ी फारसी, अरबी आदि विदेशी भाषाओं के अप्रचलित शब्दों तक को ठूसने में ही अपनी बहादुरी समझते हैं। एक तीसरा मत यह भी प्रचलित है कि जहाँ तक हो सके संस्कृत या अन्य विदेशी भाषाओं के तत्सम शब्दों का कम से कम प्रयोग किया जाय तद्भव, बोलचाल और देशज शब्दों का ही प्रयोग हो।

उपर्युक्त तीनों तरह के मत मान्य नहीं कहे जा सकते हैं। इसका कारण यह है कि यह युग हिन्दी के विकास का युग है। हिन्दी को राष्ट्रभाषा का रूप देना है। बिहार, संयुक्तप्रान्त आदि हिन्दी भाषा-भाषी प्रान्तों के अतिरिक्त मद्रास, बंगाल, महाराष्ट्र आदि अन्य भाषा-भाषी प्रान्तों में भी इसका प्रचार करना है। अतः इसे संस्कृत के जटिल शब्दों से जकड़कर इसकी सरलता और विकास को रोकना युक्ति-संगत नहीं कहा जा सकता है। फिर भी विदेशी भाषाओं के अप्रचलित शब्दों को ठूसकर इसे ऐसा बना देना कि सर्वसाधारण की समझ में ही न आये हमारी समझ में ठीक नहीं है। सच तो यह है कि हिन्दी के क्षेत्र को विस्तृत करने के लिए, इसे राष्ट्रभाषा का महान् गौरव देने के लिए हमें उचित है कि इसको इस योग्य बना दें कि सर्व-साधारण के समझने में कठिनाई न हो और दूसरे प्रान्त के निवासी भी सुगमता से सीख सकें। इसके लिए यही उचित है कि जहाँ तक सम्भव हो सरल मुहावरेदार, और बोल-चाल की भाषा का ही प्रयोग करना चाहिये। संस्कृत, अँगरेजी, फ़ारसी, अरबी आदि अन्य भाषाओं के उन्हीं शब्दों का व्यवहार करना चाहिये जो अधिक प्रचलित हों, जिन्हें सर्व-साधारण बिना किसी दिक्कत के समझ सकें और जिनके प्रयोग के बिना काम ही न चले। इधर कुछ लोग हिन्दी और उर्दू की समस्या में उलझे हुए हैं। उर्दू के हिमायती उर्दू को हिन्दी से एक पृथक् भाषा कायम करने की फ़िक्र में लगे हैं और उर्दू में अधिकाधिक फारसी और अरबी के तत्सम शब्दों को ठूस कर उसे इस प्रकार जटिल बना रहे हैं कि सर्वसाधारण मुसलमान भी समझने में तंग आ जाते हैं ठीक इसके विपरीत

थोड़े से हिन्दी के लेखक भी हिन्दी से प्रचलित फारसी और अरबी तक के शब्दों को निकालकर उनकी जगह संस्कृत के अव्यावहारिक शब्दों को ठूसकर ही अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करते हैं। परन्तु इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। असल बात तो यह है कि उर्दू हिन्दी से कोई पृथक् भाषा नहीं है। लिपि की पृथकता से उसे पृथक् रूप दे दिया गया है। इसलिए केवल लिपि के कारण उसके व्यावहारिक शब्दों पर हम परदा डाल दें अथवा उर्दू को ही फारसी या अरबी के ऐसे कड़े शब्दों से भर दें कि स्वयं मुसलमानों को भी समझने में कठिनाई उपस्थित हो तो यह राष्ट्र और राष्ट्रभाषा दोनों के लिए हानिकर है। सारांश यह है कि हिन्दी भाषा के विकास के युग पर ध्यान देते हुए इसे सरल, सुबोध और सुपाठ्य बनाने की कोशिश करनी चाहिये। न तो संस्कृत के आडम्बर-पूर्ण शब्दों से इसे भर देना चाहिये और न अरबी, फारसी आदि विदेशी भाषाओं के अप्रचलित शब्दों को ही ठूसकर इसे रूखी और भद्दी बना देना चाहिये। पर हाँ, जिन संस्कृत, फारसी, अंगरेज़ी या अरबी आदि भाषाओं के शब्दों को घुसाये बिना काम ही न चले, जो शब्द सर्वसाधारण की समझ में सुगमता से आ जायँ वैसे शब्द बिना किसी हिचकिचाहट के घुसाये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त भाषा सरल, मुहावरेदार और बोल-चाल के शब्दों में लिखी जानी चाहिये। व्याकरण आदि के नियमों पर भी विशेष ध्यान रहना चाहिये। बस, हिन्दी की इसी शैली के लिखने के पक्ष में अधिकांश लेखक हैं। नवसिखुए लेखकों को तो अवश्य ही इसी शैली का अनुकरण करना उचित है। इस तरह की शैली को हमारे हिन्दी-लेखक व्यावहारिक शैली

कहते हैं। कोई-कोई इसे हिन्दोस्तानी भाषा भी कहते हैं। यही व्यावहारिक हिन्दी या 'हिन्दोस्तानी, भाषा राष्ट्र-भाषा होने जा रही है। संस्कृत के अधिकांश तत्सम शब्द जिस भाषा में प्रयुक्त होते हैं वह बोलचाल की भाषा नहीं है। उसे किसी प्रकार साहित्यिक भाषा कह सकते हैं।

यह तो हुई गद्य की बात। हिन्दी के पद्य की शैली भी आधुनिक काल में कई तरह की प्रचलित है। पद्य-लेखकों की एक श्रेणी का मत है कि हिन्दी-पद्य की शैली वही रहे जिसे व्रजभाषा कहते हैं। अर्थात् देव, बिहारी, मतिराम आदि महाकवियों ने जिस भाषा में कविता की है उसी भाषा में अब भी कविता करना उचित है। एक दूसरा दल कहता है कि उस भाषा का हूबहू व्यवहार करना कठिन है इसलिए उस में खड़ी-बोली की भाषा का सम्मिश्रण भी हो जाय तो कोई हर्ज की बात नहीं है। तीसरे दल का विचार है कि हिन्दी भाषा में पुरानी रूढ़ियों का अनुकरण करना ठीक नहीं। समय के प्रवाह के अनुसार इसमें परिवर्तन होना ज़रूरी है। इसलिए शुद्ध खड़ी बोली में व्याकरण आदि के नियमों का प्रतिपालन करते हुए कविता करनी चाहिये। अब तक तो अधिकांश कवि इसी तीसरे मत को माननेवाले थे परन्तु इसमें क्रान्ति मच गयी है। कुछ नये कवियों ने हिन्दी संसार के कविता-प्रान्त में विप्लव खड़ा कर दिया है। ऐसे क्रान्तिकारी कवियों का कहना है कि तुकबन्दी आदि पिंगल के जटिल नियम से घिरे रहने के कारण हिन्दी के स्वतन्त्र कवि अपने भावों को नष्ट कर देते हैं। इसलिए पिंगल के नियमों का, विशेष कर तुकबन्दी का कोई प्रतिबन्ध रहना ठीक नहीं है। इसके अलावे भावपूर्ण और रहस्य-पूर्ण कविता

लिखनी चाहिये। ऐसे कवियों पर बंगला-भाषा के कवियों की छाया पड़ी है और वे रहस्यवादी या छायावादी कवि कहलाते हैं। कविता का यह युग छायावादी कवियों का युग हो रहा है। ऐसे कवियों की बाढ़ सी आ गयी है। यद्यपि सभी इस छाया-वाद या रहस्यवाद के मर्म को नहीं समझ पाये हैं परन्तु एक-आध दर्जन ऐसे भावुक कवि हैं जो सचमुच में हिन्दी-कविता में युगान्तर पैदा करने में सफलता प्राप्त कर रहे हैं।

द्वितीय परिच्छेद

निबन्ध-रचना सम्बन्धी कुछ नियम

किसी निर्दिष्ट विषय पर कुछ लिखकर अपना मन्तव्य प्रकाशित करने को ही निबन्ध कहते हैं। निबन्ध को लेख, रचना या प्रबन्ध भी कहते हैं। भाषा के अनुसार निबन्ध-रचना दो तरह से हो सकती है। एक गद्य-द्वारा दूसरे पद्य-द्वारा। फिर दोनों तरह के निबन्ध के दो भेद हो सकते हैं। एक अलंकृत रचना दूसरी अनलंकृत या साधारण रचना। अलंकारशास्त्र के नियम के अनुसार भाषा को रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि नाना प्रकार के अलंकारों से विभूषित कर देने से वह अलंकृत रचना कहलायेगी और अपने मनोगत भाव को सीधी-सादी और सरल भाषा द्वारा प्रगट करना अनलंकृत या साधारण रचना कही जायगी। यहाँ पर यह बात ध्यान में रखना आवश्यक है कि नवसिखुए लेखक अलंकृत रचना में विशेष सफलता प्राप्त नहीं कर सकते हैं। अलंकृत रचना में हृदय के भावों का प्रवाह रुक जाता है। इसलिए जो नये लेखक हैं वे प्रायः शब्दाडम्बर या अलंकार के चक्र में पड़कर भावों को नष्ट कर देते हैं जिससे रचना अलंकृत होते हुए भी भावपूर्ण नहीं हो पाती है और बिना भाव के, चाहे भाषा कैसी ही उत्कृष्ट क्यों न हो, निबन्ध

कौड़ी काम का नहीं। केवल बड़े-बड़े लेखक ही, जिनके पास शब्दों का भांडार है, जिनकी लेखन-शैली परिमार्जित हो गयी है और जिन्हें शब्द-ज्ञान और भाषा-ज्ञान के साथ-साथ विषय का पूरा ज्ञान है, अलंकृत रचना कर अपने भावों को सुरक्षित रख सकते हैं, साधारण श्रेणी के लेखकों में, जो अलंकृत रचना के आदी होते हैं, ऐसा प्रायः देखा जाता है कि वे प्रारम्भ में तो बड़े लम्बे-चौड़े शब्दों तथा अलंकृत वाक्यों को लिखकर अपनी योग्यता को भूमिका लिखने तक में ही समाप्त कर देते हैं और आगे जाकर ऐसा पछाड़ खाते हैं कि भावों को सुरक्षित रखना तो दूर रहा, भाषा का भी निर्वाह नहीं कर पाते। इस ढङ्ग के निबन्ध का लिखना नहीं लिखने के बराबर है। अतः नवसिखुए लेखकों को चाहिये कि अथ से इति तक एक ही ढङ्ग की सीधी-सादी भाषा का व्यवहार करें, लम्बे-लम्बे शब्दों और वाक्यों के फेर में उलझकर अपने भाव को नष्ट न करें। हाँ, जब लेख लिखते-लिखते वे पूरे अभ्यस्त हो जायँ, उनके पास शब्द का काफ़ी भांडार हो जाय, वे विषय की पूरी जानकारी प्राप्त कर लें, तथा उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि उच्चकोटि के अलंकारों से युक्त भाषा लिखने लायक उनके मस्तिष्क की कल्पनाशक्ति विकसित हो जाय तो आप से आप वे अलंकृत भाषा में रचना कर सकेंगे और वैसी दशा में भावों के प्रवाह में अड़चन उपस्थित होने की भी अधिक सम्भावना नहीं रहेगी। इसके अतिरिक्त निबन्ध लिखने के पहले निम्नलिखित बातों पर भी विशेष रूप से ध्यान देना उचित है।

(१) व्याकरण के नियमों के अनुसार लेख के सभी वर्ण, शब्द और वाक्य शुद्ध रहें। व्याकरण के नियमानुसार वाक्य

शुद्ध न रहने से, चाहे भाषा कैसी ही अलंकृत क्यों न रहे, लेख महत्त्वपूर्ण नहीं हो सकता।

(२) लेख की भाषा अथ से इति तक एक ही तरह की रहे। अत्यन्त क्लिष्ट भाषा में, जिसमें लम्बे-लम्बे सामासिक पदों का व्यवहार किया जाय, लेख लिखने से भावों का निर्वाह कठिन हो जाता है। हाँ, अगर सम्भव हो तो उचित स्थान पर कहावतों या लोकोक्तियों और मुहाविरों का प्रयोग अवश्य करना चाहिये। ऐसा करने से भाषा ज़ोरदार और अधिक प्रभावशाली होती है।

(३) विराम के चिह्नों पर भी विशेष ध्यान रखना चाहिए।

(४) लेख इस ढङ्ग और सरलता के साथ लिखना चाहिए पढ़नेवालों को समझने में कठिनाई न हो।

(५) जहाँ तक निर्वाह हो सके, संस्कृत, अँगरेज़ी, फ़ारसी आदि अन्य भाषाओं के अप्रचलित या अव्यावहारिक तत्सम शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिये।

(६) लेख में अश्लील तथा ग्रामीण शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिये। मुहाविरे का प्रयोग करते समय यह ख्याल रखना चाहिये कि उसका अपप्रयोग न हो।

(७) लेख में निरर्थक शब्द नहीं होना चाहिये। उतने ही शब्द व्यवहृत होने चाहियें जितने से लिखने का मन्तव्य पूरा हो जाय। न तो व्यर्थ के अधिक शब्द ही रहें और न निरर्थक वाक्य का ही प्रयोग हो।

(८) प्रसंग को छोड़कर इधर-उधर के विषयों पर नहीं लिखना चाहिये। इसके लिए पूर्वापर पर ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है। लेख पुनरुक्ति-दोष से रहित होना चाहिये।

कौड़ी काम का नहीं। केवल बड़े-बड़े लेखक ही, जिनके पास शब्दों का भांडार है, जिनकी लेखन-शैली परिमार्जित हो गयी है और जिन्हें शब्द-ज्ञान और भाषा-ज्ञान के साथ-साथ विषय का पूरा ज्ञान है, अलंकृत रचना कर अपने भावों को सुरक्षित रख सकते हैं, साधारण श्रेणी के लेखकों में, जो अलंकृत रचना के आदी होते हैं, ऐसा प्रायः देखा जाता है कि प्रारम्भ में तो बड़े लम्बे-चौड़े शब्दों तथा अलंकृत वाक्यों को लिखकर अपनी योग्यता को भूमिका लिखने तक में ही समाप्त कर देते हैं और आगे जाकर ऐसा पछाड़ खाते हैं कि भावों को सुरक्षित रखना तो दूर रहा, भाषा का भी निर्वाह नहीं कर पाते इस ढङ्ग के निबन्ध का लिखना नहीं लिखने के बराबर है अतः नवसिखुए लेखकों को चाहिये कि अथ से इति तक एक ही ढङ्ग की सीधी-सादी भाषा का व्यवहार करें, लम्बे-लम्बे शब्दों और वाक्यों के फेर में उलझकर अपने भाव को नष्ट न करें। हाँ, जब लेख लिखते-लिखते वे पूरे अभ्यस्त हो जायँ, उनके पास शब्द का काफ़ी भांडार हो जाय, वे विषय की पूरी जानकारी प्राप्त कर लें, तथा उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि उच्चकोटि के अलंकारों से युक्त भाषा लिखने लायक उनके मस्तिष्क की कल्पनाशक्ति विकसित हो जाय तो आप से आप वे अलंकृत भाषा में रचना कर सकेंगे और वैसी दशा में भावों के प्रवाह में अड़चन उपस्थित होने की भी अधिक सम्भावना नहीं रहेगी। इसके अतिरिक्त निबन्ध लिखने के पहले निम्नलिखित बातों पर भी विशेष रूप से ध्यान देना उचित है।

(१) व्याकरण के नियमों के अनुसार लेख के सभी वर्ण, शब्द और वाक्य शुद्ध रहें। व्याकरण के नियमानुसार वाक्य

शुद्ध न रहने से, चाहे भाषा कैसी ही अलंकृत क्यों न रहे, लेख महत्त्वपूर्ण नहीं हो सकता।

(२) लेख की भाषा अथ से इति तक एक ही तरह की हो। अत्यन्त क्लिष्ट भाषा में, जिसमें लम्बे-लम्बे सामासिक पदों का व्यवहार किया जाय, लेख लिखने से भावों का निर्वाह कठिन हो जाता है। हाँ, अगर सम्भव हो तो उचित स्थान पर कहावतों या लोकोक्तियों और मुहाविरों का प्रयोग अवश्य करना चाहिये। ऐसा करने से भाषा ज़ोरदार और अधिक प्रभावशाली होती है।

(३) विराम के चिह्नों पर भी विशेष ध्यान रखना चाहिए।

(४) लेख इस ढङ्ग और सरलता के साथ लिखना चाहिए कि पढ़नेवालों को समझने में कठिनाई न हो।

(५) जहाँ तक निर्वाह हो सके, संस्कृत, अँगरेज़ी, फ़ारसी आदि अन्य भाषाओं के अप्रचलित या अव्यावहारिक तत्सम शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिये।

(६) लेख में अश्लील तथा ग्रामीण शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिये। मुहाविरे का प्रयोग करते समय यह ख्याल रखना चाहिये कि उसका अपप्रयोग न हो।

(७) लेख में निरर्थक शब्द नहीं होना चाहिये। उतने ही शब्द व्यवहृत होने चाहियें जितने से लिखने का मन्तव्य पूरा हो जाय। न तो व्यर्थ के अधिक शब्द ही रहें और न निरर्थक वाक्य का ही प्रयोग हो।

(८) प्रसंग को छोड़कर इधर-उधर के विषयों पर नहीं लिखना चाहिये। इसके लिए पूर्वापरि पर ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है। लेख पुनरुक्ति-दोष से रहित होना चाहिये।

(९) विषाद, हर्ष, विस्मय, शोक आदि अर्थवाले पदों को दुहराने में पुनरुक्ति दोष नहीं होता है।

(१०) एक ही भाव को बार-बार दुहराना भी ठीक नहीं है। भाव को प्रकाशित करने में उपयुक्त पदों का व्यवहार करना उचित है।

(११) जहाँ तक सम्भव हो, लेख संक्षेप में ही लिखना चाहिये। लेख जितना ही कसा हुआ रहेगा उतना ही उच्चकोटि का होगा। अधिक विस्तार कर देने से अशुद्धि भी अधिक होती है। प्रायः देखा जाता है कि बहुत से विद्यार्थी लम्बी-चौड़ी भूमिका बाँध जिस विषय पर लेख लिखना होता है उस विषय पर एक लम्बी कहानी ही लिखकर लेख को समाप्त कर डालते हैं। ऐसे लिखनेवालों को यह सोच लेना चाहिये कि लेख लिखने का मतलब कहानी लिखने से पूरा नहीं हो सकता है। जिस विषय पर लिखना हो पहले उसे स्पष्ट करने की कोशिश करनी चाहिये। हाँ, जब किसी विषय को अधिक स्पष्ट करने के अभिप्राय से उसे कहानी के द्वारा प्रमाणित और पुष्ट करने की आवश्यकता पड़ जाय तो कहानी लिख सकते हैं पर कहानी छोटी रहे और इस ढंग से लेख के अन्दर घुसायी जाय कि लेख का सिलसिला न बिगड़ने पावे।

(१२) वर्णनीय विषय को खूब सोच-विचारकर लिखना चाहिये। यदि विषय कठिन हो तो पहले उसका अर्थ स्पष्टकर लेख शुरू करना चाहिये। यदि आवश्यकता हो तो प्रारम्भ में प्रस्तावना (Introduction) और अंत में उपसंहार (Conclusion) लिख देना उचित है।

(१३) वर्णनीय विषय को विभागों में बाँटकर एक अनुच्छेद

की बातें दूसरे अनुच्छेद में नहीं जाने देना चाहिये। हाँ, अगर प्रस्ताव गम्भीर और बड़ा हो जाय तो एक भाव को कई अनुच्छेदों (Paragraph) में भी विभाजित कर सकते हैं।

उत्तम लेख लिखने के साधन

१ भाव-संग्रह—जिस प्रकार लेख के बाह्य सौन्दर्य्य की वृद्धि के लिए रचना सम्बन्धी नियमों को सीखने की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार लेख के भीतरी सौन्दर्य्य को बढ़ाने के लिए उत्तम-उत्तम भावों को संग्रह करना (Collection of good thoughts) भी आवश्यक है। भाव भाषा का भीतरी सौन्दर्य्य है और लेख की जान है। भाव-शून्य लेख कैसी ही सुन्दर और मधुर भाषा में क्यों न लिखा गया हो, व्यर्थ होता है, इसलिए नये लेखकों को चाहिए कि लेख में अच्छे-अच्छे भावों का समावेश कर रचना को पुष्ट बनावें।

२ अध्ययन—नये-नये भावों का संग्रह करने के लिए, बड़े-बड़े लेखकों के विचारों को जानने के लिए, भिन्न-भिन्न तरह की भाषा की शैलियों से परिचित होकर अपने विचारानुसार अपनी कोई विशेष और उत्तम शैली चुन लेने के लिए, नये-नये विषयों को सीखने के लिए तथा भाषा सम्बन्धी अनेक प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए भिन्न-भिन्न विषयों की पुस्तकों, बड़े-बड़े लेखकों के लेखों और उच्चकोटि की पत्र पत्रिकाओं को पढ़ते रहना चाहिये और जो नये भाव, शब्द, मुहावरे, कहावतों आदि का नया प्रयोग देखने में आवे उन्हें सीखकर अपने लेख में समावेश करने का प्रयत्न करना चाहिये। इससे शब्दों का भंडार पूर्ण होता है, भावों का संग्रह होता और लेख लिखने में बड़ी सहायता मिलती है।

३ अभ्यास—नये लेखकों को प्रतिदिन कुछ न कुछ लिखते रहने का अभ्यास करते रहना चाहिये। जब लिखना पूरा हो जाय तो फिर उसे पढ़कर यह देखना चाहिये कि कहाँ व्याकरण की अशुद्धियाँ रह गयी हैं, कहाँ भाव बिगड़ गया है और कहाँ रचना भद्दी हो गयी है। अगर हो सके तो अपने से अधिक जाननेवाले व्यक्ति से उसे शुद्ध करा लेना चाहिये। इस प्रकार बराबर लिखने का अभ्यास करते रहने से साधारण लेखक भी अच्छे लेखक के पद पर पहुँच सकते हैं।

४ चिन्ता—जिस किसी विषय पर लेख लिखना हो पहले मन में उस विषय पर खूब विचार करना चाहिये। विचार करते समय उस विषय के सम्बन्ध में जो-जो भाव मन में उठें उन्हें एक कागज़ के टुकड़े पर लिख लेना चाहिये। फिर रचना के सुन्दर बनाने के लिए उन भावों को सुन्दर शब्दों द्वारा विस्तृत कर लेख का रूप देने का प्रयत्न करना चाहिये।

प्रबंध-भेद

यों तो सभी विषयों के लेख कई खंडों में बाँटे जा सकते हैं परन्तु मुख्यतः इसके पाँच भेद माने गये हैं।

(१) वर्णनात्मक लेख—Descriptive essays.
(२) विवरणात्मक लेख—Narrative essays.
(३) विचारात्मक लेख—Reflective essays.
(४) विश्लेषणात्मक लेख—Expository essays.
(५) विवादात्मक लेख—Argumentative essays.

तृतीय परिच्छेद

वर्णनात्मक लेख (Descriptive essays)

आँख से देखे हुए या कान से सुने हुए किसी प्राणि या अप्राणिवाचक पदार्थ के विषय में जो लेख लिखा जाय उसे वर्णनात्मक लेख कहते हैं। इस खंड के लेख कई भागों में विभक्त हो सकते हैं; जैसे—(१) जन्तु, (२) उद्भिद, (३) अचेतन पदार्थ (४) स्थान विशेष, (५) पर्वादि। विद्यार्थियों की सुविधा के लिए प्रत्येक भाग के एक दो लेख विषय-विभाग (Points) का दिग्दर्शन कराते हुए यहाँ दिये जाते हैं।

(क) जन्तु विषयक लेख

विषय-विभाग (Points)—(१) श्रेणी और जाति, (२) आकार-प्रकार, रंग और जीवनकाल, (३) वासस्थान, (४) स्वभाव, (५) खुराक, (६) उपकार या अपकार और (७) उपसंहार।

प्रायः सभी जन्तु विषयक लेख के लिए ऊपर लिखे अनुसार विषय-विभाग किये जा सकते हैं।

(१) गाय (Cow)

श्रेणी और जाति—पालतू और चौपाया जानवरों में से गाय प्रधान है। यह मेरुदंडी, स्तनपायी और पागुर करनेवाले की

श्रेणी में है। कहीं-कहीं यह जंगलों में भी पायी जाती है। जिसे कपिला, नील गाय आदि भिन्न-भिन्न नामों से पुकारते हैं।

आकार-प्रकार रंगादि—आकार की दृष्टि से गाय कई प्रकार की होती है। कोई छोटी, कोई मझोली और कोई बड़ी। भारतवर्ष में ही भिन्न-भिन्न प्रान्तों की गायें भिन्न-भिन्न आकृति की होती हैं। गुजरात और युक्तप्रान्त की गायें अन्य प्रान्तों की गायों से अधिक ऊँची और हृष्टपुष्ट होती हैं। पहाड़ी मुल्कों की गायें यद्यपि देखने में छोटी होती हैं तथापि बड़ी मजबूत होती हैं। गाय साधारणतः साढ़ेचार फीट तक ऊँची और पाँच फीट तक लम्बी होती है। शरीर गठीला और सुडौल होता है। मुख लम्बा, नथुने चौड़े और सिर पर दो सींग होते हैं। सारा शरीर घने रोओं से ढका रहता है। इसके मस्तक के दोनों पार्श्व में दो लम्बे-लम्बे कान और पीछे की ओर एक लम्बी पूँछ होती है जिसका ऊपरी भाग मोटा और नीचे क्रमशः पतला होता है और छोर पर लम्बे बालों का गुच्छा रहता है। इन्हीं कान और पूँछ को संचालित कर यह मच्छड़ों से अपनी रक्षा कर पाती है। इसके एक ही जबड़े में दाँत होते हैं। गर्दन के नीचे चमड़े की चौड़ी चादर लटकती रहती है। इसकी चारों टाँगें बड़ी मजबूत होती हैं और प्रत्येक में फटा हुआ खुर होता है। गाय काली, गोली, उजली, कैली चितकबरी आदि कई रंग की होती है। इसका जीवन-काल प्रायः १९, २० वर्ष माना गया है। यह ९ मास में बच्चा दिया करती है। साल में प्रायः एक ही बार बच्चा देती है।

वासस्थान—गाय पृथ्वी के प्रायः सभी भागों में पायी जाती है। तिब्बत तथा हिमालय के प्रान्तों में पायी जानेवाली गायें चमरी गाय के नाम से प्रसिद्ध हैं।

स्वभाव—गाय बड़े सीधे स्वभाव की होती है और सहज में ही पोस मानती है। अपने पालनेवालों से इस प्रकार हिलमिल जाती है कि उनके नहीं रहने से चैन से नहीं रहती और हुँकार भरती रहती है। यह बड़ी सहनशील होती है। किसी को जल्दी चोट नहीं पहुँचाती। इसका हृदय इतना पवित्र होता है कि हिन्दू इसे माता कहते हैं।

खुराक—गाय घास, नारा, भूसी, चोकर, भात का धोवन और माड़ आदि पदार्थों को खाकर अपना जीवन बिताती है।

उपकार—गाय के उपकार के विषय में जितना लिखा जाय सब थोड़ा है; क्योंकि संसार में ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो इसका ऋणी न हो। आरम्भ ही से लीजिये। इसका दूध बालकों की जीवन-रक्षा का एक मात्र उपाय है। इसका दूध अत्यन्त पौष्टिक और स्वादिष्ट होता है। रोगियों और बूढ़ों के लिए लाभप्रद है। दूध से छेना, मक्खन, घी, दही, तक्कर तथा नाना प्रकार की मिठाइयाँ बनायी जाती हैं। दूध से बनी हुई सभी चीजें स्वास्थ्य के लिए बड़ी लाभदायक सिद्ध हुई हैं। इसका घी विशेषकर पुराना घी अनेक औषधियों में काम आता है। गाय के बच्चों को बढ़ने पर लोग हल में जोतते हैं। भारतवर्ष की कृषि तो सर्वथा गो-जाति पर ही अवलम्बित है। इंगलैण्ड आदि मुल्कों में भले ही घोड़ों तथा कलों के द्वारा खेती का काम हो सकता है परन्तु भारतवर्ष जैसे कृषि-प्रधान देश के लिए तो गो-जाति ही खेत जोतने का एकमात्र साधन है। अतएव यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि जन्म से मृत्यु पर्यन्त गाय हमारे लाभ की चीज़ है। इसका गोबर का उत्तम खाद बनता है। हमारे देश में गोबर का गोइँठा बनाकर उसे

जलावन के काम में लाते हैं। हिन्दू गोबर को पवित्र मानते और पूजादि शुभकार्य के अवसर पर इससे भूमि लीपते हैं। गाय मरकर भी मनुष्य जाति का उपकार ही करती है। इसकी हड्डी खेती के खाद में या बटन, छूरी के बेंट आदि बनाने के काम आती है। चमड़े के जूते बनते हैं और पूँछ के बाल की रस्सी, चँवर आदि।

उपसंहार—गाय से मनुष्यजाति के जितने उपकार होते हैं उन्हें देखते हुए अगर हिन्दू इसे देवता समझते हैं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? परन्तु खेद है कि हमारे मुसलमान भाई ऐसे उपकारी जीव की हत्या करने में ही प्रसन्न रहते हैं। दुःख है कि वे यह नहीं समझते कि गो-वंश का ह्रास होने से दूध-घी का मिलना दुर्लभ हो रहा है और खेती का काम नष्ट होता जा रहा है जिससे हिन्दू मुसलमान दोनों को ही हानि है।

(२) मछली (Fish)

श्रेणी और जाति—मछली अस्थिमय, अंडज और जलचारी प्राणी है, सभी मछलियों को रीढ़ नहीं होती। रेहू, बुआरी, कतली आदि बड़ी-बड़ी मछलियाँ मेरुदंडी प्राणी के अन्तर्गत आ सकती हैं परन्तु चेंगा, पोठिया आदि छोटी-छोटी मछलियों के रीढ़ नहीं होती है। प्राणि-विद्या-विशारदों का कथन है कि मछली प्रधानतः आठ श्रेणियों में विभक्त की जा सकती है। इस प्रत्येक श्रेणी में और भी बहुत सी उपश्रेणियाँ हो सकती हैं। हमारे देश में कतली, रेहू, सिंही, माँगुर, बुआरी, सकुल, पलिस, गैंची आदि अनेक तरह की मछलियाँ पायी जाती हैं। समुद्र के उपकूल भाग में न्यूनाधिक साढ़े तीन हज़ार तरह की मछलियाँ पायी गयी हैं।

आकार-प्रकार रंगादि—आकार की दृष्टि से मछली असंख्य प्रकार की होती है। यह एक इंच से लेकर १०-१२, फीट तक लम्बी हुआ करती है। सामुद्रिक मछलियाँ इतनी लम्बी-चौड़ी होती हैं कि आदमी तक को अपने ऊपर बैठा सकती हैं। सभी छोटी-बड़ी मछलियों के मस्तक, पूँछ और तैरने के लिए डैने हुआ करते हैं। किसी-किसी जाति की मछली को आँखें नहीं होती हैं। कुछ मछलियों के अंग चौंगेदार चोइयों से घने रहते हैं। मछली उजली, काली, लाल आदि विविध रंगों की होती है। किसी-किसी सामुद्रिक मछली के अंग से एक प्रकार की चमक प्रकट होती है। सामुद्रिक मछलियाँ बड़ी बलवती हुआ करती हैं। इसकी आयु बारह से बीस वर्ष तक मानी गयी है।

प्राप्तिस्थान और खुराक—मछली का वासस्थान तो जल ही समझिए। यह तालाब, झील, नदी और समुद्र में पायी जाती है। इसकी खुराक सेमार, छोटी-छोटी मछलियाँ, कीड़ियाँ तथा अन्य गन्दी चीज़ें हैं। बड़ी-बड़ी मछलियाँ तो मुर्दों को भी नोच-खसोटकर खा जाती हैं।

स्वभाव—मछली बड़ी ही चंचल प्रकृति की होती है। कहते हैं इसे अपनी सन्तान से बहुत कम प्रेम होता है। यह अंडा देती है।

उपकार—मछली भी मनुष्यों के खाद्य-पदार्थ में गिनी गयी है। इसके खून और मांस से अनेकों की तृप्ति होती है। इसकी चर्बी से बना हुआ तेल दम्मा आदि रोग से ग्रसित रोगी के लिए लाभदायक होता है, भारतवर्ष में अहिंसा-धर्म्म के मानने । बंगाल में तो मछली प्रधान खाद्य

है। मछली को लोग शौक से पालते भी हैं। लोगों का कहना है कि यह जल को स्वच्छ बनाती है। कुछ ऐसी भी मछलियाँ हैं जिनसे उपकार के बदले अपकार ही होता है। सँकुची आदि विषैली मछलियों की पूँछ से आहत हुए जीवों के प्राण भी नहीं बच पाते। इसके अंडों का चारा बड़ा स्वादिष्ट होता है।

उपसंहार—मछलियाँ आपस में हिलमिल कर रहती हैं। पोखरों तथा नदियों में हजारों की संख्या में दल बाँधकर अठखेलियाँ करती हुई दिखाई देती हैं। यात्रा के अवसर पर मछली को देखना हिन्दुओं के घर शुभ माना गया है। बहुत से हिन्दू कृत्रिम मछलियों को अपने-अपने महलों के ऊपर लटका देते हैं। इसकी आखें बड़ी ही भली मालूम पड़ती हैं।

(ख) उद्भिद् विषयक लेख

विषय-विभाग—(१) जाति और श्रेणी, (२) आकार प्रकार वर्ण आदि, (३) विशेष वर्णन, (४) प्राप्ति-स्थान, (५) उपकार और (६) उपसंहार।

(१) कटहल

जाति और श्रेणी—कटहल उद्भिद् के बहुवार्षिक वृक्ष-श्रेणी में है। यह भारतवर्ष के रसीले फलों में मुख्य है।

आकार प्रकार वर्ण आदि—तैयार हो जाने पर इसका वृक्ष प्रायः ३०-४० हाथ ऊँचा होता है। इसके धड़ का व्यास सात आठ हाथ होता है। शाखाओं के फैलाव से इसका वृक्ष बड़ा ही घना और छायादार होता है। कटहल के धड़ का रङ्ग धूसर रङ्ग का होता है। इसकी जड़ उतनी मजबूत नहीं होती। यही कारण

है कि इसके वृक्ष हवा के झोंके से जल्दी गिर पड़ते हैं। कटहल की पत्तियाँ चार-पाँच इंच लम्बी और उससे कम चौड़ी एक तरफ बहुत चिकनी तथा दूसरी ओर खुरदरी होती हैं। इसकी एक पत्ती जिस स्थान से निकलती है दूसरी उससे कुछ ऊपर, दूसरी ओर निकलती है। इसीलिए कटहल को 'विपर्यस्त पत्रशाली' उद्भिद् कहते हैं। इसकी पत्तियाँ बड़ की पत्तियों से प्रायः मिलती जुलती हैं। कच्ची पत्तियाँ हरे रङ्ग की और पक्की पीले रङ्ग की रहती हैं।

लोगों का कहना है कि कटहल के फूल नहीं होते। इसी हेतु यह 'अपुष्प फलद' भी कहलाता है। लेकिन यह अनुमान गलत है। इसके फूल होते हैं जो इसके छिलके से ढके रहने के कारण दिखाई नहीं पड़ते हैं। छिलके के भीतर ही भीतर ये फूल बढ़ते हैं और फल के रूप में परिणत होने पर ही हम लोग उन्हें देख पाते हैं।

कटहल का फल सब फलों से बड़ा होता है। आकार-प्रकार की दृष्टि से कटहल पृथ्वी पर अद्वितीय फल है। एक कटहल के फल के भीतर अनेक छोटे-छोटे फल रहते हैं जिन्हें 'कोआ' कहते हैं। फल के मध्य भाग में रीढ़ की नाईं एक मूसल रहता है। जिसमें फल के सब तन्तु जुटे रहते हैं। कोआ गुदादार होता है। जिसके भीतर कटहल का बीज रहता है।

विशेष वर्णन—जब कटहल का पेड़ फूलने-फलने लायक होता है तब जाड़े के ऋतु में इसमें फूल लगना शुरु होता है। इन फूलों में साधारण सुगन्ध रहती है। जाड़ा समाप्त होते न होते फल लगना भी प्रारम्भ हो जाता है। पहली अवस्था में फल ढं... होता है जो पुष्प-दल से ढका रहता है। कुछ बढ़ने प...

यह कटहल का 'लेंढ़ा' कहलाता है। शुरू में वृक्ष इन लेंढ़ों से भरा रहता है। पर सब लेंढ़ें नहीं ठहरते। अधिकांश गिर पड़ते हैं। प्रायः तीन-चार महीने में फल बढ़कर पुष्ट होता है और ज्येष्ठ से पकने लग जाता है। किसी-किसी कटहल के वृक्ष में पृथ्वी के नीचे सिरे में भी फल लगते हैं; इसीलिए कटहल को लोग 'मूल फलद' भी कहते हैं। फल का वजन एक सेर से दो मन तक का होता है।

प्राप्ति-स्थान—यों तो कटहल भारतवर्ष के प्रायः सभी भागों में पाया जाता है परन्तु बङ्गाल और विहार में सब से अधिक होता है। यह भारत के बाहर मलाया द्वीप-पुंजों, लङ्का और वर्मा में भी पाया जाता है।

उपकार—कटहल का कोआ बड़ा ही रसीला और मीठा होता है। लोग इसे बड़े चाव से खाते हैं। लेकिन पचने में बड़ा भारी होता है अतः हानि पहुँचाता है। इसके कच्चे फल और मूसल की तरकारी बनती है। सस्ते मूल्य पर मिलने के कारण गरीब लोग इसे अधिक खाते हैं। कटहल की लकड़ी से बहुमूल्य चीजें बनायी जाती हैं।

उपसंहार—कटहल में ऐसी बहुत सी विशेषताएँ हैं जो सब फलों में नहीं पायी जाती हैं। एक तो यह कि इसका फल पृथ्वी पर के सभी फलों से आकृति में बड़ा होता है, दूसरे प्रायः सभी फल शाखा के अग्र भाग में फलते हैं पर कटहल के फल वृक्ष के सभी अंगों में लगते हैं। कहा जाता है कि इसके कोए पर पान की पिरकी पड़ने से वह बहुत फूल जाता है; इसलिए कटहल खाकर पान नहीं खाना चाहिये। घी के साथ मिलाकर कोए खाने से वह जल्दी पचता है।

(ज) अचेतन पदार्थ विषयक लेख

विषय-विभाग—(१) साधारण वर्णन, (२) आकृति, वर्ण आदि, (३) पूर्व अवस्था (बनावटी रहने से आविष्कार का इतिहास), (४) लाभ, हानि और (५) उपसंहार।

(१) लोहा (Iron)

साधारण वर्णन—लोहा खनिज धातु विशेष एक अमिश्रित और ठोस पदार्थ है। मनुष्य जाति के लिए लोहा सब धातुओं की अपेक्षा अधिक आवश्यक धातु है, यह जल की अपेक्षा प्रायः आठगुना अधिक भारी है।

आकृति-वर्ण आदि—लोहा बहुत ही कठिन धातु है। यह खाने में काले रङ्ग का होता है, जब लोहा खुले स्थान या जल में रहता है तो इसमें सहज में ही मोरचा लग जाता है। विशुद्ध लोहा सब जगह नहीं पाया जाता है। रासायनिक प्रयोगों के द्वारा जब यह विशुद्ध किया जाता है तब इससे बहुत सी चीज़ें बनायी जाती हैं। विशुद्ध लोहा उजला होता है। लोहा अग्नि में तपाने से चमकने लगता है। इसे गलाकर तरल पदार्थ में परिणत करने के लिए पन्द्रह सौ डिग्री से भी अधिक ताप की आवश्यकता पड़ती है। लोहा चुम्बक के द्वारा आकृष्ट होता है। विद्युत् अथवा चुम्बक के सहयोग से इसमें क्षणिक चुम्बकत्व आ जाता है। लोहा जल में बह नहीं सकता।

लोहे की पहली अवस्था—लोहा संसार के प्रायः सभी भागों में पाया जाता है। विशेष कर भारतवर्ष, इङ्गलैण्ड, स्वीडेन, जर्मनी, हालैण्ड स्पेन, यूरल पहाड़, संयुक्त राज्य अमेरिका आदि ... खान बहुतायत से पायी जाती है।

यह कटहल का 'लेंढ़ा' कहलाता है। शुरू में वृक्ष इन लेंढ़ों से भरा रहता है। पर सब लेंढ़ें नहीं ठहरते। अधिकांश गिर पड़ते हैं। प्रायः तीन-चार महीने में फल बढ़कर पुष्ट होता है और ज्येष्ठ से पकने लग जाता है। किसी-किसी कटहल के वृक्ष में पृथ्वी के नीचे सिरे में भी फल लगते हैं; इसीलिए कटहल को लोग 'मूल फलद' भी कहते हैं। फल का वजन एक सेर से दो मन तक का होता है।

प्राप्ति-स्थान—यों तो कटहल भारतवर्ष के प्रायः सभी भागों में पाया जाता है परन्तु बङ्गाल और बिहार में सब से अधिक होता है। यह भारत के बाहर मलाया द्वीप-पुंजों, लङ्का और बर्मा में भी पाया जाता है।

उपकार—कटहल का कोआ बड़ा ही रसीला और मीठा होता है। लोग इसे बड़े चाव से खाते हैं। लेकिन पचने में बड़ा भारी होता है अतः हानि पहुँचाता है। इसके कच्चे फल और मूसल की तरकारी बनती है। सस्ते मूल्य पर मिलने के कारण गरीब लोग इसे अधिक खाते हैं। कटहल की लकड़ी से बहुमूल्य चीजें बनायी जाती हैं।

उपसंहार—कटहल में ऐसी बहुत सी विशेषताएँ हैं जो सब फलों में नहीं पायी जाती हैं। एक तो यह कि इसका फल पृथ्वी पर के सभी फलों से आकृति में बड़ा होता है, दूसरे प्रायः सभी फल शाखा के अग्र भाग में फलते हैं पर कटहल के फल वृक्ष के सभी अंगों में लगते हैं। कहा जाता है कि इसके कोए पर पान की पिरकी पड़ने से वह बहुत फूल जाता है; इसलिए कटहल खाकर पान नहीं खाना चाहिये। घी के साथ मिलाकर कोए खाने से वह जल्दी पचता है।

(ज) अचेतन पदार्थ विषयक लेख

विषय-विभाग—(१) साधारण वर्णन, (२) आकृति, वर्ण इत्यादि, (३) पूर्व अवस्था (बनावटी रहने से आविष्कार का इतिहास), (४) लाभ, हानि और (५) उपसंहार।

(१) लोहा (Iron)

साधारण वर्णन—लोहा खनिज धातु विशेष एक अमिश्रित और ठोस पदार्थ है। मनुष्य जाति के लिए लोहा सब धातुओं की अपेक्षा अधिक आवश्यक धातु है, यह जल की अपेक्षा प्रायः आठगुना अधिक भारी है।

आकृति-वर्ण आदि—लोहा बहुत ही कठिन धातु है। यह देखने में काले रङ्ग का होता है, जब लोहा खुले स्थान या जल में रहता है तो इसमें सहज में ही मोरचा लग जाता है। विशुद्ध लोहा सब जगह नहीं पाया जाता है। रासायनिक प्रयोगों के द्वारा जब यह विशुद्ध किया जाता है तब इससे बहुत सी चीज़ें बनायी जाती हैं। विशुद्ध लोहा उजला होता है। लोहा अग्नि में तपाने से चमकने लगता है। इसे गलाकर तरल पदार्थ में परिणत करने के लिए पन्द्रह सौ डिग्री से भी अधिक ताप की आवश्यकता पड़ती है। लोहा चुम्बक के द्वारा आकृष्ट होता है। विद्युत् अथवा चुम्बक के सहयोग से इसमें क्षणिक चुम्बकत्व आ जाता है। लोहा जल में बह नहीं सकता।

लोहे की पहली अवस्था—लोहा संसार के प्रायः सभी भागों में पाया जाता है। विशेष कर भारतवर्ष, इङ्गलैण्ड, स्वीडेन, जर्मनी, हालैण्ड, स्पेन, यूरल पहाड़, संयुक्त राज्य अमेरिका आदि स्थानों में लोहे की खान बहुतायत से पायी जाती है

प्राकृतिक अवस्था में विशुद्ध लोहा नहीं पाया जाता। इसके साथ ताँबा, गंधक आदि पदार्थ मिले रहते हैं। इस तरह के लोहे को अंगरेज़ी में पिग आयरन (Pig Iron) कहते हैं।

उपयोगी बनाने के उपाय—खान में गंधक आदि मिश्रित लोहा मिलता है। इसे व्यवहारोपयोगी बनाने के लिए अनेकों तरह के उपायों का अवलम्बन करना पड़ता है। अनेक प्रकार के रासायनिक प्रयोगों के द्वारा इसमें मिले हुए गंधकादि धातुओं को दूर कर जब इसे विशुद्ध बनाया जाता है तब यह हमारे काम की चीज़ होती है। विशुद्ध लोहा तीन भागों में विभक्त किया गया है। पीटा हुआ लोहा (Wrought Iron), गलाया हुआ लोहा (Cast Iron) और इस्पात (Steel Iron)। रासायनिक प्रयोगों के ही द्वारा लोहे को इन तीन भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में परिवर्तित कर सकते हैं। पीटे हुए लोहे में अग्नि का उत्ताप पहुँचाने से वह कोमल हो जाता है और वैसी अवस्था में उससे नाना प्रकार की चीजें बन सकती हैं। गले हुए लोहे में कार्बन का अंश सब से अधिक और पीटे हुए लोहे में सबसे कम रहता है। कार्बन का अंश निकालकर इस्पात बनाया जाता है। इस्पात अन्य लोहों से कड़ा और मजबूत होता है।

लाभ—यद्यपि लोहा अन्य धातुओं की अपेक्षा कम मूल्यवान धातु है तथापि सबसे अधिक उपयोगी और लाभदायक है। जिस देश में लोहे का जितना ही अधिक उपयोग किया जाता है वह देश वर्तमान समय में उतना ही अधिक सभ्य गिना जाता है। इसलिए लोहा वर्तमान सभ्यता का एक चिह्न-स्वरूप है। अति प्राचीन काल में, जिसे इतिहास में प्रस्तरयुग कहा गया है, दुनिया के लोग लोहे का व्यवहार नहीं जानते थे और

पत्थरों के ही अस्त्र-शस्त्र तथा खेती के औजार आदि बनते थे। लेकिन ज्यों ज्यों सभ्यता का विकास हुआ त्यों त्यों लोगों ने लोहे का व्यवहार करना सीखा और लोहे के ही अस्त्र, शस्त्र, औजार आदि बनाने लगे। आधुनिक काल में तो लोहे का व्यवहार इतना बढ़ गया है कि बिना इसके हमारा एक काम भी चलने को नहीं। लोहे के ही बने औजार द्वारा हमारी खेती होती है। लड़ाई में लोहे के ही बने अस्त्र-शस्त्र उपयोग में लाये जाते हैं। रेल, जहाज आदि लोहे के ही बनते हैं। लोहा घरों में लगाया जाता है। कहाँ तक गिनाया जाय, खाने, पीने, बैठने, उठने आदि की सभी चीज़ों की सामग्री बनाने में लोहे की ही आवश्यकता पड़ती है। इनके अतिरिक्त छड़ी, छूरी, कैंची, बक्स, सन्दूक आदि हजारों तरह की संसारोपयोगी चीज़ें इससे बनायी जाती हैं। इस बीसवीं सदी के वैज्ञानिक युग में तो लोहे ने संसार में एक प्रकार की क्रान्ति मचा दी है। दुनिया की औद्योगिक क्रान्ति में लोहे का सब से अधिक भाग है। विश्व का सारा व्यापार इसी पर अवलम्बित है क्योंकि आधुनिक काल में कल-पुरजे, यन्त्र, मशीनगन आदि जितनी नयी-नयी चीजों का आविष्कार हुआ है वे सभी लोहे की ही बनायी जाती हैं।

हानि—जहाँ लोहे से संसार का महान् उपकार हो रहा है वहाँ इससे हानि भी कम नहीं है। लोहे की अनेक प्रकार की विषैली मशीन आदि के आविष्कार से लोगों के हृदय में युद्ध करने की भयंकर प्रेरणा बराबर जगी रहती है जिससे संसार के रंग-मंच पर खून-खराबी की आशंका सर्वदा बनी रहती है। कहा जाता है कि गत योरोपीय महायुद्ध छिड़ने का एक कारण लोहा भी था।

उपसंहार—भगवान की लीला भी विचित्र है। यह उन्हीं की लीला है कि ऐसी उपयोगी चीजें संसार के प्रायः सभी हिस्सों में बहुतायत से पाई जाती हैं। लोहे की भस्म मूल्यवान औषधि है।

(घ) स्थान विषयक लेख

विषय-विभाग—(१) परिचय, (२) पूर्व इतिहास, (३) आधुनिक वर्णन, (४) शासन, (५) प्राकृतिक दृश्य, (६) अन्य दर्शनीय चीज़ें, (७) उपज और (८) उपसंहार।

(१) मुँगेर

परिचय—पुण्य-सलिला भागीरथी के पुनीत तट पर उत्तर पार्श्व की ओर विहार प्रान्त का प्रसिद्ध नगर मुँगेर बसा हुआ है। यह बड़ा ही रमणीक शहर है। पुराणों में यह मुद्गलपुरी के नाम से प्रसिद्ध है।

प्राचीन इतिहास—कहा जाता है कि यह नगर मुद्गल नामक ऋषि का बसाया हुआ है। प्राचीन युग में यह विशेष समृद्धिशाली था। यहाँ अब भी गङ्गा के किनारे चंडी-स्थान नामक एक अति प्राचीन देवालय है जहाँ चम्पापुरी के दानवीर राजा कर्ण प्रति दिन चंडी माता की पूजा करने आते थे। गङ्गा के ही किनारे कष्टहरणि घाट नाम का एक अत्यन्त रमणीक और प्राचीन समय का बना हुआ घाट है जहाँ पर अब भी खरोष्ठी लिपि में लिखे हुए कई एक शिलालेख पाये जाते हैं जो उस पवित्र स्थान की प्राचीनता के प्रमाण स्वरूप हैं। १८ वीं सदी में, जिस समय मीरकासिम बंगाल और बिहार का सूबेदार था, मुँगेर को चार वर्ष तक बंगदेश की राजधानी होने का सौभाग्य

नाश हो चुका है। मीरकासिम के समय के बने हुए दुर्ग के भीतर उसी समय की बहुत सी इढ़ इमारतें अब भी मुँगेर के प्राचीन गौरव को दरसा रही हैं। इतिहासकारों का अनुमान है कि इस दुर्ग का अस्तित्व मीरकासिम के बहुत पहले ही समय से कायम था। कदाचित् राजा कर्ण ने ही इसे बनवाया था और मीरकासिम ने इसका पुनरुद्धार किया। दुर्ग के भग्नावशेष को देखने से सहज में ही यह अनुमान किया जा सकता है किसी समय यह बड़ा ही सुरक्षित और सुदृढ़ दुर्ग रहा होगा। दुर्ग के एक ओर गङ्गा नदी बहती है और शेष तीन ओर बड़ी गहरी खाइँ खुदी हुई हैं। तीन प्रवेश-द्वार हैं। इन दिनों किले के हाते में सरकारी कचहरी, डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड तथा म्युनिसिपल बोर्ड के दफ्तर और जेल हैं। जेल के अन्तर्गत की अधिकांश इमारतें मीरकासिम के समय की ही बनी हुई हैं। किले के हाते में एक भयङ्कर खोह भी है। कहते हैं कि मीरकासिम इसी खोह से होकर अँगरेज़ों के भय से भागा था। इसके अतिरिक्त मीरकासिम के लड़के और लड़की गुल और बहार की प्रसिद्ध कबरें भी किले के हाते में ही हैं जिनकी प्रेम-कहानी बड़ी ही दर्दनाक है।

आधुनिक वर्णन—मुँगेर आधुनिक समय में बिहार सूबे का एक जिला है। देखने में बड़ा ही रमणीक शहर है। इसकी लम्बाई प्रायः चार मील और चौड़ाई दो मील से भी अधिक है। ई० आई० रेलवे के सुप्रसिद्ध जंक्शन जमालपुर से रेल की एक शाखा यहाँ तक आई है। यहाँ डायमण्ड जुबली कालिज नामक एक कालिज है जहाँ सैकड़ों विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। साथ ही सरकारी हाई, ई० स्कूल के अतिरिक्त टाउन स्कूल, ट्रेनिङ्ग स्कू-

डमी, आदि हाई स्कूल स्थापित हैं। औषधालय, चिकित्सालय, पुस्तकालय की भी कमी नहीं है। एक अनाथालय भी है। किले के भीतर शहर से बिल्कुल अलग सरकारी विचारालय की इमारतें हैं। निकट ही जुवेनाइल जेल है जहाँ २१ वर्ष से कम उम्र के कैदी रखे जाते हैं। मुँगेर में छूरी, कैंची, गुप्ती, बन्दूक आदि लोहे की उत्तमोत्तम चीजें बनती हैं। सिगरेट तैयार करने के लिए एक बहुत बड़ी तम्बाकू की फैक्टरी है जिसमें प्रायः दस हज़ार कुली काम करते हैं। मुँगेर शहर से पाँच मील की दूरी पर जमालपुर में ई० आई० रेलवे का सब से बड़ा कारखाना है। जिसमें पचीस हजार से भी अधिक मजदूर काम करते हैं।

शासन—मुँगेर शहर में सरकार की ओर से एक कलक्टर रहते हैं जो जिले भर की देख-रेख करते हैं। शहर के प्रबन्ध के लिए एक म्युनिसिपल बोर्ड कायम है।

प्राकृतिक दृश्य—मुँगेर शहर से तीन मील की दूरी पर सीताकुंड नामक एक गरम जल का झरना है। जिसका जल अत्यन्त उष्ण है। हाथ तक नहीं सधता। उस जगह की शोभा भी निराली है। माघी पूर्णिमा में वहाँ भारी मेला लगता है।

अन्य इमारतें—इमारतों में कर्णचौड़ा कोठी, बाबू बैजनाथ गोयनका का गगन-चुम्बी प्रासाद, तिनपहाड़ी पर बनी हुई एक रमणीय कोठी, राजा देवकीनन्दन प्रसाद की ठाकुरबाड़ी, टाउन हाल आदि दर्शनीय हैं।

उपज—यहाँ की प्रधान उपज धान, गेहूँ, अरहर, चना आदि है। यहाँ से निकट ही पाटम नामक स्थान के अरहर की दाल अपूर्व स्वादिष्ट होती है। पाटम में पान की खेती भी खूब होती है। मुँगेर धीरे-धीरे एक व्यापारिक केन्द्र होता जा रहा

है। आम, लीची, अनार आदि फल भी पाये जाते हैं।

उपसंहार—यद्यपि मुँगेर एक प्राचीन नगर है तथापि इसका वर्तमान रूप पुराने रूप से बिल्कुल भिन्न है। यद्यपि यह छोटा है तथापि बड़ा ही रमणीक और चित्ताकर्षक है। क़िला के भीतर की सड़कें बड़ी ही प्रशस्त और चिकनी हैं। क़िले के मुख्य फाटक पर एक बड़ा सा टावरक्लाक शहर की शोभा को और भी बढ़ा रहा है। सारांश यह है कि मुँगेर दिन प्रतिदिन उन्नति की ओर ही अग्रसर होता जा रहा है।

अभ्यास

नीचे लिखे विषयों पर छोटा-छोटा निबन्ध लिखो।

Write short essays on the following subjects.

(क) जीव-जन्तु (Animals)

(१) घोड़ा, भैंस, कुत्ता और बिल्ली—Horse, Buffalo, Dog and Cat.

(२) हाथी, बन्दर, सिंह और हिरन—Elephant, Monkey, Lion and Deer.

(३) कबूतर, मुर्गा और बत्तक—Pigeon, Cock and Duck.

(४) साँप, मेंढक और ह्वेल मछली—Serpent, Frog and Whale fish.

(ख) उद्भिद् विषयक (Trees, plants, etc.)

(१) आम, लीची और नारङ्गी—Mango, Lichi and Orange.

(२) गुलाब, लता और चमेली—Rosé, Creeper and

Chamelee flower.

(ग) अन्य विषय (Other subjects)

(१) सोना, चाँदी और कोयला—Gold, Silver and Coal.

(२) बङ्गाल, अफ़ग़ानिस्तान और पटना—Bengal, Afghanistan and Patna.

चतुर्थ परिच्छेद

विवरणात्मक लेख (Narrative essays)

जिस लेख में किसी ऐतिहासिक, पौराणिक, भ्रमण-वृत्तान्त सम्बन्धी या सामयिक घटनाओं का वर्णन किया जाय उसे विवरणात्मक लेख कहते हैं। इस ढङ्ग के लेख के अनेक भेद हो सकते हैं।

(क) ऐतिहासिक लेख (Historical essays)

विषय-विभाग—(१) भूमिका—समय, स्थान इत्यादि। (२) घटना का कारण—मुख्य और गौण। (३) विस्तृत विवरण। (४) फलाफल और (५) विशेष मन्तव्य।

(१) हल्दीघाट की लड़ाई (Battle of Haldighat)

भूमिका—दिल्ली के मुगल सम्राट् अकबर के पुत्र सलीम और चित्तौर के महाराणा प्रतापसिंह के बीच सन् १५७६ ई० में अर्वली या आबू पहाड़ के निकट स्थित हल्दीघाट में घनघोर युद्ध छिड़ा था जो भारतवर्ष के इतिहास में हल्दीघाट की लड़ाई के नाम से प्रसिद्ध है।

कारण—सम्राट् अकबर ने अपनी चतुराई से राजपूताने के प्रायः अधिकांश राजपूत राजाओं को अपने वश में कर

सबों ने अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली और उन्हें अपना-अपना डोला भी भेजा परन्तु चित्तौर के महाराणा प्रतापसिंह ने अधीनता स्वीकार करना अपने धर्म और प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझा। अकबर की अनुपम नीति-चातुरी प्रतापी प्रताप के सामने व्यर्थ सिद्ध हुई और अन्त में प्रताप को वश में करने के लिए उन्हें युद्ध-घोषणा करनी पड़ी। सम्राट् ने अपने पुत्र सलीम तथा सेनापति मानसिंह को एक लाख सेना के साथ प्रताप से लोहा लेने के लिए भेजा। महाराणा प्रताप भी पीछे हटने वाले नहीं थे। वे भी बाइस हज़ार वीर क्षत्रिय-सेना को लेकर हल्दीघाट के मैदान में मुगलों की सेना का सामना करने के लिए आ डटे। यह तो हल्दीघाट की लड़ाई का प्रधान कारण हुआ। इस लड़ाई का एक दूसरा गौण कारण यह भी है कि एक बार मानसिंह चित्तौर पधारे। वहाँ महाराणा प्रताप की ओर से उनका भरपूर स्वागत हुआ परन्तु खाने के समय प्रतापसिंह ने उनकी मेहमानदारी करने के लिए स्वयं नहीं आकर अपने पुत्र अमरसिंह को भेज दिया। जब मानसिंह को यह मालूम हुआ कि मैंने अकबर की अधीनता स्वीकार कर सम्राट् को जो डोला दिया है उसीसे महाराणा ने मुझसे मिलना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध समझा तो वे मन ही मन बड़े क्रुद्ध हुए और इस अपने अपमान का बदला लेने के लिए उन्होंने सम्राट् अकबर को महाराणा से युद्ध करने के लिए प्रोत्साहित किया।

विस्तृत वर्णन—जिस समय आबू पहाड़ की चोटी पर बाल-रवि की सुनहरी किरणें पड़ीं, उसी समय हल्दीघाट के प्रसिद्ध रणांगण में दोनों ओर की सेनाओं की मुठभेड़ हुई। मुगलों की सेना के सेनापति शाहज़ादा सलीम हाथी पर सवार थे और क्षत्रिय-

वीर महाराणा प्रतापसिंह अपने प्रसिद्ध चेटक घोड़े पर। महाराणा का चेटक भी अद्वितीय घोड़ा था। एक ओर एक लाख सेना थी और दूसरी ओर केवल बाइस हज़ार वीर थे परन्तु इन वीरों में अपूर्व उत्साह था। धर्म्म और गौरव की रक्षा करने की एकान्त प्रेरणा ने इन वीरों को मतवाला बना दिया था। दोनों ओर से मारकाट प्रारम्भ हुई। एक से एक वीर धराशायी होने लगे। चारों ओर ख़ून की नदियाँ बह चलीं। सारा मैदान रक्तप्लावित हो गया। स्वयं महाराणा चेटक पर सवार होकर मुग़लों की सेना में तीर की नाईं घुस पड़े और अपनी दुधारी तलवार से अपने चारों ओर घिरे हुए मुग़लों की सेना का संहार करते हुए सलीम के निकट तक पहुँच गये। चेटक ने अपना दोनों पैर हाथी के मस्तक पर रख दिया और महाराणा ने सलीम को अपने भाले का निशाना बनाना चाहा। उस समय का दृश्य बड़ा ही विचित्र था। मालूम पड़ता था कि अब सलीम का प्राण बचना दुर्लभ है। मुग़लों की सेना में चारों ओर हाहाकार मच गया परन्तु दैवयोग से भाला हौदे के बीच बैठे हुए सलीम को न लगकर महावत को जा लगा। सलीम बच गया। वार चूक जाने पर महाराणा मुग़लों की सेना से घिर गये। इनके प्राण सङ्कट में पड़ गये। उस समय तक इन्हें अस्सी घाव लग चुके थे। चेटक भी थककर शिथिल हो चुका था परन्तु इस भीषण परिस्थिति में स्वामिभक्त झालामानसिंह ने बड़ी बहादुरी से अपने स्वामी के प्राण बचा लिये। उस स्वामिभक्त वीर ने झट प्रताप के सिर की पगड़ी अपने सिर पहन ली। मुग़लों की मदान्ध सेना उसे ही महाराणा समझ उस पर टूट पड़ी। झाला सरदार के प्राण तो नहीं बच पाये परन्तु महाराणा बेदाग़ बच निकले। इस प्रकार बड़ी देर तक घमासान

लड़ाई होती रही परन्तु लाख सेना के आगे मुट्ठी भर राजपूत वीर कब तक ठहर सकते थे ! सभी तितर-बितर हो गये। निराश होकर महाराणा ने जङ्गल की राह ली। रास्ते में ही उनके प्यारे चेटक ने भी उनका साथ छोड़ परलोक की यात्रा की। इस प्रकार हल्दीघाट की लड़ाई का अन्त हुआ।

फलाफल—हल्दीघाट की लड़ाई का अन्त तो हुआ परन्तु महाराणा मुग़लों के हाथ नहीं आये और न चित्तौर की प्रजा ने ही अकबर की अधीनता स्वीकार की। मुग़लों ने सारे चित्तौर को उजाड़ दिया। महाराणा अपने परिवार के सहित अपने धर्म और गौरव के रक्षार्थ जंगलों में भटकते रहे। लाखों तरह की कठिनाइयों का सामना किया। बड़ी-बड़ी मुसीबतें झेलीं परन्तु अकबर के अधीन नहीं हुए।

विशेष मन्तव्य—वर्षों तक कष्ट झेलने के बाद महाराणा ने अंत में पहाड़ी प्रदेश में अपने पिता के स्मारक स्वरूप उदयपुर नामक नगर बसाया और चित्तौर छोड़कर वहीं रहने लगे। चित्तौर की सारी प्रजा ने उनका साथ दिया। सभी चित्तौर छोड़ उदयपुर में जा बसे। अकबर की एक न चली।

(ख) जीवन-चरित्र सम्बन्धी लेख

विषय विभाग—(१) परिचय, (२) बाल्यजीवन, (३) शिक्षा, (४) कार्यकाल, (५) आदर्श कार्य, (६) चरित्र, (७) मृत्यु और (८) उपसंहार।

(१) महादेव गोविन्द रानडे (Mahadeo Govind Ranadey)

परिचय—महादेव गोविंदरानडे भारतवर्ष के उन महापुरुषों में हैं जिनके स्मरणमात्र से हृदय में श्रद्धा की धारा प्रवाहित

हो उठती है और जिनके आदर्श चरित्र का अनुकरण करने से हमारे देश के नवयुवक अपने जीवन को सार्थक बना सकते हैं। इनका जन्म सन् १८४२ ई० की १८ वीं जनवरी को बम्बई प्रान्तान्तर्गत नासिक जिले के एक गाँव में हुआ था। इनके पिता कोल्हापुर रियासत के दीवान थे। ये जाति के महाराष्ट्री ब्राह्मण थे।

बाल्यजीवन—बचपन में ये बड़े भोंदू और मनहूस के समान दीख पड़ते थे। इनके बचपन के बोदे स्वभाव को देखकर कोई भी यह अनुमान नहीं कर सकता था कि आगे जाकर ये एक आदर्श और महान् व्यक्ति होंगे। स्वयं इनके माँ-बाप को यह चिन्ता रहती थी कि ये दस-पन्द्रह रुपये मासिक भी नहीं कमा सकेंगे। परन्तु ये पढ़ने में बड़े ही तेज निकले। इनकी कुशाग्र बुद्धि देखकर सब दंग रह गये सबों की धारणा गलत निकली।

शिक्षा—बचपन में ये पिता के साथ रहकर अपनी मातृ-भाषा मराठी सीखने लगे। पश्चात् अंगरेजी पढ़ने के लिए एलिफिनिस्टन कालेज में भेजे गये। अपनी आश्चर्यजनक प्रतिभा के चमत्कार से ये बराबर सम्मान के साथ परीक्षोत्तीर्ण होते गये। एफ० ए०: तक इन्हें बराबर छात्रवृत्ति मिलती रही। सन् १८६२ ई० में इन्होंने बी० ए० आनर्स की परीक्षा पास की जिसमें इनको एक स्वर्णपदक और दो सौ रुपये पारितोषिक में मिले। साथ ही एम० ए० में पढ़ने के लिए १५० रुपये की छात्रवृत्ति भी मिली। सन् १८६५ ईस्वी में बड़ी योग्यता के साथ इन्होंने एम० ए० और १८६६ ईस्वी में वकालत की परीक्षा पास की। प्रत्येक परीक्षा में अपने प्रान्त के छात्रों में पहला स्थान ग्रहण करते गये।

लड़ाई होती रही परन्तु लाख सेना के आगे मुट्ठी भर राजपूत वीर कब तक ठहर सकते थे ! सभी तितर-बितर हो गये। निराश होकर महाराणा ने जङ्गल की राह ली। रास्ते में ही उनके प्यारे चेटक ने भी उनका साथ छोड़ परलोक की यात्रा की। इस प्रकार हल्दीघाट की लड़ाई का अन्त हुआ।

फलाफल—हल्दीघाट की लड़ाई का अन्त तो हुआ परन्तु महाराणा मुग़लों के हाथ नहीं आये और न चित्तौर की प्रजा ने ही अकबर की अधीनता स्वीकार की। मुग़लों ने सारे चित्तौर को उजाड़ दिया। महाराणा अपने परिवार के सहित अपने धर्म और गौरव के रक्षार्थ जंगलों में भटकते रहे। लाखों तरह की कठिनाइयों का सामना किया। बड़ी-बड़ी मुसीबतें झेलीं परन्तु अकबर के अधीन नहीं हुए।

विशेष मन्तव्य—वर्षों तक कष्ट झेलने के बाद महाराणा ने अंत में पहाड़ी प्रदेश में अपने पिता के स्मारक स्वरुप उदयपुर नामक नगर बसाया और चित्तौर छोड़कर वहीं रहने लगे। चित्तौर की सारी प्रजा ने उनका साथ दिया। सभी चित्तौर छोड़ उदयपुर में जा बसे। अकबर की एक न चली।

(ख) जीवन-चरित्र सम्बन्धी लेख

विषय विभाग—(१) परिचय, (२) बाल्यजीवन, (३) शिक्षा, (४) कार्यकाल, (५) आदर्श कार्य, (६) चरित्र, (७) मृत्यु और (८) उपसंहार।

(१) महादेव गोविन्द रानडे (Mahadeo Govind Ranadey)

परिचय—महादेव गोविंदरानडे भारतवर्ष के उन महापुरुषों में हैं जिनके स्मरणमात्र से हृदय में श्रद्धा की धारा प्रवाहित

हो उठती है और जिनके आदर्श चरित्र का अनुकरण करने से हमारे देश के नवयुवक अपने जीवन को सार्थक बना सकते हैं। इनका जन्म सन् १८४२ ई० की १८ वीं जनवरी को बम्बई प्रान्तान्तर्गत नासिक जिले के एक गाँव में हुआ था। इनके पिता कोल्हापुर रियासत के दीवान थे। ये जाति के महाराष्ट्री ब्राह्मण थे।

बाल्यजीवन—बचपन में ये बड़े भोंदू और मनहूस के समान दीख पड़ते थे। इनके बचपन के बोदे स्वभाव को देखकर कोई भी यह अनुमान नहीं कर सकता था कि आगे जाकर ये एक आदर्श और महान् व्यक्ति होंगे। स्वयं इनके माँ-बाप को यह चिन्ता रहती थी कि ये दस-पन्द्रह रुपये मासिक भी नहीं कमा सकेंगे। परन्तु ये पढ़ने में बड़े ही तेज निकले। इनकी कुशाग्र बुद्धि देखकर सब दंग रह गये सबों की धारणा गलत निकली।

शिक्षा—बचपन में ये पिता के साथ रहकर अपनी मातृभाषा मराठी सीखने लगे। पश्चात् अंगरेजी पढ़ने के लिए एलिफिनिस्टन कालेज में भेजे गये। अपनी आश्चर्यजनक प्रतिभा के चमत्कार से ये बराबर सम्मान के साथ परीक्षोत्तीर्ण होते गये। एफ० ए० तक इन्हें बराबर छात्रवृत्ति मिलती रही। सन् १८६२ ई० में इन्होंने बी० ए० आनर्स की परीक्षा पास की जिसमें इनको एक स्वर्णपदक और दो सौ रुपये पारितोषिक में मिले। साथ ही एम० ए० में पढ़ने के लिए १५० रुपये की छात्रवृत्ति भी मिली। सन् १८६५ ईस्वी में बड़ी योग्यता के साथ इन्होंने एम० ए० और १८६६ ईस्वी में वकालत की परीक्षा पास की। प्रत्येक परीक्षा में अपने प्रान्त के छात्रों में पहला स्थान ग्रहण करते गये।

कार्यकाल—शिक्षा समाप्त कर चुकने के बाद सन् १८६८ ई० में महादेव गोविंद रानडे एलिफिनिस्टन कालिज के अंगरेजी के अध्यापक नियुक्त हुए। अध्यापन का काम ये इस खूबी और योग्यता के साथ सम्पादित करते थे कि इनसे शिक्षा विभाग के अधिकारी बड़े ही सन्तुष्ट रहा करते थे। परन्तु इस पद पर ये बहुत दिन ठहर नहीं सके और सन् १८७३ में ८०० रुपये मासिक वेतन पर पूना के जज नियुक्त हो गये। न्यायाधीश के पद पर रहते हुए उत्तरोत्तर इनकी उन्नति होने लगी और १८९३ ई० में ये बम्बई हाईकोर्ट के जस्टिस बना दिये गये। सात वर्ष तक इस प्रतिष्ठित पद पर रहकर ये असाधारण योग्यता के साथ कार्य सम्पादन करते रहे। इनके कार्य से प्रसन्न होकर सरकार ने इन्हें सी० आई० ई० की उपाधि से भूषित किया।

आदर्श कार्य—अपनी विलक्षण कार्य-परता के फल स्वरूप ये केवल सरकार के ही सम्मान-भाजन नहीं बल्कि जनता के भी हृदयहार बन गये थे। ये न्याय करते समय धनी-गरीब सभी को समदृष्टि से देखते थे। बराबर जनता की भलाई के उपाय सोचा करते थे। सैकड़ों गरीब विद्यार्थियों को अपने पास से खर्च देकर पढ़ाते थे। मृत्यु के समय भी चालीस हज़ार रुपये सार्वजनिक संस्थाओं के लिए दान कर गये। बम्बई की जनता रानडे महोदय के उपकार को कभी भुला नहीं सकती।

चरित्र—रानडे महोदय की इस आशातीत उन्नति का कारण केवल उनकी विद्वता ही नहीं बल्कि उनका चरित्रबल भी था। अपने चरित्रबल के प्रभाव से ये बड़े ही सर्वप्रिय हो गये थे। ये जैसे विद्वान् थे वैसे ही सदाचारी और कर्त्तव्यनिष्ठ भी थे। अभिमान तो इन्हें छू तक नहीं गया था। इनका स्वभाव यथार्थ

में अनुकरणीय था। इर्षा-द्वेष का तो ये नाम भी नहीं जानते थे तथा बड़े ही मिलनसार और मिष्टभाषी थे। अपने जीवन में किसी को अप्रिय वचन इन्होंने नहीं कहा। सादगी के तो ये साक्षात् अवतार थे। इतना प्रतिष्ठित और विद्वान् होने पर भी इनका रहन सहन बिल्कुल सादा और स्वदेशी ढङ्ग का था। घर पर सदा मिर्जई और कण्टोप पहना करते थे। किसी चीज का व्यसन इन्हें नहीं था। इन्हीं सब गुणों के कारण लोग इन्हें विशेष श्रद्धा और भक्ति की दृष्टि से देखते थे और अब भी इनके नाम को सुनकर हृदय में श्रद्धा उमड़ आती है।

मृत्यु-काल—ये सन् १९०१ ई० की १६ वीं जनवरी को परलोक सिधारे। इनकी मृत्यु से लोग बड़े दुःखी हुए। इनके शव के साथ हजारों विद्यार्थी, उच्च कर्मचारी तथा असंख्य जनता और हाई कोर्ट के चीफ जस्टिस आदि बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति श्मशान घाट तक गये थे।

उपसंहार—रानडे माता-पिता के बड़े ही भक्त थे। ये अपने आदर्श चरित्र के बल से संसार में अमर हो गये। ये इतिहास के भी बड़े प्रेमी थे। अर्थशास्त्र और इतिहास पर इन्होंने कई पुस्तकें भी लिखी हैं। भारत की गरीबी का चित्र खींचते हुए कई एक गम्भीर लेख भी लिखे हैं। इनका लिखा हुआ "मराठों का उत्कर्ष" नामक इतिहास-ग्रन्थ बड़ा ही प्रामाणिक माना जाता है।

(ग) भ्रमण-सम्बन्धी लेख

विषय-विभाग—(१) स्थान समय आदि (२) विस्तृत विवरण।

(१) जापान की सैर (A trip to Japan)

ता० २९-७-१५ को प्रातःकाल कियोटे के लिए प्रस्थान किया

और डेढ़ घण्टे में नारा पहुँच गये। किसी समय नारा जापान की राजधानी थी। आधुनिक नगर उस समय के नगर का दशांश भी नहीं है।

रेल से उतरकर हम लोग एक जापानी होटल में गये। यहाँ फर्श पर सुन्दर चटाइयाँ बिछी थीं। कपड़े उतारकर सोलह मास के बाद आनन्द से हम जमीन पर लेट गये। सब से आश्चर्य-जनक बात यह थी कि यहाँ कुएँ का ठंढा जल मिला। गर्मी की अधिकता से भोजन के बाद विश्राम किया। इतने में बादल घिर आये और अच्छी वर्षा हो गयी इससे कुछ ठंढा हुआ और चार बजे शाम को हम नगर देखने गये। पहले हम संग्रहालय देखने गये। इसका नाम यहाँ "हकूब्रत्सूकान" है। यहाँ धार्मिक उत्तेजना से निर्मित पुरातन जापानी शिल्प को देखने का अच्छा मौका मिलता है। मूर्त्तिनिर्माण, चित्रण तथा अन्य सुकुमार शिल्प को धर्म्म से कितनी सहायता मिलती है इसका अन्दाजा भलीभाँति देखने से सभी प्राचीन देशों में मिलता है। इस संग्रहालय में जापानी शिल्प के नमूने बहुतेरे स्थानों से एकत्र किये गये हैं। यहाँ की मूर्त्तियों में बहुत सी सातवीं और आठवीं सदी की हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ बहुत कीमती हस्तलिखित पत्रों और प्राचीन सम्राटों के हस्ताक्षरों का बहुत बड़ा संग्रह है। इतिहास के पूर्व के मिट्टी के बर्तन और मध्ययुग के अन्य अस्त्र-शस्त्रों का भी अच्छा संग्रह है।

यहाँ से "नन्दाईमो" तथा "नियोमो" नामक पुराने दक्षिणी फाटक और दो नृपतियों के कपाट देखकर भगवान बुद्ध की विशाल मूर्त्ति देखने गये। काँसे की यह मूर्त्ति ५३॥ फीट ऊँची है। बुद्ध भगवान ध्यानावस्थित सुखासन में कमल-

पुष्प पर बैठे हैं। यहाँ से हम हिरनों को देखने गये। घास के बड़े-बड़े मैदानों में हजारों हिरन चरते हैं, ये मनुष्यों से नहीं डरते और हाथ से लेकर खाद्यपदार्थ खा जाते हैं। इनके सींग भी छूने में बड़े नरम लगते हैं। क्योंकि ये प्रतिवर्ष इसलिए काट दिये जाते हैं कि यात्रियों को कष्ट न पहुँचे। यहाँ से हम नारा में अवस्थित एक विशाल घंटा देखने गये जो ७८९ सम्वत् में ढाला गया था। यह १३॥ फीट ऊँचा और ९ फीट चौड़ा है। इसके ढालने में २७ मन राँगा और ९८२ मन ताँबा लगा है तथा अन्य पदार्थों का वजन नहीं दिया गया है।

घर लौटते समय हम एक तालाव पर आये। इसमें बहुत से छोटे-छोटे कछुए और मछलियाँ थीं। इन्हें चावल की बनी एक प्रकार की लम्बी रोटी खिलाते हैं। रोटी का टुकड़ा फेंकने से इन में जो लड़ाई होती है वह देखने योग्य है।

ता० ३०-७-१५ को प्रातःकाल हम शिण्टो-मन्दिर 'कासुगा' देखने गये। यह 'फुजीवारा कुल' के वीरों को समर्पित है। यहाँ के शिण्टो देवताओं के नाम 'आमानो को याने' है। मन्दिर बहुत सुन्दर बना है। यहाँ पर एक विचित्र सतवटी है। एक ही तने में सात भिन्न प्रकार के वृक्ष उगे हैं।

ता० ३१-७-१५ को नारा से आसोका के लिए रवाना होकर हम बीच में 'हरयुजी' में उतर पड़े। जापान में यह सब से प्राचीन बौद्ध-मन्दिर है। सं० ६६४ में बनकर तैयार हुआ था। यह केवल मन्दिर ही नहीं, पर एक प्रकार का मठ भी है। इसके सिवा यहाँ कई मन्दिर हैं। प्राचीन काल में यहाँ विशाल विद्यापीठ था, जिसमें हर-प्रकार के ज्ञान के विस्तार और प्रचार का प्रबंध था

'हरमुजी' से चलकर थोड़ी देर में हम आसोका पहुँच गये। रास्ते में एक जगह अपने देश की तरह ढेंकी से धान कूटते देखा। देखते-देखते रेल नगर के सन्निकट पहुँच गयी। जिस प्रकार काशी से कलकत्ते पहुँचने के समय सारा नभोमण्डल धूम्राच्छादित और ऊँची-ऊँची चिमनियों से भरा हुआ एक जंगल सा देख पड़ता है, जिनमें से धुआँ निकलकर आकाश को काला बना देता है, ठीक ऐसा ही समा यहाँ भी दिखाई देता है। आसोका में बड़े-बड़े मकानों की बहुतायत है। सारा नगर ऊँची-ऊँची चिमनियों से भरा है। बड़ी-बड़ी चौड़ी सड़कें हैं। योदोगावा नामक नदी नगर के बीच में से बहती है और उसकी अनेक नहरों से अनेक जल-मार्ग बन गये हैं। इसीलिए योरोपवाले इसे जापान का वेनिस कहते हैं।

रात्रि को इन नहरों की शोभा अकथनीय होती है। हजारों छोटी-बड़ी नौकाएँ इधर से उधर आती-जाती दिखाई देती हैं। इन पर जल-यात्रा या जल-विहार के प्रेमी सैर करते हैं।

दर्शकों के मनोरंजनार्थ सड़क, पुल, इमारतें सभी बिजली के प्रकाश से जगमगाती रहती हैं। पल-पल पर रंग-रूप बदल बदलकर विज्ञापन की पटरियाँ (Sign-boards) दर्शकों के मन को अपनी ओर आकृष्ट करती हैं। फ्रान्स में पेरिस के आफेल टावर के ढंग पर यहाँ भी एक ऊँचा धरहरा बना है जो विद्युत्-प्रकाश से जगमगाता रहता है। इसमें ऊपर जाने के लिए बिजली का यन्त्र है।

एक दिन काँच का कारखाना देखने गये। यहाँ बालू और एक प्रकार की सफेद मिट्टी मिलाकर काँच बनाते हैं। इसके बाद हम चमड़े का कारखाना देखने गये। हमारे साथ जो युवक

जापानी व्यापारी आये थे, कहने लगे कि जब घर पर लोगों को मालूम होगा कि हम चमड़े के कारखाने में गये थे तो माथे पर नमक छींटकर शुद्ध किये बिना हमें घर में घुसने न देंगे। यहाँ चमार लोग अशुद्ध समझे जाते हैं।

आसोका की दूसरी ओर एक घण्टे की राह पर कोबे नगर है यह यहाँ का प्रधान बन्दर है। यहाँ देशी तथा विदेशियों के बड़े-बड़े कार्य्यालय हैं जिनमें भारतवासियों की भी १०, १२ दूकानें हैं। याकोहामा में भी ३०, ४० दूकानें भारतवासियों की हैं।

(संकलित)

(घ) सामयिक घटना सम्बन्धी लेख

विषय-विभाग—(१) समय, स्थानादि, (२) कारणादि, (३) विवरण, (४) फलाफल और (५) उपसंहार।

(१) गत १९२७ की उड़ीसे की बाढ़

भूमिका—गत १९२७ के अगस्त के महीने में सारे उड़ीसे प्रान्त में विशेषकर कटक के जिले में महा प्रचण्ड बाढ़ आई थी।

कारण—यों तो उड़ीसे की भौगोलिक परिस्थिति ही ऐसी है कि प्रत्येक वर्ष वर्षाऋतु में कुछ न कुछ बाढ़ आ ही जाती है। यह प्रान्त और प्रान्तों की अपेक्षा निम्न तह में अवस्थित है। सारा प्रान्त पहाड़ों से आच्छादित है और समुद्रतट से बहुत ही निकट है। इसी कारण बहुत सी छोटी-छोटी नदियाँ भी बड़ा ही उग्र और प्रलयंकर भेष धारण कर बैठती हैं। महानदी का तो कहना ही क्या है। थोड़ी ही वर्षा होने पर इसमें भीषण बाढ़ आजाती है। इस बार की बाढ़ के भी मुख्यतः ये ही कारण हैं। पहाड़ों पर अधिक वर्षा होने के कारण इस वर्ष की बाढ़ अन्य

वर्षों की बाढ़ की अपेक्षा अधिक भयंकर और दुःखदायिनी हुई

विशेष विवरण—इस वर्ष की बाढ़ की भीषणता का अनु
मान इसीसे लगाया जा सकता है कि जिस दिन से बाढ़ क
आगमन हुआ उस दिन से कई दिनों तक लगातार जल क
प्रचण्ड प्रवाह पूर्वापेक्षा प्रबल होता ही गया और सारा भूभा
कई हफ्ते तक जल-मग्न रहा। बी० एन० रेलवे की लाइनें इ
प्रवाह में बह गयीं और एक मास से भी अधिक दिन तक रेलगाड़
का आना जाना बंद रहा। हफ्तों तक कई सौ मील तक की रेल
लाइनें जल के भीतर ही पड़ी रहीं। कटक के जिले में कुल फसल
और लाखों की धन सम्पत्ति जल के गर्भ में विलीन हो गई
असंख्य गाय, बैल आदि पशु जल की धारा में बह गये। सैकड़
मनुष्य असमय में ही काल के गाल में जा पड़े और जो बचे
भी महीनों तक धन और घर से हाथ धोकर त्राहि-त्राहि कर
रहे। अन्य जिलों में भी बाढ़ के कारण लोगों की कम दुर्दशा नह
हुई। लोगों ने पेड़ों पर चढ़कर पेड़ों की ही पत्तियाँ खाक
अपने-अपने प्राण बचाये। बहुत से मोह ममता को छोड़क
चिरनिद्रा की गोद में सदा के लिए विश्राम करने लगे। परन
जो बचे उनके भी प्राण संकट में पड़ गये। सारांश यह है कि क
हफ्ते तक उड़ीसे के सारे भू-भाग में कालरूपिणी बाढ़देव
का तांडव-नृत्य होता रहा। सारा प्रान्त एक विस्तृत झील
परिणत हो गया।

फलाफल—बाढ़ के समय और उसके बाद भी कलकत्ते क
मारवाड़ी फ़ड रेलीफ़ समिति तथा लाहौर की लोकसमिति क
ओर से इन बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए कोई उपाय बाक
नहीं रखा गया। रामकृष्ण आश्रमवालों ने भी जान पर खेलक

बहुतों का उद्धार किया। सरकार की ओर से भी सहायता का प्रबंध किया गया। उस बाढ़ के भीषणकाल में भी स्वयं उड़ीसे विभाग के माननीय कमिश्नर ने बाढ़-पीड़ित स्थानों का निरीक्षण किया। बाढ़ के कम हो जाने पर उड़ीसे की दशा और भी शोचनीय हो गई। पानी के भीतर ही भीतर घास, कीचड़ और पत्तियों के सड़ जाने से चारों ओर दुर्गन्ध फैलने लगी। फलस्वरूप मलेरिया, हैजा आदि संक्रामक रोगों का भीषण प्रकोप फैल गया। एक तो हजारों मनुष्य गृहविहीन होकर अन्न और शुद्ध जल के अभाव से मृत्यु की अन्तिम घड़ी गिन ही रहे थे; दूसरे इन बीमारियों के भीषण प्रकोप से उनके प्राण और भी संकट में पड़ गये। ऐसी दर्दनाक हालत में उपर्युक्त संस्थाओं ने बड़ी मदद पहुँचाई। उनकी ओर से अन्न, वस्त्र और औषधि आदि बाँटे गये। इसके अतिरिक्त अन्य स्थानों के उदार और धनी व्यक्तियों ने भी धन-जन से सहायता पहुँचाई। सरकार की ओर से गृह-हीन लोगों के घर बनवाने का प्रबंध किया गया। तकावी बाँटे गये तथा दुःख के निवारणार्थ अन्य उपायों का भी अवलम्बन किया गया। कहते हैं इस बाढ़ ने सारे उड़ीसे को जर्जर बना दिया। लाख से भी अधिक घरों के नष्ट होने का अनुमान लगाया गया था।

उपसंहार—उड़ीसे की भीषण बाढ़ को देखकर बाढ़ आने के कारण ढूँढ़ने और उड़ीसेवालों को इस आफ़त से सदा के लिए बचाने के लिए सरकार की ओर से उड़ीसे के कमिश्नर की अध्यक्षता में विशेषज्ञों की एक कमिटी बनाई गई जिसने सारे प्रान्त में दौराकर खूब जाँच-पड़ताल करने के बाद अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करायी है। आशा है सरकार इस पर विशेष ध्यान देगी।

वर्षों की बाढ़ की अपेक्षा अधिक भयंकर और दुःखदायिनी हुई।

विशेष विवरण—इस वर्ष की बाढ़ की भीषणता का अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि जिस दिन से बाढ़ का आगमन हुआ उस दिन से कई दिनों तक लगातार जल का प्रचण्ड प्रवाह पूर्वापेक्षा प्रबल होता ही गया और सारा भूभाग कई हफ्ते तक जल-मग्न रहा। बी० एन० रेलवे की लाइनें इस प्रवाह में बह गयीं और एक मास से भी अधिक दिन तक रेलगाड़ी का आना जाना बंद रहा। हफ्तों तक कई सौ मील तक की रेलवे लाइनें जल के भीतर ही पड़ी रहीं। कटक के जिले में कुल फसल और लाखों की धन सम्पत्ति जल के गर्भ में विलीन हो गई। असंख्य गाय, बैल आदि पशु जल की धारा में बह गये। सैकड़ों मनुष्य असमय में ही काल के गाल में जा पड़े और जो बचे वे भी महीनों तक धन और घर से हाथ धोकर त्राहि-त्राहि करते रहे। अन्य जिलों में भी बाढ़ के कारण लोगों की कम दुर्दशा नहीं हुई। लोगों ने पेड़ों पर चढ़कर पेड़ों की ही पत्तियाँ खाकर अपने-अपने प्राण बचाये। बहुत से मोह ममता को छोड़कर चिरनिद्रा की गोद में सदा के लिए विश्राम करने लगे। परन्तु जो बचे उनके भी प्राण संकट में पड़ गये। सारांश यह है कि कई हफ्ते तक उड़ीसे के सारे भू-भाग में कालरूपिणी बाढ़देवी का तांडव-नृत्य होता रहा। सारा प्रान्त एक विस्तृत झील में परिणत हो गया।

फलाफल—बाढ़ के समय और उसके बाद भी कलकत्ते की मारवाड़ी फ़्लड रेलीफ़ समिति तथा लाहौर की लोकसमिति की ओर से इन बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए कोई उपाय बाकी नहीं रखा गया। रामकृष्ण आश्रमवालों ने भी जान पर खेलकर

बहुतों का उद्धार किया। सरकार की ओर से भी सहायता का प्रबंध किया गया। उस बाढ़ के भीषणकाल में भी स्वयं उड़ीसे विभाग के माननीय कमिश्नर ने बाढ़-पीड़ित स्थानों का निरीक्षण किया। बाढ़ के कम हो जाने पर उड़ीसे की दशा और भी शोचनीय हो गई। पानी के भीतर ही भीतर घास, कीचड़ और पत्तियों के सड़ जाने से चारों ओर दुर्गन्ध फैलने लगी। फलस्वरूप मलेरिया, हैजा आदि संक्रामक रोगों का भीषण प्रकोप फैल गया। एक तो हजारों मनुष्य गृहविहीन होकर अन्न और शुद्ध जल के अभाव से मृत्यु की अन्तिम घड़ी गिन ही रहे थे; दूसरे इन बीमारियों के भीषण प्रकोप से उनके प्राण और भी संकट में पड़ गये। ऐसी दर्दनाक हालत में उपर्युक्त संस्थाओं ने बड़ी मदद पहुँचाई। उनकी ओर से अन्न, वस्त्र और औषधि आदि बाँटे गये। इसके अतिरिक्त अन्य स्थानों के उदार और धनी व्यक्तियों ने भी धन-जन से सहायता पहुँचाई। सरकार की ओर से गृह-हीन लोगों के घर बनवाने का प्रबंध किया गया। तकावी बाँटे गये तथा दुःख के निवारणार्थ अन्य उपायों का भी अवलम्बन किया गया। कहते हैं इस बाढ़ ने सारे उड़ीसे को जर्जर बना दिया। लाख से भी अधिक घरों के नष्ट होने का अनुमान लगाया गया था।

उपसंहार—उड़ीसे की भीषण बाढ़ को देखकर बाढ़ आने के कारण ढूँढ़ने और उड़ीसेवालों को इस आफ़त से सदा के लिए बचाने के लिए सरकार की ओर से उड़ीसे के कमिश्नर की अध्यक्षता में विशेषज्ञों की एक कमिटी बनाई गई जिसने सारे प्रान्त में दौराकर खूब जाँच-पड़ताल करने के बाद अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करायी है। आशा है सरकार इस पर विशेष ध्यान देगी।

वर्षों की बाढ़ की अपेक्षा अधिक भयंकर और दुःखदायिनी हुई।

विशेष विवरण—इस वर्ष की बाढ़ की भीषणता का अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि जिस दिन से बाढ़ का आगमन हुआ उस दिन से कई दिनों तक लगातार जल का प्रचण्ड प्रवाह पूर्वापेक्षा प्रबल होता ही गया और सारा भूभाग कई हफ्ते तक जल-मग्न रहा। बी० एन० रेलवे की लाइनें इस प्रवाह में बह गयीं और एक मास से भी अधिक दिन तक रेलगाड़ी का आना जाना बंद रहा। हफ्तों तक कई सौ मील तक की रेलवे लाइनें जल के भीतर ही पड़ी रहीं। कटक के जिले में कुल फसल और लाखों की धन सम्पत्ति जल के गर्भ में विलीन हो गई। असंख्य गाय, बैल आदि पशु जल की धारा में बह गये। सैकड़ों मनुष्य असमय में ही काल के गाल में जा पड़े और जो बचे वे भी महीनों तक धन और घर से हाथ धोकर त्राहि-त्राहि करते रहे। अन्य जिलों में भी बाढ़ के कारण लोगों की कम दुर्दशा नहीं हुई। लोगों ने पेड़ों पर चढ़कर पेड़ों की ही पत्तियाँ खाकर अपने-अपने प्राण बचाये। बहुत से मोह-ममता को छोड़कर चिरनिद्रा की गोद में सदा के लिए विश्राम करने लगे। परन्तु जो बचे उनके भी प्राण संकट में पड़ गये। सारांश यह है कि कई हफ्ते तक उड़ीसे के सारे भू-भाग में कालरूपिणी बाढ़देवी का तांडव-नृत्य होता रहा। सारा प्रान्त एक विस्तृत झील में परिणत हो गया।

फलाफल—बाढ़ के समय और उसके बाद भी कलकत्ते की मारवाड़ी फ़्लड रेलीफ़ समिति तथा लाहौर की लोकसमिति की ओर से इन बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए कोई उपाय बाकी नहीं रखा गया। रामकृष्ण आश्रमवालों ने भी जान पर खेलकर

बहुतों का उद्धार किया। सरकार की ओर से भी सहायता का प्रबंध किया गया। उस बाढ़ के भीषणकाल में भी स्वयं उड़ीसे विभाग के माननीय कमिश्नर ने बाढ़-पीड़ित स्थानों का निरीक्षण किया। बाढ़ के कम हो जाने पर उड़ीसे की दशा और भी शोचनीय हो गई। पानी के भीतर ही भीतर घास, कीचड़ और पत्तियों के सड़ जाने से चारों ओर दुर्गन्ध फैलने लगी। फलस्वरूप मलेरिया, हैजा आदि संक्रामक रोगों का भीषण प्रकोप फैल गया। एक तो हजारों मनुष्य गृहविहीन होकर अन्न और शुद्ध जल के अभाव से मृत्यु की अन्तिम घड़ी गिन ही रहे थे; दूसरे इन बीमारियों के भीषण प्रकोप से उनके प्राण और भी संकट में पड़ गये। ऐसी दर्दनाक हालत में उपर्युक्त संस्थाओं ने बड़ी मदद पहुँचाई। उनकी ओर से अन्न, वस्त्र और औषधि आदि बाँटे गये। इसके अतिरिक्त अन्य स्थानों के उदार और धनी व्यक्तियों ने भी धन-जन से सहायता पहुँचाई। सरकार की ओर से गृह-हीन लोगों के घर बनवाने का प्रबंध किया गया। तकावी बाँटे गये तथा दुःख के निवारणार्थ अन्य उपायों का भी अवलम्बन किया गया। कहते हैं इस बाढ़ ने सारे उड़ीसे को जर्जर बना दिया। लाख से भी अधिक घरों के नष्ट होने का अनुमान लगाया गया था।

उपसंहार—उड़ीसे की भीषण बाढ़ को देखकर बाढ़ आने के कारण ढूँढ़ने और उड़ीसेवालों को इस आफ़त से सदा के लिए बचाने के लिए सरकार की ओर से उड़ीसे के कमिश्नर की अध्यक्षता में विशेषज्ञों की एक कमिटी बनाई गई जिसने सारे प्रान्त में दौराकर खूब जाँच-पड़ताल करने के बाद अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करायी है। आशा है सरकार इस पर विशेष ध्यान देगी।

अभ्यास

निम्न लिखित विषयों पर लेख लिखो।

Write short essays on the following:

(१) बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, महात्मा ईसा, महात्मा बुद्ध, सीता देवी, सावित्री, शिवाजी, अकबर और नेलसन।

(२) प्लासी का युद्ध, वाटर लू की लड़ाई और सन् १८५७ का सिपाही विद्रोह।

(३) १८५७ का भूकम्प और पटने में प्रिंस ऑफ वेल्स का आगमन।

(४) बोट की यात्रा, रेल की यात्रा और कलकत्ते की सैर।

पञ्चम परिच्छेद

विचारात्मक लेख (Reflective essays)

(क) गुण विषयक

विषय-विभाग—(१) परिभाषा, (२) उत्पत्ति, (३) उद्देश, (४) लाभ, हानि और (५) उपसंहार। आवश्यकतानुसार एक दो विभाग घटा बढ़ा सकते हैं।

(१) सत्यवादिता (Truthfulness)

परिभाषा—सच बोलने का नाम सत्यवादिता है; अर्थात् जो चीज जिस अवस्था में देखी जाय उसे उसी अवस्था में वर्णन करने को सत्यवादिता कहते हैं।

उत्पत्ति—सत्य बोलने के लिए न तो धन खर्च करने की और न शारीरिक या मानसिक परिश्रम करने की आवश्यकता पड़ती है। परन्तु देखी या सुनी हुई चीज को ज्यों का त्यों वर्णन कर देना सिद्धान्त रूप में लाना जितना सुलभ प्रतीत होता है, व्यवहार में लाना उससे कहीं अधिक दुर्लभ है। जब तक मनुष्य के हृदय से लोभ और स्वार्थ का भाव नहीं उठता तब तक सत्य-भाषण स्वप्न ही समझिये। वही मनुष्य सत्य बोल सकता है जो न तो स्वार्थी है न जिसे किसी चीज़ का लोभ है और जो न

झूठे सम्मान के पीछे बावला बना रहता है। बहुत से लोग ऐसे भी हैं जिन्हें झूठ बोलने की आदत सी हो जाती है। ऐसे मनुष्य बिना किसी प्रयोजन के ही सैकड़ों बार सत्य की हत्या करते हैं।

उद्देश—सत्य धर्म का दूसरा रूप है। संसार के सभी धर्मों में सत्य का स्थान सर्वोच्च है। अतः धर्म की रक्षा करना, अन्याय का विरोध करना तथा आडम्बर के आवरण को दूर करना ही सच बोलने का प्रधान उद्देश है।

लाभ—कहने की आवश्यकता नहीं कि सत्य भाषण से अकथनीय लाभ है। सब धर्मों में इसका माहात्म्य श्रेष्ठ माना गया है। संसार में सत्यवादिता के समान कोई दूसरा तप नहीं है। हमारे सुप्रसिद्ध धर्म्म-ग्रन्थ 'मनुस्मृति' में दश तपश्चर्य्या में सत्य प्रधान माना गया है। अगर व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाय तो भी सत्य बोलने में कभी हानि होने की सम्भावना नहीं है। सत्यवादी के लिए शत्रु-मित्र सभी बराबर हैं। सभी उसकी बातों पर विश्वास करते हैं। सत्य पर ही दुनिया निर्भर है और यही कारण है कि आज सत्यवादियों की कमी के कारण इस विशाल और विस्तृत विश्व पर अत्याचार का नग्न-नृत्य होता दिखाई पड़ता है। लोगों के हृदय पर अविश्वास की कुभावना फैलती जा रही है। अपने आत्मीय जनों के हृदय में भी संदेह और शंका स्थान कर रही है। तभी तो आज भाई-भाई, पिता-पुत्र, पत्नी-पति तक भी एक दूसरे के प्राण के ग्राहक हो रहे हैं। सच तो यह है कि इतने पर भी लोगों को चेत नहीं होता और रात-दिन सच न बोलने के कारण होती हुई भयंकर हानियों का प्रत्यक्ष अनुभव कर सत्य-भाषण जैसे प्रशस्त धार्मिक मार्ग को, जिसमें न तो परिश्रम लगता है और न कुछ खर्च होता है, लोग नहीं अपनाते। आज

जो बड़ी अदालतें, न्यायालय और जेल हम देख रहे हैं वे सभी सत्य न बोलने के ही कुपरिणाम हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि दुनिया में सच बोलनेवाला कोई है ही नहीं। पर हाँ, इतना अवश्य है कि सत्यवादियों की संख्या गिनी गुथायी है। अब भी ऐसे लोग हैं, जो सत्य पर मर मिटने के लिए सदा तैयार रहते हैं और सत्य के अन्वेषण के लिए, वधिक की वीणा की स्वर-लहरी सुननेवाले हिरण की नाईं मस्त हो जाते हैं। हमारे प्राचीन भारत में इसी सत्य के पीछे सत्यवादी हरिश्चन्द्र ने अपना सर्वस्व दान कर अपने को चाण्डाल के हाथ में बेच दिया और एकमात्र सत्य को अपनाकर अमर यश का भागी हुआ। परन्तु आज इसी धर्मप्राण भूमि पर सत्य की ओट में भयंकर पाप किया जा रहा है, सत्य का बेतरह गला घोंटा जा रहा है और छल, प्रपंच तथा आडम्बर की मात्रा पांचाली की चीर जैसे बढ़ती जा रही है। अतएव मनुष्य को चाहिये कि लौकिक और पारलौकिक दोनों दृष्टिकोण से सत्य को अपनाकर हृदय को पवित्र और जीवन को सार्थक करे।

उपसंहार—सच बोलनेवाला मनुष्य देवता स्वरूप है। सत्य लोक और परलोक दोनों को साध लेता है और अपने जीवन में लोगों का प्रतिष्ठा-भाजन बन स्मरणीय कीर्ति लाभ करता है तथा इस नश्वर शरीर को छोड़ देने पर भी अपने नाम को संसार में अमर बना देता है। ईश्वरप्राप्ति का इससे बढ़कर कोई दूसरा उत्तम साधन नहीं है।

(२) जीवों पर दया—(Kindness to the animals)

परिभाषा—किसी जीव के दुःख को देखकर उसे दूर

करने की स्वाभाविक इच्छा को कार्य्य-रूप में परिणत करने को ही जीवों पर दया करना कहते हैं।

उत्पत्ति—यों तो प्रायः सभी मनुष्यों के हृदय में थोड़ा-बहुत दया का भाव रहता ही है परन्तु किसी-किसी का हृदय ऐसा होता है कि किसी भी प्राणी के दुःख को देखकर वह विह्वल हो उठता है और अपनी शक्ति भर उसे दूर करने का प्रयत्न करता है। ऐसे मनुष्यों की संख्या प्रायः बहुत कम होती है क्योंकि प्रायः देखा जाता है कि सांसारिक झंझटों के फेर में पड़कर, स्वार्थ और लोभ की चक्की में पिसकर मानव-जाति को अपने हृदय के अन्तर्गत प्रादुर्भूत दया-भाव को बाध्य होकर दबा देना पड़ता है। किसी-किसी का हृदय तो इतना कठोर हो जाता है कि उसके हृदय में बहता हुआ दया का स्रोत बिलकुल सूख जाता है। ऐसे मनुष्य किसी जीव के दुःख को देखकर जरा भी नहीं पसीजते। उलटे दुःखी को दुःख देने में ही उनका हृदय अधिक प्रसन्न रहता है। कहते हैं कि प्राचीन काल के राजे-महराजे दो जीवों को आपस में लड़ा कर उनकी दर्दनाक मौत को बड़े चाव से देखते थे।

उद्देश—सभी जीव ईश्वर की सृष्टि के परिचायक हैं। इसलिए किसी जीव का दुःख दूर करना ईश्वर को सन्तुष्ट करना समझा जाता है। इसी महान् उद्देश की प्रेरणा से मनुष्य के हृदय में किसी जीव के प्रति दया का भाव संचरित होता है।

लाभ—सभी जीव ईश्वर की सन्तान हैं। मानव-जाति भी एक जीव ही है। ईश्वर ने मनुष्य को और जीवों की अपेक्षा बुद्धि नाम की एक विशेष शक्ति प्रदान की है। इसीलिए

मनुष्य और सब जीवों की अपेक्षा अधिक सामर्थ्यवान है। परन्तु ईश्वर ने मनुष्यमात्र को यह विशेषता इसलिए प्रदान नहीं की है कि वह अन्य जीवों को दुःख दे। मनुष्य को बुद्धिमान बनाने का उद्देश यह है कि वह असहाय जीवों का दुःख दूर कर सके। ऐसे जीवों के प्रति दया का भाव रखे और इस तरह परम पिता परमात्मा की प्यारी सृष्टि की रक्षा करने में समर्थ हो सके। अतएव जीवों पर दया करना अपने पालनकर्त्ता को सन्तुष्ट करना है जो मनुष्यमात्र का प्रधान कर्त्तव्य होना चाहिये। सभी धर्मों में जीवों पर दया करना मनुष्यमात्र का कर्त्तव्य समझा गया है। इससे मनुष्य का हृदय पवित्र और सन्तुष्ट होता है। मनुष्य को यह ख्याल रखना चाहिये कि अगर वह किसी असहाय जीव पर दया करेगा तो उसे उस जीव का एक-एक रोम असीसेगा और बुद्धिहीन होने पर भी उस उपकार का बदला किसी न किसी रूप में उसे अवश्य देगा। प्रायः ऐसे बहुत जीव हैं जिनसे मनुष्यों का महान् उपकार सिद्ध होता है। उनके प्रति दया दरसाना व्यावहारिक दृष्टि से भी मनुष्यों का कर्त्तव्य है। सारांश यह है कि सांसारिक और पारलौकिक दोनों दृष्टियों से जीवों पर दया करना मनुष्य के लिए लाभप्रद ही है। परन्तु मूढ़ मानव-समुदाय स्वार्थ के वशीभूत हो अपने इस महान् कर्त्तव्य को भूल बैठते हैं। भगवान बुद्ध आदि बड़े-बड़े महात्माओं ने जीवों पर दयाकर अपने को संसार में अमर कर दिया है। आज भी उनके पवित्र नामों के पुण्य स्मरण से हृदय श्रद्धा से परिप्लावित हो उठता है। ऐसा भी देखा गया है कि हिंसक जन्तुओं ने भी मनुष्यों को इस दया प्रदर्शन का बदला भली-भाँति दिया है।

(३) मित्रता (Friendship)

परिभाषा—निस्वार्थ भावना से प्रेरित होकर दो हृदय के पारस्परिक और घनिष्ट मिलन-भाव को मित्रता कहते हैं किसी स्वार्थ भावना से प्रेरित होकर हृदय में उत्पन्न होनेवाले मिलने की इच्छा को सच्ची मित्रता नहीं कहेंगे।

उत्पत्ति—मनुष्य एक सामाजिक जीव है। इसलिए स्वभावतः मनुष्यमात्र का सुख और दुःख एक दूसरे पर निर्भर रहा करता है। मनुष्य आपस में हिलमिलकर रहना ही अधिक पसन्द करता है। इसी पारस्परिक मेल-मिलाप से मनुष्य के हृदयक्षेत्र में मित्रता का भावांकुर उगता है। जब यह भाव निस्वार्थ प्रेरणा से उत्पन्न होता है तब उसे सच्ची मित्रता कहते हैं और यही मित्रता स्थायी और सुखप्रद होती है परन्तु जब यह भाव किसी स्वार्थ की प्रेरणा के वशीभूत होकर उठता है, तब वह सच्ची मित्रता नहीं कहलाती और ऐसी स्वार्थ-पूर्ण मित्रता अधिक काल तक नहीं ठहर पाती। कभी-कभी तो इस ढंग की मैत्री बड़ी ही हानिकर सिद्ध हुई है।

उद्देश—जीवन को सुखी और आनन्दित करने के उद्देश से प्रत्येक मनुष्यों को मित्र बनाने की आवश्यकता पड़ती है जो सुख-दुःख में समभाव से उसका साथ देता है।

लाभ—मित्रता का सम्बंध आरोपित करने से मनुष्य का सुख बढ़ता और दुःख का नाश होता है। जब किसी मनुष्य को किसी काम में सफलता मिलती है तब उसके साथ-साथ उसके मित्र को भी असीम आनन्द प्राप्त होता है। यदि किसी कारण से मनुष्य दुःखी होता है तो उसके मित्र उसके प्रति सच्ची सहानुभूति

प्रदर्शित कर उसे धीरज देते हैं जिससे उसका दुःख हलका हो जाता है। जिसे कोई मित्र नहीं उसे सुख में पूरी प्रसन्नता नहीं होती और दुःख के समय दुःख और भी बढ़ जाता है। मित्र को मित्र की भलाई करने में ही अधिक सुख मिलता है। मनुष्य धन, वैभव आदि का भलीभाँति तभी उपभोग कर सकता है जब उसे मित्र होवे।

विपत्ति के समय मित्र बड़े काम की चीज होता है। नया काम प्रारम्भ करते समय मित्र की सम्मति वाञ्छनीय है। जब मनुष्य के सिर पर आफत की घटा मड़राने लगती है और उसे चारों ओर अंधकार ही अंधकार दृष्टिगोचर होता है तब ऐसी भयानक परिस्थिति, जटिल समस्या के अवसर पर मित्र ही उसे आपत्ति से बचाता है और अंधकार से प्रकाश में लाता है। जिस मनुष्य को मित्र नहीं है उसे विपत्ति के समय कोई अवलम्ब नहीं रहता।

प्रायः ऐसा देखा गया है कि संसार में बिना प्रयोजन कोई किसी से विरले ही प्रेम करता है। आत्मीय से आत्मीय जन भी किसी प्रयोजन से ही अर्थात् किसी अदृश्य स्वार्थ की ओट में ही एक दूसरे को प्रेम अथवा स्नेह की दृष्टि से देखता है; परन्तु सच्चा मित्र बिना किसी स्वार्थ के, बिना उपकार का बदला चाहे अपने मित्र की भलाई करता है। दुःख के समय सदा साथ देता है और सुख के समय अपने मित्र से भी अधिक सुखी मालूम पड़ता है। सारांश यह है कि सच्ची मैत्री स्वर्गीय आनन्द प्रदायिनी है, मनुष्यमात्र के कल्याण की प्रशस्त राह है और जीवन-यात्रा की एकान्त पथ-प्रदर्शिका है।

उपसंहार—प्रत्येक मनुष्य को मित्र बना लेना हानिकारक

है। इस पाखंड-पूर्ण संसार में, जहाँ आठों याम स्वार्थ का विपाक्त ववंडर तीव्र गति से बहता रहता है, अधिकांश ऐसे ही मित्र मिलते हैं जो टट्टी की ओट में शिकार खेलने के लिए मित्र बनने की धुन में लगे रहते हैं। ऐसे मित्रों से सदा सावधान रहना चाहिये। इस तरह के मित्र बड़े चाप-लूस और केवल सुख के साथी होते हैं। दुःख या आपत्ति के समय तो सपने की सम्पत्ति या गदहे के सींग हो जाते हैं। इस-लिए मनुष्य को चाहिये कि वह सभी के साथ अच्छा व्यवहार करे परन्तु मित्र उसी को बनावे जिसमें सच्ची मित्रता की लगन हो।

(४) माता-पिता की आज्ञा मानना

(To be obedient to the parent)

भूमिका—माँ-बाप की आज्ञा मानना मनुष्यमात्र का कर्त्तव्य है। माँ-बाप के उपकारों का बदला हम जन्म भर में भी नहीं दे सकते। माँ-बाप ने जन्म दिया। जन्म के बाद, जब हम चलने-फिरने, बोलने, खाने-पीने में सब तरह से असमर्थ थे तब माता ही हमारी जीवन-रक्षा का एकमात्र सहारा हुई। माता ने दूध पिलाकर लालन-पालन किया, कुछ बड़ा होने पर खाना-पीना सिखलाया। हमारे लिए सैकड़ों प्रकार के कष्टों का सामना किया। शीत, घाम और वर्षा किसी की भी परवाह न कर हमारी रक्षा की। माँ-बाप ने ही हमें बोलने, चलने और उठने-बैठने के लिए सिखाया। पढ़ा-लिखाकर चतुर बनाया। भला इतने पर भी माँ-बाप की आज्ञा मानना क्या हमारा कर्त्तव्य नहीं है?

लाभ—माँ-बाप की आज्ञा मानना प्रत्येक सन्तान का कर्त्तव्य

है। इससे लाभ की आशा करना मूर्खता ही है। हाँ, मनुष्य को इतना समझ लेना चाहिये कि अपना कर्त्तव्य पालन करने से जो लाभ हो सकता है, माँ-बाप की आज्ञा मानने से भी वही लाभ होना अनिवार्य्य है। दुनिया के सभी धर्मों में माँ-बाप की सेवा करना, उनकी आज्ञा का आदर करना धर्म का एक अंग माना गया है। तीर्थ-यात्रा से भी बढ़कर पुण्य घर बैठे माँ-बाप की आज्ञा मानने में है। तीर्थ-यात्रा में तो अनेकों प्रकार की शारीरिक और आर्थिक कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती हैं फिर भी उतना पुण्य नहीं होता जितना माँ-बाप के आज्ञा-पालन रूपी तीर्थ-यात्रा से होता है। अतएव माँ-बाप का आज्ञा-पालन सर्वोत्तम और सुलभ तीर्थ है। संसार में जितने महापुरुष हो गये हैं उनके महान् कार्य्यों पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट झलक जाता है कि अन्य महान् कार्य्यों के साथ-साथ माँ-बाप के प्रति अपना कर्त्तव्य-पालन भी उन महापुरुषों का एक प्रधान कार्य्य था। महाराजा रामचन्द्र की पितृभक्ति संसार में प्रसिद्ध है। छत्रपति शिवाजी की मातृभक्ति की प्रशंसा कौन नहीं करता। कहा जाता है कि माता के ही पुण्य-प्रसाद से वे इतने बड़े महान् और श्रेष्ठ व्यक्ति हो गये। मातृभक्त सिकन्दर मातृशक्ति के ही द्वारा विजयी सिकन्दर कहलाया। महादेव गोविन्द रानडे, जस्टिस गुरुप्रसाद वन्द्योपाध्याय आदि महापुरुष भी माँ-बाप के एकान्त सेवक थे। सारांश यह है कि माँ-बाप की सेवा करने से, उनके आशीर्वाद से, मनुष्य के हृदय में एक ऐसी महान् शक्ति का प्रादुर्भाव होता है जिसके द्वारा वह अपने गुरुतर कामों में भी सफलता प्राप्त कर मान, प्रतिष्ठा और अमर ख्याति को उपार्जन करने में समर्थ हो सकता है।

माँ-बाप के अकथनीय उपकारों को भूलकर जो मनुष्य माँ-बाप की आज्ञा को उपेक्षा करता है, माँ-बाप की सेवा नहीं करता उसके ऐसा मूर्ख और निर्दय संसार में दूसरा कौन होगा ? ऐसे व्यक्ति के हृदय में न तो कभी भक्ति, प्रेम और स्नेह का अंकुर ही उग सकता है और न दया का रस ही उमड़ सकता है। उसका हृदय पत्थर से भी अधिक कठोर हो जाता है और उससे कोई भी अच्छा काम नहीं हो सकता जिसका बुरा परिणाम एक न एक दिन उसे भोगना ही पड़ता है। औरङ्गजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को उनके अन्तिम समय में बड़ा कष्ट पहुँचाया था जिसके फलस्वरूप औरङ्गजेब की भी उसके अन्तिम समय में उसके पुत्रों द्वारा वही गति हुई।

उपसंहार—संसार में ऐसे भी मनुष्य पाये जाते हैं जो माँ-बाप को तुच्छ दृष्टि से देखा करते हैं। माँ-बाप का निरादर करने में ही अपने को प्रतिष्ठित समझते हैं। ऐसे पुरुष अपनी कर्त्तव्य-निष्ठा को भुलाकर पृथ्वी पर भारस्वरूप बनते हैं। आजकल के नये पढ़े-लिखे बाबुओं में प्रायः ऐसी कुत्सित भावना उठती हुई दिखाई देती है। ऐसी भावना का दमन होना बहुत ज़रूरी है।

(५) शारीरिक-व्यायाम (Physical exercise)

परिभाषा—शारीरिक शक्ति और स्वास्थ्य की वृद्धि के निमित्त आवश्यक कार्य्य के अतिरिक्त नियमित रूप से कुछ देर के लिए की जानेवाली अंगसंचालन प्रक्रियाओं को शारीरिक व्यायाम कहते हैं।

आवश्यकता—जिस प्रकार किसी यन्त्र के यों ही पड़े रहने से उसमें मोरचा लग जाता है उसी प्रकार यदि शरीर रूपी यन्त्र

के अवयवों से भी काम नहीं लिया जाय तो उससे नाना प्रकार की हानियाँ होती हैं और कुछ दिन में शरीर अकर्मण्य बन जाता है। इसलिए सभी श्रेणी के लोगों को अपनी शारीरिक शक्ति के अनुसार व्यायाम करने की आवश्यकता पड़ती है।

भेद—हमारे देश में दो प्रकार का व्यायाम-प्रचलित है—एक देशी व्यायाम दूसरा विदेशी व्यायाम। उठकी-बैठकी करना, घोड़े पर चढ़ना, दौड़ना, दण्ड करना, मुद्गर भाँजना, कुश्ती लड़ना, कबड्डी आदि देशी खेल खेलना, तैरना इत्यादि देशी व्यायाम हैं और फुटबाल, हाकी, क्रिकेट, टेनिस आदि विदेशी खेल खेलना, जमनास्टिक करना, डंबल साधना इत्यादि विदेशी व्यायाम हैं। यों तो दोनों प्रकार के व्यायाम स्वास्थ्य-सुधार के लिए लाभदायक हैं; परन्तु इस देश के जलवायु पर दृष्टि डालते हुए देशी व्यायाम ही हम लोगों के लिए अधिक उपयुक्त और लाभप्रद है।

लाभादि—व्यायाम करने से सभी अंग पुष्ट होते हैं। व्यायाम से यकृत की क्रिया सुचारु रूप से संचालित होती है जिससे पाचन-शक्ति और शोणित की वृद्धि होती है। और मलमूत्र के परित्याग में किसी तरह का विकार नहीं होता है। व्यायाम करने से शरीर के भीतर का मैल पसीने के रूप में बाहर निकल जाता है। जिससे शरीर शुद्ध और तनदुरुस्त रहता है। व्यायाम न करने से शरीर रूपी यन्त्र के यकृत, हृत्पिंड, पाकस्थली आदि पुरज़े बिगड़ जाते हैं। जिसके फलस्वरूप अंग प्रत्यङ्ग दुर्बल हो जाता है और शरीर अजीर्ण, मन्दाग्नि आदि नाना प्रकार के रोगों का घर बन जाता है। साथ ही शरीर में स्फूर्ति नहीं आती जिससे लोग आलसी हो जाते हैं।

विद्यार्थी साधुता को छोड़ निकृष्ट उपायों का अवलम्बन करते हैं। ऐसे छात्र नियमित रूप से अध्ययन नहीं करते, छल-प्रपंच से अपने वर्ग में काम निकाल लेते तथा परीक्षा के समय चोरी आदि बुरे कर्म करने को उतारू हो जाते हैं, मगर असल छिपा नहीं रहता। एक न एक दिन ऐसे असाधुओं की चालाकी प्रगट हो ही जाती है। भेड़ी की खाल में छिपे हुए भेड़िये का असली रूप प्रगट हो ही जाता है इसका परिणाम उन्हें भोगना ही पड़ता है। अगर मान लिया जाय कि ऐसे छात्रों की चालबाजी कभी प्रगट न हो और वे परीक्षाओं में सफल होते जायँ तोभी छात्र-जीवन समाप्त करने पर उन्हें अपनी अयोग्यता पर विचार कर अपने पूर्व कृत्यों पर पश्चात्ताप करना ही पड़ेगा। ऐसे छात्रों का जीवन कभी उन्नति की ओर अग्रसर हो नहीं सकता। इसके विपरीत जो छात्र असाधुता को ग्रहण नहीं करते मनोयोग पूर्वक अपना पाठ याद करते हैं उनकी दिन-दिन उन्नति होती जाती है। सारांश यह है कि छात्र-जीवन में भी साधुता या ईमानदारी की नीति ग्रहण करना ही श्रेयस्कर और लाभप्रद है।

कर्मक्षेत्र में ईमानदारी—इस कर्म-प्रधान संसार में कोई भी कार्य्य क्यों न किया जाय उसमें ईमानदारी की ही ज़रूरत पड़ती है। भले ही कोई-कोई अपनी चतुराई के द्वारा कुछ काल के लिए लोगों पर अपनी साख जमा ले, परन्तु ऐसे मनुष्य के प्रति लोगों के हृदय में तभी तक विश्वास जमा रहता है जब तक उसकी पोल नहीं खुलती। पोल खुल जाने पर कोई उसकी कदर नहीं करता और वह बेईमान के नाम से घोषित कर दिया जाता है, व्यवसाय, खेती, नौकरी आदि किसी भी पेशे में

बिना ईमानदारी के काम नहीं चल सकता। किसी-किसी का कहना है कि व्यापारिक क्षेत्र में बिना दगा फरेब के कामयाब होना मुश्किल है। परन्तु यह धारणा बिल्कुल निर्मूल है। व्यापार में 'साख' ही एक ऐसी चीज़ है जिसके उठ जाने से व्यापार में विकास होना एक दम असम्भव है और यह साख जमाना ईमानदारी या साधुता पर ही निर्भर करता है। हाँ, यह हो सकता है कि धूर्तता या चालाकी से एक-आध बार कोई दस-बीस हजार की पूंजी हड़प सकता है। परन्तु एक बार दिवालिया बन जाने से फिर दूसरी बार साख जमना असम्भव हो जाता है। सारांश यह है कि किसी काम में शानदार कामयाबी हासिल करना ईमानदारी पर ही निर्भर है। साधुता की नीति का अवलम्बन करने से ही निष्कलंक सफलता प्राप्त हो सकती है। राज्य, जमींदारी, शासन-विभाग, देश, समाज और जाति का नेतृत्व ग्रहण करनेवाले व्यक्तियों के लिए तो बिना ईमानदारी के एक पग भी आगे बढ़ना दुश्वार हो जाता है।

उपसंहार—यह स्पष्ट देखने में आता है कि अभ्यास या बेईमानी से उपार्जन की हुई चीज़ें, चाहे वे धन, प्रतिष्ठा या मान किसी भी रूप में क्यों न हों, स्थायी रह नहीं सकतीं और इस ढंग से उपार्जन करनेवालों को कभी सन्तोष भी नहीं होता। बराबर हाय-हाय लगी ही रहती है। कहा भी है—

अन्यायोपार्जित जुधन, दसै वर्ष ठहराय।
वर्ष एकादश लागते, जरा मूल सों जाय॥

(ग) कार्य्य का फलाफल

(१) बालविवाह (Early marriage)

भूमिका—भारतवर्ष में माँ-बाप बिना कुछ विचारे छुटपन में

ही अपनी सन्तान को विवाह के जटिल बंधन में जकड़ देते हैं। बाल-विवाह से होनेवाले कुपरिणामों पर वे जरा भी दृष्टि नहीं डालते। फलतः नानाप्रकार की आधि-व्याधि फैलती जा रही है।

कारण—प्राचीन समय में हमारे देश में इस कुप्रथा का प्राबल्य नहीं था। वैदिक विवाह का आदर्श बड़ा ही उत्तम था। सयाने होने पर ही लड़की और लड़के वैवाहिक सूत्र में बाँधे जाते थे। लोगों का अनुमान है कि मुसलमानी राजत्वकाल से ही इस कुप्रथा का यहाँ सूत्रपात हुआ। यह कहना कठिन है कि इस प्रथा के प्रचलन का प्रधान कारण क्या है। हाँ, इतना अनुमान किया जा सकता है कि हिन्दू-समाज का क्रमागत पतन ही बाल-विवाह तथा अन्य सामाजिक कुरीतियों के फैलने का मुख्य कारण है। किसी-किसी का कहना है कि मुसलमानों के अत्याचार से बचने के लिए ही हिन्दू-समाज में बाल-विवाह की पद्धति चल निकली। परन्तु यह केवल कल्पना मात्र है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह सिद्धान्त विचारशून्य प्रतीत होता है। इसके प्रचलन का कारण कुछ भी रहा हो पर इतना तो जरूर है कि आज इस सामाजिक अन्धपरम्परा ने लोगों के मन में इस प्रकार का अन्धविश्वास जमा दिया है कि लोग बाल-विवाह करना अपना धर्म्म मान बैठे हैं। सयानी लड़की-लड़कों की शादी करना अपनी प्रतिष्ठा, मान और धर्म्म के विरुद्ध समझते हैं। हिन्दूधर्म्म के ठेकेदार ब्राह्मणों ने भी नये-नये पुराणों का आविष्कार कर बाल-विवाह की पद्धति को प्रामाणिक सिद्ध कर दिया है। लड़की-लड़कों का जीवन भले ही नष्ट हो, समाज, जाति और देश भले ही पतन की गहरी खाई में गिर जायँ, हमारे पुरोहितों को इससे

क्या प्रयोजन। उन्हें तो केवल अपना उल्लू सीधा करने की ही फ़िक्र लगी रहती है।

विशेष विवरण—हमारे हिन्दू-समाज में बाल-विवाह की प्रथा इस तीव्र गति से फैल गयी है कि १२ वर्ष से अधिक उम्र के लड़के और ८ वर्ष से अधिक उम्र की लड़की का अनब्याहा रह जाना बड़ी ही लज्जा की बात समझी जाती है। किसी-किसी जाति में तो तीन-तीन चार-चार वर्ष में ही लड़की-लड़कों की शादी कर दी जाती है। कहीं-कहीं तो यहाँ तक देखा गया है कि १८ महीने की दुधमुँही बच्ची तक की शादी कर दी गई है। इससे बढ़कर और अनर्थ क्या हो सकता है? ऐसी दशा में, जब कि लड़की और लड़के विवाह के मंत्रों का उच्चारण भी नहीं कर पाते हैं, इस प्रकार का विवाह क्या सच्चा विवाह कहा जा सकता है?

परिणाम—बाल-विवाह से लाभ तो एक भी दृष्टिगोचर नहीं होता। हाँ, अगर हानियों की मर्दुमशुमारी की जाय तो सौ से भी अधिक हानियाँ दिखाई पड़ेंगी। बाल-विवाह से लड़के-लड़कियाँ दोनों का जीवन नष्ट हो जाता है। विवाह होने के बाद लड़के के सिर पर एक ऐसा भार दे दिया जाता है कि वे उस बोझ से दब कर अपना पढ़ना तो छोड़ ही देते हैं; साथ ही अपने स्वास्थ्य से भी हाथ धो बैठते हैं। न तो शरीर में तेज ही रहता है और न शक्ति। उनका मानसिक और शारीरिक विकास बिल्कुल ही रुक जाता है। वे निकम्मे हो कर मृत्यु की अन्तिम घड़ियों की प्रतीक्षा करने लगते हैं। यही कारण है कि हजारों विवाहिता बालिकायें अपने सौभाग्य

को नष्ट कर सदा के लिए वैधव्य की कठोर यन्त्रणा का शिकार हो जाती हैं जिससे अनेक प्रकार के अत्याचार और व्यभिचार आदि होते रहते हैं। बाल-विवाह के ही कारण देश के बच्चे निस्तेज और संस्कार-हीन हो गये हैं। इसी राक्षसी प्रथा के कारण हम अपना बल, पराक्रम सभी कुछ खोकर अविद्या के घने अन्धकार में पड़े हुए हैं। इतने पर भी हमें इतना चेत नहीं होता कि इस सामाजिक कोढ़ को दूर कर समाज को पतित होने से बचावें।

उपसंहार—इधर कुछ वर्षों से हमारे शिक्षित समुदाय में इस नाशकारी प्रथा के दूर करने का भाव जागृत हुआ है। इनके प्रयत्न से बहुत स्थानों में बाल-विवाह होना रुक भी गया है। बड़ौदा, मण्डी आदि देशी रियासतों में कानून बनाकर बाल-विवाह रोकने का प्रयत्न किया गया है। देखें, कहाँ तक सफलता मिलती है। बङ्गाल, गुजरात आदि प्रान्तों में भी बाल-विवाह को रोकने में बहुत कुछ सफलता मिली है। इधर बड़े लाट की कौंसिल में भी श्रीयुत हरिप्रसाद शारदा के भगीरथ प्रयत्न से एक ऐसा कानून बनने जा रहा है जिसके अनुसार १२ वर्ष से कम उम्र की लड़कियों और १६ वर्ष से कम उम्र के लड़कों का ब्याह करना जुर्म करार दिया गया है।

(२) नशे से हानि

अभ्यास—नशा पीने या खाने की आदत लोगों में दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। नशेबाजों का कहना है कि नशा का व्यवहार करने से शरीर में स्फूर्ति आती है और काम करने में मन लगता है। लेकिन यह बात बिल्कुल निराधार है। हाँ,

इतना जरूर है कि नशा पीने से शरीर में एक प्रकार की गर्मी पैदा होती है जिससे क्षणिक स्फूर्त्ति आ जाती है परन्तु आदत पड़ जाने से इसका परिणाम बड़ा ही भयङ्कर होता है। एक बार नशा व्यवहार करने से इसकी आदत पड़ ही जाती है। क्योंकि नशा पीने या खाने से तज्जन्य क्षणिक स्फूर्त्ति का अंत होते ही शरीर शिथिल हो जाता है और फिर स्फूर्त्ति लाने की गरज़ से नशे का ही व्यवहार करना पड़ता है। इस प्रकार लोगों को इसका अभ्यास पड़ जाता है। नशा पीने से शरीर में एक प्रकार की मस्ती आ जाती है जिसे 'खुमारी' कहते हैं। जब मनुष्य का नशा नहीं उतरता है तो उसे उतारने के लिए केवल एक ही उपाय है। वह यह है कि उसी नशीली वस्तु का फिर व्यवहार करे। ऐसा करने से नशा तुरत उतर जाता है और नशेबाजों को आनन्द प्राप्त होता है। उसी आनन्द का अनुभव करने के लिए फिर-फिर इसका व्यवहार करना पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि बिना नशा के ऐसे मनुष्य को क्षण भर भी कल नहीं पड़ता है और इस तरह अभ्यास बढ़ाते-बढ़ाते वह नशेबाज की श्रेणी में पहुँच जाता है।

हानि—रसायनशास्त्र के विद्वानों ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि प्रायः सभी नशे में एक प्रकार का विष रहता है जिसे अङ्गरेजी में 'नारकोटिक' कहते हैं। यह बड़ा भयङ्कर होता है। इस विष से बड़ी हानि होती है। शरीर का रक्त बिगड़ जाता है। अंग प्रत्यंग शिथिल हो जाते हैं। नशा उतर जाने पर काम करने में जी नहीं लगता। पाचन शक्ति बिगड़ जाती है तथा नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते रहते हैं। रात में नींद नहीं आती और लोग धीरे-धीरे निर्बल और निकम्मे हो जाते हैं। जिसे नशे

आदत पड़ जाती है अगर वह उसे छोड़ना चाहता है तो छोड़ना प्रलय हो जाता है। नशे के बिना उसके प्राण निकलने लगते हैं। नशेबाज को अगर कोई रोग रहा तो वह जल्दी छूटनेवाला नहीं। नतीजा यह होता है कि ऐसा मनुष्य शीघ्र ही मृत्यु का शिकार बन जाता है। मृगी, यकृत-विकार, पक्षाघात आदि रोग मादक द्रव्य व्यवहार करनेवाले लोगों को अधिकतर होते हैं।

नशेबाज आदमी अपने दूषित काम में इस प्रकार मस्त रहता है कि घर की कुछ भी परवाह नहीं करता। उसे मेहनत कर पेट भरना अच्छा नहीं लगता। दिनरात नशेबाजों की टोली में बैठकर गप्प उड़ाने में ही उसे आनन्द मिलता है। कभी घर आता है तो घरवालों को तङ्ग कर छोड़ता है। अगर उसे अच्छा भोजन और नशे के लिए पैसे न मिले तो घर में खुराफात मचा देता है। घर की धन-सम्पत्ति को नशे के पीछे पानी की तरह बहा देता है। जब कुछ नहीं रहता तो घर की चीजों को गिरों रखकर, स्त्रियों के आभूषणों तक को बेचकर वह नशा पीने की बलवती तृष्णा को शान्त करने की कोशिश करता है। परन्तु यह तो ऐसी तृष्णा है कि मरने के बाद ही शांत हो सकती है। घर में कुछ नहीं रहने पर पैसे के लिए वह जुआ, चोरी आदि कुकर्म में फँस जाता है। लात घूँसों से अच्छी तरह मरम्मत किये जाने पर भी, सड़कों और गलियों में बेतरह ठोकर खाते रहने पर भी वह अपनी कुटेव नहीं छोड़ता। अंत में धन-सम्पत्ति नष्ट कर, अपने अमूल्य स्वास्थ्य को बिगाड़कर जब वह मृत्युशय्या पर पड़ रहता है तब भी नशे की ही रट लगाता रहता है—इसी का स्वप्न देखता रहता है। नशेबाजों का प्रभाव उसकी सन्तान पर भी बड़ा बुरा पड़ता है। नशेबाज की सन्तान

भी अपने बाप दादे की प्रकृति को अख्तियार करने में बाज नहीं आती ; देखा देखी इसी कुटेव में पड़ अपने जीवन को नष्ट कर देती है। नशे के प्रभाव से सदाचारी मनुष्य भी दुराचारी हो जाते हैं, समाज का समाज उन्मत्त हो पतित हो जाता है, देश का देश चौपट हो जाता है। अफीम के नशे के अभ्यास से ही चीनवालों ने अपने देश को पतन की गहरी खाईं में गिरा दिया है। अफीमची चीन की दशा इसी कारण आज बड़ी ही बुरी हो गयी है।

नशीला द्रव्य—शराब, अफीम, गाँजा, कोकीन, चण्डू, चरस आदि नशे बड़े ही भयङ्कर होते हैं। इनके अतिरिक्त सिगरेट, तम्बाकू, भाँग, नस, आदि भी कम हानिकारक नहीं हैं। चाय और कहवा भी नशीले द्रव्य की श्रेणी में गिने जाते हैं।

नशे से लाभ—कभी-कभी नशीली चीजों से लाभ भी होता दिखाई पड़ता है। लड़ाई के अवसर पर सेना का शराब पीना बुरा नहीं माना गया है। परन्तु वह भी परिमाण पर निर्भर करता है। परिमाण से अधिक पी लेने से सेना मतवाली होकर लड़ने के योग्य नहीं रह जाती। नशीली चीज़ों से कई प्रकार की औषधियाँ भी बनायी जाती हैं। पर नशे से होने वाली हानियों पर दृष्टिपात करते हुए कहना पड़ता है कि इससे कुछ भी लाभ नहीं है।

उपसंहार—इधर कई देशों में नशा पीने का, विशेष कर शराब पीने का अभ्यास रोकने का प्रयत्न किया जा रहा है। रूस और अमेरिका में भी कानून के द्वारा नशा पीने की बढ़ती हुई आदत को सीमित करने की कोशिश हो रही है। हमारे देश में अब तक इसके लिए यथेष्ट प्रयत्न नहीं हो रहा है

लोगों को चाहिये कि नशे के भयंकर परिणामों पर ध्यान देते हुए इसका व्यवहार कम करने की कोशिश करें। हमारे यहाँ तो नशे का व्यवहार करना धर्म्म-विरुद्ध बताया गया है पर धर्म्म की बात सुननेवाले भी तो बहुत कम ही मिलते हैं।

—जयश्री पाठक

(घ) तुलनात्मक लेख (Comparative essays)

विषय-विभाग—(१) भूमिका—इसमें दो तुलनात्मक वस्तुओं का परिचय रहता है। (२) एक के गुण और दोष (३) दूसरे के गुण और दोष। (४) उपसंहार।

(१) शहर और गाँव (Town *vs.* Village)

भूमिका—वाणिज्य, व्यवसाय, नौकरी आदि सुविधाओं के निमित्त जिस स्थान पर हर वर्ग के लोग एकत्र होकर रहते हैं उसे शहर और जिन अन्य सभी स्थानों में अल्पसंख्यक लोग बसते हैं उन्हें गाँव कहते हैं। जो शहर में रहने के अभ्यस्त हैं उन्हें गाँव की अपेक्षा शहर में ही विशेष सुविधा मिलती है। उनको शहर में ही रहना पसन्द पड़ता है। इसके विपरीत गाँव में बसनेवालों के लिए ग्रामीण जीवन ही विशेष आनन्दप्रद मालूम पड़ता है।

शहर में सुविधा—(१) शहर के घाट मार्ग आदि प्रशस्त और परिष्कृत रहा करते हैं। वर्षा के समय सड़कों पर अधिक कीचड़ नहीं रहती। गमनागमन की विशेष सुविधा रहती है। तरह-तरह की सवारी का बन्दोबस्त रहता है। (२) प्रत्येक शहर किसी नदी अथवा रेलवे स्टेशन के समीप रहता है। इसीलिए वहाँ वाणिज्य-व्यवसाय करने में बड़ी सहायता मिलती है।

व्यवसाय करने के लिए सहज में ही द्रव्य मिल जाता है। घनी जनसंख्या रहने के कारण खरीद-बिक्री खूब होती है और बड़े बड़े महाजनों, व्यापारियों और सेठ-साहूकारों के बसने के कारण छोटे-छोटे व्यवसायियों को बड़ी सहायता मिलती है। (३) शहर में बड़े-बड़े अनुभवी डाक्टर, वैद्य और हकीम रहा करते हैं जो आवश्यकता पड़ने पर सुगमता से बुलाये जा सकते हैं। (४) यहाँ शिक्षा का उत्तम प्रबंध रहता है। बड़े-बड़े स्कूल और कालिजों के रहने के कारण लड़के लड़कियों को पढ़ने में बड़ी सुविधा मिलती है। इनके अतिरिक्त पुस्तकालय, वाचनालय आदि अनेक प्रकार की शिक्षा सम्बंधी संस्थाएं रहती हैं जिनमें हर प्रकार की पुस्तकें और समाचार पत्रादि पढ़ने को मिलते हैं। (५) शहर के लोग आठों पहर कार्य में व्यस्त रहते हैं जिसके प्रभाव से आलसी भी कर्मण्य हो जाते हैं। (६) आमोद-प्रमोद के लिए नाना प्रकार का प्रबंध रहता है। परदेशियों की सुविधा और आराम के लिए धर्मशाला, होटल, सराय आदि बनी रहती हैं। (७) शहर में शिक्षितों के सम्पर्क से आत्मोन्नति में विकास होता है तथा हर ढंग के लोगों के साथ ससंर्ग होते रहने के कारण लोगों की बुद्धि तीक्ष्ण होती और काम की शक्ति बढ़ती है। (८) शहर में कल कारखाने, अदालत, आफिस तथा फैक्टरियों की भरमार रहती है जिनके कारण नौकरियाँ अधिक मिलती हैं।

शहर में असुविधा—(१) शहर में शुद्ध हवा नहीं मिलती। धूल और धुएँ से हवा विकृत हो जाती है। (२) घनी आबादी के कारण जल-वायु शुद्ध और स्वास्थ्यकर नहीं रह पाता। (३) सड़कों पर असंख्य लोगों, गाड़ियों आदि के चलते रहने के कारण धक्का से अनेक दुर्घटनाएं होती रहती हैं। (४)

शहर का निवास बड़ा ही खर्चीला है। पग-पग पर रुपये की आवश्यकता पड़ती है। लोगों में सादगी का प्रायः अभाव रहता है। (५) शहर प्रलोभन और विलासिता का अड्डा है। पग-पग पर जान का खतरा बना रहता है। (६) गाड़ी, घोड़ा, रेल, मोटर आदि के चलते रहने के कारण शहर का वातावरण हर समय कोलाहलपूर्ण और अशांत बना रहता है। (७) शहर में प्राकृतिक दृश्य का बिल्कुल अभाव रहा करता है। खेतों की हरियाली, वसन्त की वसन्तश्री, वर्षा की अपूर्व बहार आदि का यहाँ दर्शन कहाँ? (८) स्थान-स्थान के लोगों के आवागमन के कारण शहर में प्लेग, हैजा, बेरी-बेरी आदि रोगों का बराबर दौर-दौरा रहा करता है।

ग्राम में सुविधा—(१) गाँव की हवा निर्मल और शुद्ध रहती। गाड़ी, घोड़ा आदि की कमी के कारण वायुमंडल धूल-विहीन रहता है। (२) जनसंख्या घनी न रहने के कारण वायु श्वास-प्रश्वास के द्वारा कम दूषित होता है और वृक्षों की अधिकता के कारण वह और भी परिष्कृत और निर्मल रहा करता है। इसी कारण गाँव का जल वायु शहर की अपेक्षा अधिक स्वास्थ्यकर रहता है। (३) ग्रामीण जीवन बिल्कुल सरल और निरापद है। सड़कें कोलाहलपूर्ण नहीं रहतीं; इस लिए किसी प्रकार की आकस्मिक दुर्घटना की अधिक सम्भावना नहीं रहती। (४) खाने की अधिकांश चीजें गाँव में ही उत्पन्न होती हैं। अतएव गाँव में शहर की अपेक्षा अनाज, फल, तरकारी, दूध, दही आदि चीजें सस्ते भाव पर मिलती हैं। (५) गाँव में प्रलोभन की मात्रा कम रहती है। गाँववाले थोड़े ही में सन्तोष कर सीधे-सादे जीवन व्यतीत करते हैं। विलासिता

सीमित रहती है। (६) शान्तिप्रिय तथा एकान्तप्रेमी मनुष्यों के लिए ग्रामीण जीवन बड़ा ही आनन्दप्रद है। भावुक साधक लोग भी गाँव में रहना विशेष पसन्द करते हैं क्योंकि ग्रामीण जीवन शांत और कोलाहल रहित है। (७) गाँव में प्राकृतिक सान्दर्य्य रहता है। प्रकृति देवी भिन्न-भिन्न तरह की क्रीड़ा करती रहती हैं। छवों ऋतुओं की बहार देखकर आँख और मन सन्तुष्ट रहते हैं। (८) गाँव में देश देशान्तर के लोगों का आवागमन कम रहता है इसलिए आधि-व्याधि का दौर-दौरा भी शहर की अपेक्षा कम रहता है। अब भी भारत में बहुत से ऐसे गाँव हैं जहाँ हैजे और प्लेग का कभी प्रकोप हुआ ही नहीं है।

गाँव में असुविधा—(१) गाँव में आवागमन की सुविधा नहीं है। सड़कें ठीक नहीं रहतीं। वर्षाकाल में तो नदी नालों आदि में पानी आ जाने के कारण घाट मार्ग आदि बिलकुल बन्द हो जाते हैं। अतएव उस समय तो घर से कहीं निकलने का उपाय ही नहीं रहता। (२) आवागमन की विशेष सुविधा न रहने के कारण वाणिज्य-व्यवसाय की वृद्धि नहीं होती। खरीद-बिक्री के लिए कोई उत्तम साधन नहीं। (३) गाँव में डाक्टरों, वैद्यों और हकीमों का अभाव रहता है। कभी-कभी तो इनके अभाव से रोगी असमय में ही मृत्यु के मुँह में विलीन हो जाते हैं। (४) गाँव में बालकों को उच्च शिक्षा देने का कोई साधन नहीं मिलता। स्कूलों के अभाव के कारण कितने कुशाग्र बुद्धि और होनहार बालक अपना विकास नहीं करते। (५) गाँव में कार्यशीलता नहीं रहती। अधिक लोग बेकार रहते हैं और दस-पाँच एक स्थान पर बैठकर केवल गप्प लड़ाया करते हैं। फल स्वरूप उनमें आलस्य और जड़ता आ जाती है। (६)

मेहनत मजूरी करनेवालों की थकावट दूर करने के लिए आमोद-प्रमोद करने तथा मन बहलाने का कोई उपाय नहीं मिलता। (७) गाँव में अच्छे-अच्छे व्यक्तियों का सम्पर्क न होने से वहाँ वालों के हृदय में संकीर्णता घर बना लेती है। फल स्वरूप गाँव के लोग अन्धविश्वासी अधिक होते हैं। उन्हें दुनिया की हवा नहीं लगने पाती। कूपमंडूक बने रहते हैं। उनके मन और बुद्धि का विकास नहीं हो पाता। (८) गाँव में कल-कारखाने, आफिस, कचहरी, फैक्टरियाँ आदि न रहने के कारण लोगों को नौकरी नहीं मिलती। (९) गाँव में पुस्तकालय, वाचनालय आदि प्रायः नहीं रहते हैं। पुस्तक, समाचार-पत्रादि पढ़ने का अभाव रहता है। समाचार-पत्र न मिलने के कारण दुनिया के समाचारों से गाँववाले कोरे रहते हैं। किसी-किसी का कहना है कि गाँव में ही अधिक सुख है। इसमें सन्देह नहीं कि ग्रामीण जीवन सुखकर जीवन है परन्तु सच तो यह है कि गाँववाले अपनी जड़ता के कारण उस सुख का अनुभव नहीं कर पाते। उस सुख का भी अनुभव शहरवाले ही करते हैं। छुट्टी आदि के मिलने पर शहर में रहनेवाले गाँव में आते और ग्रामीण सुखों को लूटकर फिर शहर चले जाते हैं।

उपसंहार—शहर और गाँव दोनों जगह रहने की सुविधाओं और असुविधाओं का दिग्दर्शन करा दिया गया। उपर्युक्त दोनों पक्षों की सुविधाओं और असुविधाओं पर दृष्टिपात करते हुए तथा समय का ख्याल करते हुए यह कहना ही पड़ता है कि इस बीसवीं सदी में सैद्धान्तिक दृष्टि से भले ही ग्रामीण जीवन पवित्र और सुखप्रद माना जाय परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से शहर का वास ही उत्तम है।

(२) सम्मिलित परिवार और वैयक्तिक परिवार

(Joint family *vs.* Individual family)

भूमिका—अपने बन्धु-बान्धव, आत्मीयजनों तथा कई परिवारों के मिलकर रहने को सम्मिलित परिवार कहते हैं और अकेले केवल अपने स्त्री-पुत्र के साथ रहने को वैयक्तिक परिवार।

सम्मिलित परिवार से सुविधा—कई परिवारों के मिल कर एक साथ रहने में परस्पर प्रेम-भाव उत्पन्न होता है। जीवन सुखमय और आनन्दप्रद होता है। किसी काम को करने में पारस्परिक सहानुभूति और सहायता प्राप्त होती है। कठिन से कठिन काम भी सहयोग से सुलभ हो जाता है। थोड़े समय में अधिक काम होता है। बहुत लोगों के साथ मिलकर रहने में शक्ति बढ़ती है। शत्रुओं का भय कम रहता है। कोई कठिनाई पड़ने पर एक दूसरे की सहायता सुलभ होती है। बीमारी आदि आपत्ति के समय एक को दूसरे की सेवा करने का अवसर मिलता है। संकट या दुःख पड़ने पर सब के मिले रहने से उसे सहन करने में विशेष कठिनाई नहीं होती। सभी आपस में मिलकर हँसते-हँसते दुःख झेल लेते हैं। अबल और अर्थ-हीन को भी अपने सबल और धनी बन्धु की सहायता मिलती रहती है। इस प्रकार सम्मिलित परिवार से अनेक लाभ हैं।

सम्मिलिति परिवार से असुविधा—जहाँ सम्मिलित परिवार से अनेकों प्रकार के लाभ हैं वहाँ हानि भी है। जिस परिवार में अधिक मनुष्य रहते हैं वहाँ प्रेम के साथ द्वेष का भी अंकुर उग जाता है। एक सम्मिलित परिवार में जो अधिक परि-

श्रम करता है उसे कम परिश्रम करनेवाले अथवा बैठे-बैठे खाने वाले के प्रति स्वाभाविक डाह होता है। फलस्वरूप आपस में कलह होता रहता है। स्वार्थ का भाव होने से ही वैर-फूट के पौदे उगने लगते हैं। सम्मिलित परिवार में प्रायः ऐसा देखा जाता है कि काम करनेवाले थोड़े ही होते हैं और खानेवाले बहुत रहते हैं इससे अर्थोपार्जन उतना नहीं हो सकता जितना वैयक्तिक परिवार में अलग-अलग काम करने से। सम्मिलित परिवार में ऐसे व्यक्ति जो काम से जी चुराना चाहते हैं आलसी और अकर्मण्य हो जाते हैं। इससे व्यक्तिगत उन्नति में बाधा होती है।

वैयक्तिक परिवार से सुविधा—अलग अलग परिवार में रहने से अर्थोपार्जन में विशेष सहायता मिलती है। जहाँ सम्मिलित परिवार में थोड़े ही लोग परिश्रमी होते हैं वहाँ वैयक्तिक परिवार में आवश्यकता के वश में होकर प्रत्येक व्यक्ति कर्मशील हो जाते हैं। स्वावलम्बन का भाव लोगों में आता है। सम्मिलित परिवार में रहते हुए तज्जन्य गृह-कलह से लोगों की रक्षा होती है। देश के धन की वृद्धि होती है। अपना विकास करने का अच्छा अवसर हाथ आता है।

वैयक्तिक परिवार से असुविधा—अलग-अलग परिवार में रहने से पारस्परिक प्रेम और सहानुभूति का अभाव हो जाता है। सम्मिलित परिवार में रहने से एक दूसरे की सहायता का जो अवसर प्राप्त हो सकता है वैयक्तिक परिवार में वह अपूर्व अवसर नहीं मिलता। जीवन उतना सुखप्रद और आनन्ददायक नहीं हो पाता। हृदय में भावुकता का बिल्कुल अभाव रहता है। स्वार्थ और अपनेपन का भाव हृदय में उत्पन्न हो जाता है। सारांश यह है कि वैयक्तिक परिवार में सब से भारी असुविधा यह है कि पारि-

वारिक जीवन विताते हुए जो प्रेम-प्रदर्शन का स्वर्गीय अवसर मिलता है वह अवसर मिलना दुर्लभ हो जाता है।

उपसंहार—उपर्युक्त दोनों पक्षों की सुविधाओं और असुविधाओं पर दृष्टि-पात करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवन की सार्थकता इसीमें है कि सम्मिलित परिवार में रहकर ही जीवन व्यतीत करे। हाँ, इतना अवश्य ध्यान में रखना चाहिये कि सम्मिलित परिवार में स्वार्थ का भाव घुसने न पावे। आपस में द्वेष बढ़ने न पावे। इसके लिए नीतिपूर्ण शासन की आवश्यकता है, चतुर गृह-स्वामी की ज़रूरत है।

अभ्यास

निम्नलिखित विषयों पर लेख लिखो।

Write short essays on :

(१) साहस (Courage), अध्यवसाय (Perseverance), कर्त्तव्य (Duty), सच्चरित्रता (Good-Manners), अभिमान (Pride) और स्वच्छता (Cleanliness).

(२) अंगरेज़ी शिक्षा से लाभ (Advantages of English education), समय का सदुपयोग (Right use of time) और भारत में बृटिश शासन (British Rule in India).

(३) एकता ही बल है (Union is strength), ज्ञान ही बल है (Knowledge is power), Rome was not built in a day, एक तन्दुरुस्ती हज़ार नियामत, Habit is second nature and make hay while the sun shines.

(४) उपन्यास और नाटक, आत्मबल और पशुबल तथा मुगल-शासन तथा बृटिश-शासन ।

षष्ठ परिच्छेद

विश्लेषणमूलक लेख

(Expository essays)

विषय-विभाग—(१) भूमिका, (२) इतिहास या विशेष वर्णन, (३) विकास और (४) लाभ हानि।

(१) मुद्रण-यन्त्र (Press)

भूमिका—जिस यन्त्र से पुस्तकादि छापी जाती हैं उसे मुद्रण-यन्त्र कहते हैं। मुद्रण-यन्त्र ने संसार का जैसा उपकार किया और कर रहा है वैसा किसी भी शिल्प यन्त्र से सम्भव नहीं है।

इतिहास—लोगों का अनुमान है कि मुद्रण-यन्त्र का आविष्कार पहले पहल चीन देश में हुआ था। अति प्राचीन काल में, ऐसीरिया और वैविलोनिया देश में ईंट आदि पर अक्षर खोदकर उससे थोड़ा-बहुत छापने का काम होता था। उसके बाद काठ पर अक्षर खोदकर उससे छापने का काम लिया जाने लगा। अंत में धातु के टाइप ढाले गये जो इन दिनों काम में आ रहे हैं। काठ पर अक्षर खोदने का काम खीष्ट के ५६ वर्ष पहले चीन में प्रारम्भ हुआ था। चीन की देखा देखी योरोपवाले भी छापे का काम जानने के लिए उत्सुक हो उठे। योरोपवाले चीनवालों से और भी अधिक सुगम आविष्कार की धुन में लग गये। फल-

स्वरूप सन् १४०० ई० में योरोप में मुद्रण-कार्य्य प्रारम्भ हुआ। सन् १४३६ से सन् १४३९ ई० के अन्तर्गत योरोप में कैस्टर और गर्टन वर्ग नामक दो आविष्कारकों ने भिन्न-भिन्न मुद्राङ्कन प्रणाली का आविष्कार किया। वे दोनों पहले काठ के पट्टे पर बहुत से शब्द एक ही साथ खोदकर बड़े-बड़े पेज तक छाप लेने की विधि में बड़े निपुण हो गये। तदुपरान्त धीरे-धीरे सारे योरोप में इस विधि की उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी।

विकास—सोलहवीं सदी के प्रारम्भ होते न होते जर्मनी के लोगों ने इस ओर ध्यान देना आरम्भ किया। तभी से वहाँ वाले इस कला में निरन्तर उन्नति करते रहे। शेफर, स्टोनहोप आदि चतुर कारीगरों के प्रयत्न से वहाँ छापने के लिए लोहे का यन्त्र बना और धातु के अक्षर ढालने का काम भी प्रारम्भ हुआ। १९ वीं सदी के प्रारम्भ में वाष्प-शक्ति की सहायता से एक ऐसा मुद्रण-यन्त्र तैयार किया गया जिसमें दो हजार पृष्ट तक की पुस्तक एक ही घण्टे में छपने लगी। कुछ कालोपरान्त बिजली की सहायता से छापे का यन्त्र संचालित होने लगा। तब तो १६ पेजी समाचार-पत्र की पचपन हजार कापियाँ प्रति घण्टे छपने लगीं। धीरे-धीरे इसकी असीम उन्नति हुई। अब तो यह उन्नति के शिखर पर जा चढ़ा है। छापे के सम्बन्ध के सभी अंग पुष्ट हो गये। इतने पर भी सन्तोष नहीं हुआ है। वैज्ञानिक इस यन्त्र को और भी सुदृढ़ और सुरूपेण संचालित बनाने की फिक्र में परीशान हैं।

उपकार—जब तक दुनिया मुद्रण-यन्त्र से अपरिचित थी तब तक पढ़ने-लिखने में बड़ी असुविधा होती थी। संसार के लोग कितने सद्ग्रन्थों से अनभिज्ञ थे। हस्त-लिखित पुस्तकों का

प्रचार कम था। क्यों न हो, हाथ से लिख लिखकर लोग कहाँ तक अपनी पुस्तकों का प्रचार कर सकते हैं। किसी ग्रन्थ को लिखने में वर्षों तक लग जाते थे। उसका प्रचार सैकड़ों वर्ष में भी बड़ी कठिनता से न हो पाता था। मगर इस परमोपकारी यन्त्र ने इस कठिनता को दूर कर दिया। मुद्रण-यन्त्र के अभाव से ही हमारे असंख्य प्राचीन बहुमूल्य ग्रन्थ विलुप्त हो गये। इस मुद्रण-यन्त्र से तो पुस्तक के छपते न छपते भूमण्डल की एक ओर से दूसरी छोर तक झट उसका प्रचार हो जाता है। जिससे लोगों का महान् उपकार हुआ और हो रहा है। मुद्रण-यन्त्र के आविष्कार से नाना प्रकार की उपयोगी पुस्तकें और समाचार-पत्र पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है जिससे सारे संसार में उन्नति की धूम मच गयी है। समाचार-पत्रों पर तो दुनिया का सारा व्यापार ही निर्भर कर रहा है। हमारी कूपमंडूकता दूर हुई जा रही है। कितने देश मुद्रण-यन्त्र से हुए लाभों का उपभोग कर उन्नति के ऊँचे शिखर पर पहुँच चुके हैं। मुद्रण-यन्त्र मानव जाति की सुख स्वच्छन्दता का एक प्रधान कारण हो गया है। सारांश यह है कि इस यन्त्र से संसार को जो लाभ हो रहा है उसका वर्णन हो नहीं सकता। यह यन्त्र हमारी भूत की पुण्य स्मृतियों की रक्षा कर भूत काल के गौरव पर ध्यान दिला, वर्तमान काल की दशा का हूबहू चित्र सामने खींच भविष्य-जीवन को प्रशस्त और विकसित बनाने के निमित्त हमारी आँख खोलकर अन्धकार से प्रकाश में लाया। अज्ञान की ओर से ज़बरदस्ती ज्ञान की ओर खींच लाया।

हानि—मुद्रण-यन्त्र से जहाँ सैकड़ों लाभ हो रहे हैं वहाँ दो-चार हानियाँ भी हो रही हैं। मुद्रणकला का प्रचार होने से लोग

मनमानी पुस्तकें भी छपवाने लगे। उत्तम और उपयोगी पुस्तकों के साथ अश्लील और गन्दी-गन्दी पुस्तकों का भी प्रकाशन शुरू हो गया जिनसे समाज की बड़ी क्षति हो रही है। लोभ और स्वार्थ के चक्कर में पड़कर प्रकाशक लोगों ने अश्लील पुस्तकों का प्रचार इतना बढ़ा दिया कि हमारी युवक-मंडली उन पुस्तकों को पढ़कर नाना प्रकार के कुटेवों में पड़ जीवन को नष्ट करने लगी। मुद्रण-यन्त्र के आविष्कार से एक हानि यह भी हुई है कि सुन्दर अक्षर लिखने की कला लोग भूल गये। इस यन्त्र के नहीं रहने पर हमारे देश में लोग बना बनाकर बहुत ही सुन्दर अक्षर लिखा करते थे जिनके रूप में सैकड़ों वर्ष के बाद भी परिवर्तन नहीं होता था पर आज उस तरह से लिखने की उतनी आवश्यकता न रहने के कारण हमारे लेखक उस कला को भूल बैठे।

—शशिधर

अभ्यास

१ निम्न लिखित विषयों पर निबंध लिखो।

(१) रेलवे (Railway system)। (२) समाचार-पत्र, (News-paper)। (३) पटना विश्व-विद्यालय (Patna University)। (४) भारत में डाकखाने (Postal system in India)।

सप्तम परिच्छेद

विवादात्मक लेख

(Argumentative essays)

(१) उपन्यास पढ़ना चाहिये या नहीं

भूमिका—प्रायः देखा जाता है कि आज कल लोगों में उपन्यास पढ़ने की विशेष रुचि रहती है। प्रायः सभी भाषाओं में अन्य विषयों की पुस्तकों की अपेक्षा उपन्यास ही अधिक प्रकाशित होते हैं। पुस्तक विक्रेताओं की दूकानों में उपन्यासों की ही संख्या अधिक दृष्टिगोचर होती है। सारांश यह है कि अन्य विषयों की पुस्तकों की अपेक्षा उपन्यास की माँग अधिक रहती है। परन्तु उपन्यास पढ़ना चाहिये या नहीं इस विषय में दो मत हैं। एक मत के समर्थकों का कहना है कि उपन्यास पढ़ना उचित नहीं है और दूसरे मत के समर्थकों का कहना है कि उपन्यास पढ़ना बहुत आवश्यक है। यहाँ पर दोनों पक्षवालों के मत दिये जाते हैं। दोनों की तुलना कर एक मत स्थिर कर लेना उचित है।

अनुकूल मत—(१) सिद्धान्त वाक्य कह देने से लोगों पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देने से ही लोगों पर उस सिद्धान्त का विशेष असर पड़ता है और

सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देने का सरल मार्ग उपन्यास है उपन्यास-लेखक किसी आदर्श को लेकर उसे कथा के द्वारा प्रतिपादित कर मधुर और प्रभावशाली भाषा में उपन्यास रचते हैं। इसलिए उपन्यास किसी सिद्धान्त का दृष्टान्त रूप है जिसका प्रभाव लोगों के हृदय पर जम जाता है। (२) अन्य विषयों की पुस्तकों की अपेक्षा उपन्यास अधिक मनोरंजक और आनन्दप्रद होता है। कोई-कोई उपन्यास तो ऐसा है कि एक बार प्रारम्भ कर देने से फिर उसे समाप्त किये बिना छोड़ने का जी नहीं चाहता। अतएव चिन्ता दुःख और शोक के समय उपन्यास मन बहलाने का अच्छा साधन है। (३) वैज्ञानिक विषय इतना गम्भीर विषय है कि साधारण पढ़े लिखे पाठक उसे समझ नहीं सकते पर अगर उसी विषय का सरल भाषा में उपन्यास लिखा जाता है तो लोग उसे बड़े चाव से पढ़ते हैं और समझ लेते हैं। जूल्स वर्न (Julius Verne) ने इस ढंग के कई उपन्यास लिखे हैं। (४) विज्ञान की नाई इतिहास के गम्भीर विषय भी उपन्यास के द्वारा भलीभाँति समझ में आ जाते हैं। बा० बंकिम चन्द्र का 'राजसिंह' पढ़ने से बहुत ऐतिहासिक ज्ञान प्राप्त हो सकता है। 'अभागे का भाग्य' (Les Miserables) पढ़ने से फ्रान्स की राज्यक्रान्ति के बाद फ्रान्स की दशा का ज्ञान हो जाता है। (५) अधिकांश लेखक समाज का जीता जागता चित्र खींचते हुए उपन्यास लिखते हैं। साधारण लोग समाज के सूक्ष्म भेद को समझ नहीं सकते। सामाजिक कुपरिणामों को देखते रहने पर भी मनुष्य पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता परन्तु निपुण उपन्यासकारों की बलवती लेखनी द्वारा रचित सामाजिक

उपन्यास से लोगों के हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। महात्मा टालस्टाय की कहानियों और उपन्यासों से रूस में हलचल मच गयी थी। प्रेमचन्द्र का 'सेवा-सदन' समाज का जीता जागता चित्र है। (६) साधारण पाठक भूगोल पढ़ने की इच्छा नहीं रखते परन्तु भौगोलिक उपन्यास को चाव से पढ़ते हैं। अतः भौगोलिक उपन्यास से भूगोल सम्बंधी बहुत बातें वे अनायास ही जान जाते हैं। 'राविन्सन क्रूसो' 'आदर्श हिन्दू' आदि के पढ़ने से बहुत सी भौगोलिक बातें मालूम हो जाती हैं। (७) विद्यार्थी गण बराबर एक ही विषय की पुस्तक पढ़ते-पढ़ते उकता जाते हैं और उनका मस्तिष्क विश्राम ढूँढ़ता है। उपन्यास मस्तिष्क को विश्राम देने का अच्छा साधन है। (८) उपन्यास साहित्य का एक अंग है। रचना सम्बंधी बातों को जानने के लिए भी उपन्यास पढ़ना आवश्यक है। उपन्यास पढ़ने से मुहाविरेदार भाषा का लिखना सीख सकते हैं। नये-नये शब्दों का व्यवहार जाना जा सकता है।

प्रतिकूल मत—(१) उपन्यास पढ़ना एक प्रकार का मादक द्रव्य सेवन करने के तुल्य है। एक बार उपन्यास हाथ में लेने से फिर उसे छोड़ने को मन नहीं करता। खाना, पीना, सोना सभी हराम हो जाता है जिससे स्वास्थ्य बिगड़ने का डर रहता है। (२) उपन्यास पढ़ने की जिसको आदत हो जाती है उसका दूसरे विषय की पुस्तक पढ़ने में दिल नहीं लगता। यही क्यों काम करने में भी जी नहीं लगता। जो छात्र उपन्यास पढ़ने के आदी हो जाते हैं उनका समय केवल उपन्यास पढ़ने में ही बीतता है। (३) उपन्यास पढ़ते रहने से मस्तिष्क-शक्ति उर्वरा नहीं होने पाती। जो उपन्यास पढ़ने के

आदी हैं वे गम्भीर विषय का मनन नहीं कर सकते। उसकी मानसिक शक्ति क्षीण हो जाती है। (४) उपन्यास लेखक प्रायः काल्पनिक आदर्श की सृष्टि करते हैं। कभी-कभी वह आदर्श वास्तविक जीवन से भिन्न रहता है। कल्पना जगत की बात को जानकर कौन सा लाभ उठाया जा सकता है? (५) जिसे उपन्यास पढ़ने की चाट हो जाती है वह भले बुरे उपन्यास का विचार नहीं करता। किसी भी ढंग का उपन्यास क्यों न हो, अश्लील भी क्यों न हो वह पढ़कर ही छोड़ता है। ऐसा करने से उसके भविष्य जीवन पर बड़ा बुरा असर पैदा होता है। (६) उपन्यास के पात्र भी प्रायः काल्पनिक ही रहते हैं। काल्पनिक पात्र का चरित्र पढ़ने से लोगों के हृदय पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा यह आशा करना दुराशा मात्र है। (७) किसी-किसी का कहना है कि उपन्यास मानसिक विश्राम का साधन है। यह सत्य नहीं है। क्योंकि मानसिक विश्राम देने के अभिप्राय से उपन्यास पढ़ने पर उसके पढ़ने की चाट हो जाती है। चाट बढ़ते-बढ़ते इस सीमा तक बढ़ जाती है कि समय का बड़ा ही दुरुपयोग होने लगता है और उपर्युक्त हानियों के होने की सम्भावना होने लगती है। (८) उपन्यास पढ़ने से भाषा सम्बंधी ज्ञान होता है यह भी सन्देहपूर्ण है। चूँकि उपन्यास पढ़ने के समय अधिकांश पाठक इस प्रकार बेसुध हो जाते हैं कि भाषा पर दृष्टि रखना कठिन हो जाता है। उपन्यास में प्रतिपादित विषय के परिणाम को जानने के लिए पाठक इतने अधीर हो उठते हैं कि शीघ्रता से उसे समाप्त करने की धुन में लगे रहते हैं। भाषा की ओर जरा भी ध्यान नहीं देते। फिर एक उपन्यास को दुबारा पढ़ने की होती ही नहीं।

उपर्युक्त दोनों पक्षवालों की युक्तियों पर विचार करने से यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अच्छे-अच्छे उपन्यासों को पढ़ना तो चाहिये मगर उपन्यास पढ़ने की चाट नहीं लगाना चाहिये। विद्यार्थियों को जहाँ तक सम्भव हो उपन्यास पढ़ने से बचते ही रहना चाहिये। उपन्यास तो उस श्रेणी के पाठकों को पढ़ना चाहिये जो गाँव में व्यर्थ का बैठकर गप्प लड़ाया करते हैं।

अभ्यास

(क) निम्न लिखित विषयों पर लेख लिखो।
Write short essays on :
(१) विधवा विवाह होना चाहिये या नहीं।
(२) हिन्दू समुद्रयात्रा कर सकता है या नहीं।
(३) युद्ध न्याय-संगत है या नहीं।



सरस्वती-पुस्तक-माला

॥) प्रवेश-शुल्क देकर स्थायी ग्राहक बनने से उक्त ग्रन्थ-माला की प्रत्येक पुस्तक पौने मूल्य में अर्थात् एक रुपये की पुस्तक बारह आने में दी जायगी। इस पुस्तक-माला में ये ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं :—

१—रोहिणी

यह एक सामाजिक शिक्षाप्रद उपन्यास है। पुस्तक स्त्री-पुरुष को समान शिक्षा देनेवाली है। स्त्रियों में पातिव्रत धर्म्म की शिक्षा देना इस पुस्तक का प्रधान लक्ष्य है मूल्य ।≡)

२—माता के उपदेश

यह एक स्त्रियोपयोगी पुस्तक है। लेखक पं० चन्द्रशेखरशास्त्री हैं। इसमें सात उपदेश या अध्याय हैं। उनमें एक कल्पित माता ने बातचीत के द्वारा मातृकर्त्तव्य, जीवन की महत्ता, ऋषि बनने की आवश्यकता आदि पर कन्याओं को सदुपदेश दिया है। मूल्य ।-)

३—संसार-सुख-साधन

लेखक श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद अग्निहोत्री। इस पुस्तक में पारिवारिक, सामाजिक और धार्मिक सुख जिनका सम्बन्ध संसार से है जिनके लिए मनुष्य व्याकुल हो किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है, उनमें बचने के उपाय तथा यथार्थ शांति किस प्रकार प्राप्त हो सकती है, इसकी विवेचना बड़े अच्छे ढंग से की गयी है। मूल्य ।≡)

४—मोहिनी

यह एक पवित्र और शिक्षाप्रद सामाजिक उपन्यास है। इसमें एक स्त्री के गुण, स्वभाव, सच्चरित्रता और पातिव्रत का दृश्य भलीभाँति खींचा गया है। पुस्तक पढ़ने योग्य है। मूल्य ॥)

५—सदाचार-सोपान

इस पुस्तक में सदाचार और शिक्षा-सम्बन्धी सभी बातें बड़ी ही खूबी से लिखी गई हैं। पारितोषिक के लिये उपयुक्त पुस्तक है। मूल्य ।=)

६—कृषि-सार

इसमें कृषि-कार्य्य की उन्नति और अवनति का विचार बहुत अच्छी तरह किया है। कृषि-सम्बन्धी बातें विस्तारपूर्वक लिखी गई हैं। यह पुस्तक प्रत्येक खेतिहर और बाग़वान के काम की है। मूल्य १)

७—विराज-बहू

यह बंग-साहित्य के प्रसिद्ध समाज-हितैषी लेखक श्रीयुत शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय की 'विराज बाउ' पुस्तक का अविकल अनुवाद है। मूल्य ॥)

८—चाणक्य और चन्द्रगुप्त

यह उपन्यास मराठी के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार हरिनारायण आपटे के ग्रन्थ का अनुवाद है। अनुवादक हैं पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी। इसमें ग्रीक, बौद्ध और संस्कृत-ग्रन्थकारों के ऐतिहासिक आधार को लेकर नंद-राज्य का विध्वंस और चन्द्रगुप्त मौर्य के राज्य का संस्थापन दिखलाया है। चाणक्य के राजनीतिक दाँव-पेच, चन्द्रगुप्त के समय में भारतवर्ष की दशा, मगध-साम्राज्य के वैभव आदि का वर्णन बड़ा ही सरस और सुन्दर है। पुस्तक एक बार हाथ में लेकर छोड़ने का जी नहीं चाहता। पृष्ठ ५३६; मूल्य २॥) व सजिल्द ३)

९—हिन्दी-गद्य-रत्नावली

गद्य-निबन्धों का अनुपम संग्रह। गद्य ही कवियों की कसौटी है। इस ग्रन्थ में सुलेखकों के उत्तम उत्तम लेखों का संग्रह है। संग्रहकर्त्ता भी

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक वियोगी हरि हैं। पुस्तक के अन्त में क्लिष्ट शब्दों का कोश एवं लेखकों का संक्षिप्त परिचय भी जोड़ दिया गया है। विद्यार्थी-वर्ग के बड़े काम की चीज़ है। पृष्ठ संख्या १९२। मूल्य केवल ॥|≡)

१०—हिन्दी-पद्य-रत्नावली

पद्य-भागों का अनुपम संग्रह। इस पुस्तक में केवल ऐसी कविताओं को स्थान दिया गया है, जिनमें भगवद्भक्ति, विशुद्ध प्रेम, वीर भाव, प्रकृतिसौन्दर्य और नीति-नैपुण्य का चित्रांकण देखने में आया है। आरम्भ में भूमिका व अन्त में क्लिष्ट शब्दों का कोष एवं लेखकों का संक्षिप्त परिचय भी जोड़ दिया गया है। मूल्य ॥|≡)

११—साहित्य-रत्न-मंजूषा

गद्य-पद्य-साहित्य का अनुपम संग्रह। हिन्दी भाषा और साहित्य की योग्यता के साथ सदाचार और नीति की शिक्षा का भी ध्यान रक्खा गया है। पुस्तक के अन्त में क्लिष्ट शब्दों का अर्थ भी दे दिया गया है। मूल्य ॥≡)

१२—श्रीमद्भगवद्गीता

सटीक—वेद और उपनिषदों का सार है। इसलिए प्रत्येक हिन्दू को पाठ करना चाहिये। मूल्य ।-)

१३—श्री सुन्दरकांड रामायण

सटीक—तुलसीदासजी के रामायण का संसार में महत्त्व है ही, उसमें भी सुन्दरकांड का पाठ धार्मिक शिक्षा व ज्ञान-वृद्धि के लिए अति श्रेष्ठ है। मूल्य ।≡)

१४—तुलसीदास की दोहावली

सटीक व सुन्दर संस्करण। इसमें कठिन-कठिन शब्दों की टिप्पणी भी

है—श्रीतुलसीदासजी की दोहावली में नीति, धर्म्म आदि विषयों प
गंभीर विचार दिया गया है—बालक, स्त्री व युवा सब के पढ़ने योग्य है
कहीं कहीं अलंकारों का दिग्दर्शन भी करा दिया गया है। मूल्य ॥।≈)

१५—श्री रहिमन-सुधा

सटिप्पण—रहीम ख़ानख़ाना बादशाह अकबर के वज़ीर थे। ये हिन्द
के अच्छे कवि भी थे। पुस्तक के आरम्भ में उनका जीवनचरित्र ख़ु
विस्तारपूर्वक लिखा गया है। इस पुस्तक में केवल ऐसी कविताओं क
संग्रह किया गया है जिसमें भगवद्भक्ति विशुद्ध प्रेम, वीर भाव, प्रकृति
सौन्दर्य और नीतिनैपुण्य है। कठिन-कठिन शब्दों का अर्थ भी दे दिय
गया है। मूल्य ॥)

१६—श्री तुलसीदास की गीतावली

सटिप्पण—इस पुस्तक के आरम्भ में तुलसीदासजी के जीवनच
पर समालोचनात्मक दृष्टि से विचार किया गया है। इसके पश्चात् गी
वली में क्या क्या विषय है इस पर विस्तारपूर्वक लिखा गया है।
शुद्ध है व कठिन कठिन शब्दों के अर्थ भी दे दिये गये हैं। अलंकार
राग आदि पर भी विचार किया है। मूल्य १)

१७—रचना-मयङ्क

रचना सम्बन्धी ज्ञान के लिए यह पुस्तक अत्युत्तम है—हिन्दी भा
की उत्पत्ति व विकास, शब्दविचार, वाक्यविचार, पत्रलेखनविधि, निबं
लेखन आदि पर गवेषणा-पूर्ण लेख लिखे गये हैं। मूल्य १)